वीक्तर तेल्पुगोव

लेनिन के बारे में कहानियां

रादुगा प्रकाशन · मास्को

वीक्तर तेल्पुगोव

लेनिन के बारे में कहानियां

अनुवादक : सुधीर कुमार माथुर
चित्रकार : व० अलेक्सेयेव

В. Тельпугов

РАССКАЗЫ О ЛЕНИНЕ

На языке хинди

Telpugov V.

STORIES ABOUT LENIN

In Hindi

© हिंदी अनुवाद • रादुगा प्रकाशन • 1989

सोवियत संघ में प्रकाशित

ISBN 5-05-002403-x

अनुक्रम

वे दिन, वे रातें और वे प्रभात...

लेनिन से मिले और उनके माथ काम कर चुके लोगों की संख्या दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही थी। काल शनैः शनैः अपना कार्य कर रहा था। फिर भी मैं उनमें से कुछ लोगों से मिलने में सफल हो गया। एक वृद्ध—इतिहास का जीवित प्रत्यक्षदर्शी—मुझे विशेष रूप से याद है। लेनिन से सम्बन्धित घटनाओं में मे अधिकतर हालांकि मुझे अरसे से बहुत अच्छी तरह मालूम थीं, फिर भी उन महान घटनाओं के बारे में उनके प्रत्यक्ष सहभागी के मुंह से सुनना मेरे लिए अत्यन्त आवश्यक था। और वह व्यक्ति यह अनुभव करके पूर्ण एकाग्रचित्तता के साथ बोल रहा था,

यह प्रयास कर रहा था कि कोई भी महत्त्वपूर्ण बात न छूट जाये। घटना-चक्र धीरे-धीरे घूमता हुआ मास्को से पेत्रोग्राद * और फिर उससे भी आगे सीमा-पार पहुंच जाता था, पर फिर अचानक मास्को लौट आता था।

मुझे खेद है कि जो कुछ मुझे बताया गया, उसे लेखनीबद्ध करने का निश्चय मैंने हाल ही में किया। निस्सन्देह उसमें से काफ़ी कुछ भूल चुका हूं, पर अधिकतर मुझे शब्दश: याद है।

शुरूआत उस घटना से कर रहा हूं कि उस वृद्ध ने एक बार लेनिन का फ़ोटो कैसे खींचा था।

...यह उस समय की बात है, जब सन् 1917 की गर्मियों में पेत्रोग्राद में रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी (बोल्शेविक) की छठी कांग्रेस हो रही थी। उन दिनों लेनिन जासूसों की नज़र से दूर रहने के लिए शिरोकया स्ट्रीट स्थित अपने आवास को छोड़कर भूमिगत हो गये थे। अन्तरिम सरकार के अत्याचारों का दौर ज़ोरों पर था। तलाशियों, गिरफ़्तारियों और हत्याओं का न ओर नज़र आ रहा था, न छोर। लेनिन के ऊपर भी ख़तरा मंडरा रहा था। पार्टी के उनके साथी उनके जीवन के बारे में चिन्तित थे। वे लोग चैन की सांस तभी ले सके, जब उन्हें मालूम पड़ा कि लेनिन एक विश्वसनीय स्थान में सुरक्षित हैं।

---

* पेत्रोग्राद — आधुनिक लेनिनग्राद (सन् 1914 तक पीटर्सबर्ग कहलाता था)।

"मुझे बेशक बिलकुल भी ख़बर न थी कि व्लादीमिर इल्यीच कहां रह रहे हैं," वृद्ध ने मुझे बताया। "लेकिन एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ के लिए लेनिन का फ़ोटो खींचने की ज़िम्मेदारी मुझे सौंपी गयी। उन लोगों ने मुझ से कहा कि आप ख़ुद भी इस बात का ज़िक्र कर चुके हैं कि आपको इन बातों की थोड़ी बहुत समझ है।"

उसी शाम, कांग्रेस की अगली बैठक आरम्भ होने से पहले शौक़िया फ़ोटोग्राफ़र अपना कैमरा लाने घर गया। उसमें फ़िल्म डालकर वह कोई एक-डेढ़ घंटे में नोवया देरेव्न्या स्टेशन पर पहुंच गया, जहां उसके साथ जानेवाला एक व्यक्ति टिकट लिये ट्रेन के पास ही उसकी बाट जोह रहा था।

"हम सिस्त्रोरेत्स्क की ओर रवाना हो गये," वृद्ध ने आगे बताया। "सारे रास्ते हम चुपचाप यह नाटक करते रहे कि एक दूसरे को नहीं जानते हैं। मैं समाचार-पत्र पढ़ता हुआ उसकी आड़ में से अपने सहयात्री की ओर बराबर देखता रहा। हम एक छोटे-से स्टेशन पर उतर गये।" वृद्ध मुस्करा उठे: "अब तो उस छोटे-से स्टेशन* को सारी दुनिया जानती है! हम वाटर-टॉवर के पास से निकलकर अंधेरे में आवश्यक मकान को ढूंढ़ते हुए ढलवां पगडंडी से नीचे उतरते गये।" यह कहकर वृद्ध ने ज़ोर दिया: "वह छोटा-सा मकान भी अब विख्यात हो चुका है! मकान मिलने पर हमने बंद

---

* यह वही रज़लीव नामक छोटा-सा स्टेशन है, जिसके पास व्ला० इ० लेनिन सन् 1917 की गर्मियों में छिपकर रहते थे।

खिड़की का कपाट खटखटाया। कोई जवाब नहीं मिला। हमने और ज़ोर से खटखटाया। आख़िरकार दरवाज़ा चरमराता हुआ खुला। एक लंब-तड़ंग और आवाज़ से नौजवान लगनेवाला आदमी बाहर निकला। हम तीनों आगे चल दिये। बादलों से चांद के बाहर झांकने के बाद ही मैं देख पाया कि नौजवान बग़ल में चप्पू दबाये हुए है। कुछ समय बाद जिस नाव के पास हम पहुंचे, वह बहुत ही छोटी और उथली निकली और उसमें हम तीनों किसी तरह बैठ ही न पा रहे थे। बहस छिड़ गयी कि कौन नाव में जाये और कौन किनारे पर ही रुका रहे। मेरे रुकने का तो बेशक सवाल ही नहीं उठता था, क्योंकि मेरे पास कैमरा था। मेरे साथ जो आदमी आया था, उसने कहा कि उसे एक विशेष कार्य सौंपा गया है, जिसे और कोई नहीं कर सकता। बस फिर शुरू हो गयी हुज्जत।"

"पर नाववाले ने क्या किया?" मैंने अपने सम्भाषी की बात काट दी। "वह शायद अपना रोब जमाने लगा होगा, क्यों?"

"और नहीं तो क्या!" वृद्ध कह उठे। "बोला, मेरे बिना कोई नहीं जा सकता।"

"आख़िर क्या रास्ता निकाला आप लोगों ने?" मैंने फिर टोक दिया। "किनारे पर कौन रुका?"

"कोई नहीं!" वृद्ध ने खांसकर मेरी ओर आश्चर्य के साथ देखा: यानी क्या इतनी सीधी-सी बात भी नहीं समझते? "हम किसी तरह नाव में बैठ ही गये। वैसे यह सच है कि सारे रास्ते कभी एक तरफ़ से पानी भरता रहा, तो कभी दूसरी तरफ़ से। और सफ़र काफ़ी लम्बा

तय करना पड़ा। मुझे याद है कि मैं बस यही सोचता रहा था कि आख़िर कब ठिकाने पर पहुंचेंगे। रात शान्त और शायद गरम थी, लेकिन मुझे रास्ते भर कंपकंपी छूटती रही। मैं बुरी तरह भीग चुका था और घबरा रहा था कि मुझे सौंपा गया काम मैं ढंग से कर भी पाऊंगा या नहीं! मार्गदर्शक को भी कंपकंपी छूटती रही। वह बस 'जल्दी करो! तेज़ चलाओ!' की ही रट लगाये रहा। लेकिन नाववाला नहीं ठिठुरा। वह अकेला ही चप्पू चलाता रहा और उन्हें किसी और को संभालने को तैयार नहीं हुआ। फिर भी हम अंधेरा रहते पहुंच गये। मालूम पड़ा, वहां हमारा काफ़ी पहले से इंतज़ार हो रहा था। जिन लोगों ने नाव किनारे लगाने में मदद की, उन्हें मैं नहीं जानता था। पर यह काम उन्होंने इतनी फुर्ती से और मिल-जुलकर किया, मानो रातों को नावें किनारे लगाने का काम ही करते रहे हों..."

वृद्ध विचारमग्न हो गये। उन्होंने एक सिगरेट सुलगा ली, पर आगे का क़िस्सा केवल तभी शुरू किया, जब कि सिगरेट ऐन सिगरेट-होल्डर तक न पी ली।

"हां, तो इस तरह हम वहां पहुंच गये। नाव को बांधकर हम कटी हुई घास पर चल दिये। घास ओस से भीगी हुई थी, पैरों में लिपटी रही थी, चलना मुश्किल हो रहा था। पर मैं ख़ुश था। ऐसी ओस पौ फटने से पहले ही होती है। यानी थोड़ी देर में ही फ़ोटो लेने लायक़ रोशनी हो जायेगी। 'पर लेनिन कहां हैं?' मैं सोच रहा था। 'उन्हें जल्दी से ढूंढ़कर सारी बात तय कर लेनी चाहिए।' फिर भी मैंने किसी से कुछ नहीं पूछा। आख़िर

मैं वहां कोई मुखिया तो था नहीं। मैंने फ़ैसला किया कि देखें आगे क्या होता है। चलना काफ़ी दूर पड़ा। हम बुरी तरह से ठिठुरे एक मढ़ैया तक पहुंचे।"

वृद्ध के होंठों पर फिर मुस्कान खेल गयी:

"अब तो सारी दुनिया जानती है उस मढ़ैया को! बदन गरमाने के लिए किसी तरह रेंगकर उसमें घुस गये। वहां हमें लेने आये लोगों के बीच मैंने व्लादीमिर इल्यीच को पहचान लिया। उनकी आवाज़ ने उनका राज़ खोल दिया। इसके अलावा उनके शान्त व मज़ाक़िया लहजे ने भी। उन्होंने सबसे पहले क्षमा-याचना की: 'आप हमें कृपया क्षमा कीजिये कि हम यहां सोफ़े नहीं लगा पाये और झाड़-फ़ानूस नहीं लटका पाये।' इसके बाद उन्होंने पेत्रोग्राद के हालात के और कांग्रेस के कार्य के बारे में विस्तार में पूछताछ की। हमसे मिली ख़बरों से वे सन्तुष्ट हो गये। लेकिन जब उन्हें लूनाचार्स्की* की गिरफ़्तारी का पता चला, तो वे उदास हो गये। काफ़ी देर मौन रहने के बाद वे बोले: 'यह पुराने रूस के मरने की ऐंठन है। प्रभात अब दूर नहीं है!' कुछ क्षण बाद फिर बोले: 'पर यहां तो सचमुच पौ फटने जा रही है, साथियो, देखिये!' इन शब्दों के साथ ही हम उनके पीछे-पीछे मढ़ैया से निकल आये और हमें सूर्योदय की पहली चमक दिखाई दे गयी।"

"तो क्या आपने लेनिन का फ़ोटो सूर्योदय की लाली

---

* लूनाचार्स्की अनातोली वसील्येविच (1875—1933)—अक्तूबर क्रान्ति के बाद शिक्षा जन-कमिस्सार।

में ही खींच लिया?" मैंने वृद्ध से पूछा। "कितना प्रतीकात्मक है!"

मेरा प्रश्न, जैसा कि मैंने बाद में समझ लिया, बहुत ही बचकाना था। उससे पता चलता था कि फ़ोटोग्राफ़ी के बारे में मेरी जानकारी कितनी कम है। लेकिन मेरा सम्भाषी मुझ पर हंसा नहीं, बस उसने यह स्पष्ट कर दिया कि आवश्यक प्रकाश के लिए उन्हें कम-से-कम एक घंटा और इंतज़ार करना पड़ा।

"सारे समय," वृद्ध ने अपनी बात जारी रखी, "व्लादीमिर इल्यीच पूर्व की ओर देखते हुए कहते रहे: 'कितना अद्भुत सूर्योदय होता है यहां! सूर्योदय बेशक हमेशा और सब जगह सुन्दर होता है। जितना अपने जीवन में मैं सूर्योदय को मुग्ध होकर देखता रहा हूं, उतना और किसी चीज़ को नहीं। साइबेरिया में भी, आल्प्स में भी, तात्रा में भी और वोल्गा पर भी... पर यहां पेत्रोग्राद के अंचल में तो यह बहुत ही मनमोहक होता है, सच मानिये! यह सूरज नहीं चमक रहा है, बल्कि लपटें लपलपा रही हैं! सचमुच की लपटें, जैसी कि इंजन की भट्ठी में!'"

"ये उन्हीं के शब्द थे?" मैंने पूछा।

"हां। जैसी कि इंजन की भट्ठी में! जी भरकर देख लेने के बाद वे मेरी ओर मुड़े। बोले: 'अच्छा, अब फ़ोटो खींच लीजिये।' और मैं जिस काम के लिए आया था, उसे करने में जुट गया। परिस्थितियां अत्यन्त प्रतिकूल थीं। मेरे पास रिफ़्लेक्स कैमरा था, जिसके शटर की न्यूनतम गति $^{1}/_{10}$ सेकंड थी। ट्राइपॉड नहीं था। **प्रकाश**

हालांकि तेज़ था, पर अभी अपर्याप्त था। और देर करना संभव नहीं था, वहां से जल्दी-से-जल्दी जाने की ज़रूरत थी ताकि कोई पराया न देख ले। आप अगर मुझ से यह पूछें कि ऐसी परिस्थितियों में मैंने फ़ोटो आख़िर कैसे खींचा, तो मैं यही जवाब दूंगा कि नहीं जानता, मुझे कुछ याद नहीं। बस मुझे इतना याद है कि व्लादीमिर इल्यीच मेरी घबराहट देखकर बराबर मुझे तसल्ली देते रहे थे और मेरा हौसला बढ़ाते रहे थे: 'सब ठीक हो जायेगा, आप विश्वास रखिये। स्पीड आपने $^1/_{10}$ सेकंड की कही है ना? यह ख़राब है या अच्छी?' 'इस रोशनी के लिए ख़राब है, व्लादीमिर इल्यीच। एक्सपोज़र बहुत कम है।' पर वे बोले: 'इस वक़्त हमारे लिए घंटों की ही नहीं, बल्कि मिनटों और सेकंडों की भी ख़ास क़ीमत है। अच्छा, यह लीजिये, कृपया, पेत्रोग्राद में साथियों को दे दीजिये, जितना जल्दी हो सके, उतना अच्छा।' और मेरे हाथों में एक छोटा-सा, सफ़ाई से बंधा बंडल आ गया। 'इसमें "प्राव्दा" के लिए एक लेख है,' व्लादीमिर इल्यीच ने स्पष्ट किया। 'हवा से बातें करते पहुंचा दीजिये, तो अच्छा हो!' उनके इस मज़ाक़ से मैं बरबस शान्त हो गया। और हम वापस रवाना हो गये। उसी नाव में। फिर तीनों साथ। फिर नाव में कभी एक तरफ़ से पानी भरता, तो कभी दूसरी तरफ़ से। सारे रास्ते डरते रहे कि कहीं देर न हो जाये।"

मैं कह नहीं सकता कि उस समय वृद्ध वास्तव में शान्त हो भी पाये थे या नहीं, पर आज वे घबरा रहे थे, हालांकि चेहरे से ज़ाहिर नहीं होने दे रहे थे—उनकी आयु

में आदमी के लिए अधिक भावविह्वल होना उचित नहीं था। लेकिन कुछ किया भी नहीं जा सकता था, क्योंकि वह व्यक्ति उन घटनाओं को दोबारा जी रहा था। सारे इतिहास का फिर से अनुभव कर रहा था। और अनचाहे मैं भी पूर्णत: उन दिनों की घटनाओं के वशीभूत हो चुका था। मुझे अचानक तीव्र इच्छा हो गयी कि हर हालत में फ़ोटो ठीक निकले और देर से न पहुंचे और लेनिन का लेख भी समय पर पेत्रोग्राद पहुंच जाये। मैंने प्रश्नों की झड़ी लगा दी:

"आप समय पर पहुंच गये? लेखवाला बंडल भीगा तो नहीं ना? और फ़ोटो का क्या हुआ? ठीक निकला या नहीं?"

पर उत्तर अनजाने ही अधिक संक्षिप्त होने लगे:

"लेख 'प्राव्दा' के अगले अंक में प्रकाशित हो गया। और फ़ोटो? वह हालांकि सच कहूं तो, बहुत अच्छा नहीं निकला, पर उसे अब सारा संसार जानता है। तुमने भी उसे देखा है। लेनिन उसमें छज्जेदार टोपी पहने हुए हैं, विग लगाये हुए हैं, बिना मूंछों के हैं, चेहरा बिलकुल बदला हुआ है। लेकिन उस समय दस्तावेज़ के लिए लेनिन को ऐसे ही फ़ोटो की ज़रूरत थी।"

वृद्ध चुप हो गये। उन्होंने दूसरी सिगरेट निकाली, पर सुलगायी नहीं, उसे हाथों में उलटा-पलटा और वापस पैकट में रखकर अचानक पूछ बैठे:

"और भी प्रश्न हैं? कहीं बुड्ढे ने अपनी बातों से नौजवान को उबा तो नहीं दिया है?"

मैं तुरन्त समझ गया कि यह आदमी थक चुका है, पर

मानने को तैयार नहीं है। उनके माथे, झुर्रियों से भरे गालों और सफ़ेद हुई कनपटियों पर पसीने की नन्ही-नन्ही बूंदें चमक उठीं।

मैंने कहा कि मैं उनकी बातें अभी घंटों सुन सकता हूं, कि मुझे हर बात में दिलचस्पी है, कि कैसे रेल से तब पहुंचे, शहर में सब ठीक-ठाक रहा या नहीं आदि, आदि। पर उन्होंने जो कुछ मुझे सुनाया है, उसके लिए भी मैं निस्सन्देह उनका कृतज्ञ हूं।

"रेल से कैसे पहुंचे?" वृद्ध को जैसे कुछ आश्चर्य हुआ। "रेल में सब ठीक रहा। हम यात्रियों में घुल-मिल गये, बस! ख़राब रहा नोवया देरेव्न्या स्टेशन पर। वहां जासूसों का दल हमारा इंतज़ार कर रहा था। बड़ी मुश्किल से बचकर निकल पाये। तुम्हें फिर कभी बताऊंगा कि हम उन लोगों से आगे कैसे निकले और उन्हें कैसे चकमा दिया। लेकिन उनको चकमा देकर हम आगे निकल गये थे, यह एक तथ्य है। इतने साल बीत चुके हैं, पर मैं आज तक समझ नहीं पाया हूं कि तब हमें कौन-सी शक्ति ने प्रेरित किया था, कैसे पंखों के बल हम उड़ निकले थे!"

कुछ दिनों बाद ही वृद्ध और मैं दोनों ही फिर साथ मास्को में उनके छोटे-से और नीची छतवाले कमरे में बैठे थे, जो उसी मढ़ैया से कुछ-कुछ मिलता-जुलता था।

वृद्ध सुनाते रहे, मैं सुनता रहा, याद करता रहा।

और वे दिन, वे रातें और वे प्रभात मेरी आंखों के आगे अधिक स्पष्ट और सजीव होकर घूमने लगे।

मार्सेल्ज़ *

गिरफ़्तारियां, जेलें, निष्कासन ... लेनिन के दिन-प्रतिदिन के जीवन पर जब हम दृष्टिपात करते हैं, तो आश्चर्यचकित रह जाते हैं कि ज़ारशाही द्वारा उन पर अत्याचार किये जाने, उनका पीछा किये जाने के बावजूद कठिन से कठिन परिस्थितियों में वे क्रान्ति के लिए कितना कुछ करने में सफल रहे। साइबेरिया के शूशेंस्कोये ** क़सबे

* मार्सेल्ज़ — फ़्रांसीसी क्रान्तिकारी गीत।

** शूशेंस्कोये — क्रास्नोयार्स्क प्रदेश (साइबेरिया) का एक क़सबा।

में व्लादीमिर इल्यीच तीन वर्ष निर्वासन में रहे। पर कैसे बिताये थे उन्होंने ये वर्ष!

जिस किसान से उनका वहां परिचय हुआ, उसने शुरू में ही अत्यन्त दुखी स्वर में निष्कासित बंदी से कह दिया: "शूशेंस्कोये से ज़्यादा दुनिया से कटी जगह और कोई नहीं है। उसके बाद सायानी पहाड़ हैं और उन पहाड़ों के आगे दुनिया का छोर।" लेनिन ने उससे बहस नहीं की। उनकी यहां की यात्रा उनके जीवन की एक सबसे लम्बी यात्रा थी, लेकिन उनका ध्यान इस समय इस विचार पर केन्द्रित नहीं था। उन्होंने किसान की ओर ग़ौर से देखा और यह उत्तर दिया: "एक-न-एक दिन हम और आप मिलकर इस इलाक़े का कायापलट कर देंगे।"

किसान ने उदासी से सिर हिला दिया। लेनिन ने फिर कहा: "कायापलट कर देंगे, आप विश्वास रखिये। मेरा यही सपना है।"

और एक भी दिन व्यर्थ न जाने दिये बिना, मानो अपने सपने को शीघ्रातिशीघ्र साकार करना चाहते हों, वे तूफ़ानी गति से काम में जुट गये। क्या क्या काम करते नहीं देखा लोगों ने उन्हें तब! उन्होंने क्यारियां खोदीं, पेड़ रोपे, लकड़ियां काटीं और फाड़ीं, घास काटी, पैदल आस-पास के गांवों के चक्कर काटे, लोगों से मिले, हरेक की बात पूरी सुनी, हरेक की कुछ-न-कुछ सहायता करने की कोशिश की, हरेक को कुछ-न-कुछ सलाह दी... और रात-रात भर बैठकर लिखते रहे। तीन वर्ष के दौरान उन्होंने लगभग तीस लेख लिखे, जिनमें उनके सर्वाधिक प्रसिद्ध लेखों में से एक 'रूसी समाजवादी-जनवाद

के कार्यभार' भी शामिल है। उसकी पांडुलिपि को ग़ैरक़ानूनी ढंग से दुनिया के एक छोर से दूसरे छोर—स्विट्ज़रलैंड भेजा गया, वहां से वह रूसी भाषा में प्रकाशित होकर स्वाधीनता व सौभाग्य के लिए संघर्ष का आह्वान करनेवाली पुस्तिका के रूप में वापस रूस लौट आयी।

शुरू से एक ही बात रही। लेनिन पर कैसे भी अत्याचार क्यों न किये गये, उनसे वे केवल नित नये संघर्षों के लिए और ज़्यादा पुख़्ता होते गये। व्लादीमिर इल्यीच उल्यानोव को पहली बार उस समय गिरफ़्तार किया गया था, जब वे कज़ान विश्वविद्यालय के विद्यार्थी थे। तब वे मुश्किल से सत्तरह वर्ष के हुए थे, पर अपनी उम्र से छोटे लगते थे।

समय बहुत कठिन था। रूस के भिन्न-भिन्न स्थानों से जन-उपद्रवों और अवज्ञाकारियों के दमन के भयावह समाचार आ रहे थे। कुछ ही समय पूर्व ज़ार की हत्या के प्रयास में भाग लेने के लिए उल्यानोव के बड़े भाई अलेक्सांद्र* को फांसी पर लटका दिया गया था।

ज़ारशाही सरकार क्रान्तिकारी आन्दोलन को कुचलने के बेतहाशा प्रयास कर रही थी। अक्सर विश्वविद्यालयों के परिसरों से गड़बड़ शुरू होती, जहां अधिकतम जागरूक युवा जनता के अधिकारों की रक्षा में आवाज़ बुलंद करते।

ज़ार के चाकरों ने विद्यार्थियों को भयभीत करने

---

* उल्यानोव अलेक्सांद्र इल्यीच (1866—1887)—रूस में क्रान्तिकारी आन्दोलन के सेनानी।

के लिए क्या क्या न किया! विश्वविद्यालय की एक विशेष नियमावली जारी की गयी, जिसमें "निषिद्ध है", "मनाही है", "यह पूर्णत: वर्जित है", "वह पूर्णत: निषिद्ध है" जैसे शब्दों की ही भरमार थी। और निस्सन्देह हर प्रकार की बैठकें, सभाएं, हर प्रकार के संघ, परिषदें और समाज पूर्णत: अवैध घोषित कर दिये गये थे। कहने की आवश्यकता नहीं कि सभी पुस्तकालयों से, सर्वप्रथम विश्वविद्यालयों के पुस्तकालयों से शीघ्रातिशीघ्र हर प्रकार का ऐसा साहित्य हटा दिया गया, जो उनके मतानुसार राजद्रोह के बीज बो सकता था।

इससे युवाओं में केवल रोष और अधिक बढ़ गया। लगातार सताये जाने और धमकियों के बावजूद विद्यार्थी मीटिंगों और प्रदर्शनों का आयोजन करते रहे। पीटर्सबर्ग में कज़ांस्की कैथीड्रल के सामनेवाले चौक में आयोजित एक ऐसे ही प्रदर्शन को निर्ममता से कुचल दिया गया, पर इससे कुछ नहीं बदला। ज़ारशाही विरोधी शक्तियां दिन-प्रतिदिन बढ़ती जाती थीं।

सारे देश में यह ख़बर फैल गयी कि "क्रेस्ती" * में एक छात्रा ने ज़ारशाही पुलिस द्वारा अपमानित किये जाने के बाद आत्महत्या कर ली है। विरोध की एक नयी लहर उमड़ पड़ी। गुप्त पुलिस एजेंट नेताओं की तलाश में कारख़ानों, शिक्षा संस्थाओं में छानबीन करने लगे, बाकी लोगों को डराने-धमकाने लगे।

अफ़वाहें फैलने लगीं कि "राजद्रोही तत्त्वों" की

---

* पीटर्सबर्ग की एक जेल।

सूचियां बहुत पहले से तैयार की जा चुकी हैं, कि किसी भी क्षण बड़े पैमाने पर अत्याचार शुरू होनेवाले हैं। इन अफ़वाहों की शीघ्र ही पुष्टि होने लगी।

चार और पांच दिसम्बर, 1887 की रात को कज़ान विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के एक दल को गिरफ़्तार कर लिया गया। उनमें व्लादीमिर उल्यानोव भी शामिल थे। पुलिस की सूची में उनका नाम शुरू ही में था। "मीटिंग में भाग लेने के लिए!" पुलिसमैन ने उन्हें गिरफ़्तार करते समय रुखाई से कहा था। मीटिंग वास्तव में हुई थी, उसमें भाग लेनेवालों में से किसी ने इस तथ्य से इन्कार नहीं किया। जहां तक व्लादीमिर उल्यानोव का सम्बन्ध है, तो उन पर सिम्बीर्स्क* समाज का सदस्य होने का भी अर्थात नियमावली व क़ानून का दो बार उल्लंघन करने का आरोप लगाया गया।

इस प्रकार उल्यानोव और उनके विश्वविद्यालय के मित्र जेल में बंद कर दिये गये। शुरू में उन्हें कालकोठरियों में बंद रखा गया और उन्हें एक दूसरे की कोई ख़बर नहीं मिल पायी। फिर एक रात को सबको अचानक एक बड़ी कोठरी में लाकर बंद कर दिया गया, और युवकों का हौसला बढ़ गया।

"देखो, हम लोग कितने सारे हैं, भाइयो!" सुबह-सवेरे सूरज की पहली किरण के मोखे जैसी खिड़की में से होकर कोठरी में पहुंचते ही एक विद्यार्थी कह उठा।

---

* यह नगर लेनिन का जन्मस्थान है, जो अब उल्यानोव्स्क कहलाता है।

उनमें से कोई दबी आवाज़ में नाम ले-लेकर सबकी गिनती करने लगा।

"बेकार की मेहनत मत करो," सींखचों से सटकर खड़े उल्यानोव ने उसे बीच ही में रोक दिया, "मैं गिन चुका हूं। एक सौ दस हैं। हमारे मंत्री महोदय जो कहते हैं वही करते हैं।"

युवक आश्चर्यचकित रह गया:

"एक सौ दस हैं? तुमने ग़लती तो नहीं की?"

"चाहो, तो खुद गिनकर देख लो, लेकिन मैं दो बार गिनती कर चुका हूं," उल्यानोव ने जवाब दिया।

"लेकिन सारे विश्वविद्यालय में हमारी संख्या कुल मिलाकर आठ सौ है!" युवक मानने को तैयार नहीं हुआ। "शैतान ही जाने क्या है यह!"

उल्यानोव ने क्षण-भर के लिए खिड़की से हटकर बोलनेवाले युवक की ओर देखा।

"इस मामले में मैं तुमसे सहमत हूं: शैतान ही जानता है! लेकिन अकेला वही नहीं, इसका मुझे पूरा विश्वास है।"

युवक उनका मज़ाक़ न समझ पाया। यह भांपकर उल्यानोव ने अपना विचार स्पष्ट किया:

"जल्दी ही, बहुत ही जल्दी सिर्फ़ शैतान ही नहीं, रूस में सभी जान जायेंगे कि यहां हम कितने लोग हैं। और जब उन्हें मालूम पड़ जायेगा, तब मंत्री महोदयों की ख़ैर नहीं रहेगी। मुझे इसका विश्वास है, और तुम लोगों को है?" उन्होंने यह प्रश्न कोठरी में बंद सभी लोगों से पूछा।

"जिस बात के लिए मैं उल्यानोव को प्यार करता हूं,

वह है उसका आशावाद!" दूसरे कोने से एक आवाज़ आयी। "हम यहां भूखे बैठे हैं, ठिठुर रहे हैं, सारी दुनिया से कटे हुए हैं, पर इसका हौसला पस्त होने के बजाय..."

"तुम्हें भी हौसला पस्त न होने देने की सलाह देता हूं!" व्लादीमिर ने उसे रोक दिया। "देखो, इस मनहूस जगह से वोल्गा दिखाई नहीं देती है, ज़रा-सी भी नहीं। सिर्फ़ जेल के अहाते के धूसर पत्थर नज़र आते हैं। पर मैं इन ज़ंग लगे सींखचों से चिपटा खड़ा हूं और अलग नहीं हो पा रहा हूं। क्यों? क्योंकि मुझे वोल्गा का कलकल नाद सुनाई दे रहा है। कितनी पास है, बिलकुल पास है वोल्गा माता! और उसके ऊपर सिर्फ़ कराह * नहीं गूंज रही है, ध्यान से सुनिये..."

कोठरी में मौजूद सभी लोग उल्यानोव की ओर देख रहे थे और स्पष्ट था कि वे उनकी बात अच्छी तरह समझ रहे हैं। वह युवक, जो शुरू में उनका शैतानवाला मज़ाक़ नहीं समझ पाया था, अचानक कह उठा:

"शाबाश, उल्यानोव! क़सम से, शाबाश!"

"शाबाशी मुझे ही नहीं, हम सबको देनी चाहिये," उल्यानोव ने उत्तर दिया। "क़सम से, शाबाश! हम में से एक भी डरपोक नहीं निकला, एक ने भी हिम्मत नहीं हारी।"

---

* 19 वीं सदी के रूसी कवि नि० नेक्रासोव की एक कविता के बोल:

वोल्गा के तट पर जाकर सुनो
किसकी कराह रही है गूंज
इस महान रूसी नदी के ऊपर।

शनै: शनै: बातचीत में भाग लेनेवाले बंदियों की संख्या बढ़ती गयी। भूखे, ठिठुरे और थककर निढाल हुए लोगों का मनोबल बढ़ने लगा। कभी एक कोने से, तो कभी दूसरे से चटपटे चुटकुले सुनाई देने लगे। किसी ने 'मार्सेल्ज़' गाने की भी कोशिश की। पहल करनेवाले गायक का दूसरों ने साथ दिया। और विद्यार्थियों के प्रिय गीत के सुरों से धीरे-धीरे सारी कोठरी गूंज उठी। इससे पहरेदार का गुस्सा और ज़्यादा भड़क उठा। वह बाहर से लोहे पर लोहे की ज़ोर-ज़ोर से चोट मारने लगा—न जाने बंदूक के कुंदे से या अपने बूट में ठुकी नाल से।

"बंद करो! बंद करो! मैं अभी जेलर साहब को बुलाता हूं..."

लेकिन उसे किसी को भी बुलाना नहीं पड़ा। सारी जेल में गीत से कोहराम मच गया। कुछ मिनट में ही ऐसा लगा मानो जेल के सारे पहरेदार ज़ोर-ज़ोर से कोसते और धमकाते हुए दरवाज़े को कूटने लगे हों।

पर 'मार्सेल्ज़' गीत बंद नहीं हुआ। इसके विपरीत जैसे जैसे वार्डरों का क्रोध बढ़ता गया, वैसे वैसे गीत और भी ज़्यादा जोश के साथ गूंजने लगा। शीघ्र ही आस-पास की कोठरियों के बंदी भी साथ देने लगे। गीत अब कारागार की मोटी दीवारों को फोड़कर बाहर निकल पड़ने को मचल उठा।

अपनी लाचारी महसूस करके वार्डरों को चुप हो जाना पड़ा।

अपनी जीत को महसूस करके भले ही वह मामूली-सी थी, विद्यार्थी भी धीरे-धीरे शान्त हो गये। गीत के स्थान

पर अब इस बारे में बातचीत होने लगी कि उनका भविष्य क्या होगा।

यह बात स्पष्ट थी कि उन्हें जल्दी छोड़ने के लिए नहीं बंद किया गया है। उनमें से प्रत्येक यह भली-भांति जानता था कि सुम्बेका बुर्ज के पास स्थित किले में बनी वह जेल ट्रांज़िट जेल है। यानी उन्हें उन लोगों के लिए जगह ख़ाली करके, जिन्हें पीटर्सबर्ग, मास्को व अन्य नगरों में पकड़ा जायेगा, कहीं दूर भेज दिया जायेगा। कहंते हैं, रूस की सारी जेलें खचाखच भरी हुई हैं...

उल्यानोव अब इस बातचीत में हिस्सा नहीं ले रहे थे। वे फिर से मोखेनुमा खिड़की के सींखचों से सटकर वोल्गा का कलकल नाद सुने जा रहे थे, मानो उसके हर छपाके, उसकी हर सरसराहट को सुनना चाहते हों।

इस तरह घंटों बीत गये, पहाड़-सा दिन बीत गया, शाम आकर ढल गयी और रात होने लगी। अवसादक विचारों से अपना ध्यान हटाने की चेष्टा में क़ैदियों ने एक ऐसा खेल खेलने की कोशिश की, जिसमें उनमें से प्रत्येक को अपने जीवन के चिर-अभीप्सित स्वप्न के बारे में बताना था। तरह तरह के उत्तर दिये गये, लोगों के अपने भिन्न-भिन्न स्वप्न थे। नौजवान आख़िर नौजवान ही ठहरे, गम्भीर बातों के साथ हंसी-मज़ाक़ भी चलता रहा। उनमें से एक ने तो यह भी कह दिया कि वह ब्यालू करने का सपना देख रहा है, वह भी इसी वक़्त, क्योंकि उसका समय काफ़ी पहले हो भी चुका है। दूसरों ने इसका विरोध किया, बोले हंसी आती है सुनकर, अभी तक दोपहर का खाना तो खाया नहीं है। कोई और बोल उठा:

"और नाश्ता भी नहीं किया है..."

इस मज़ाक़ से सभी प्रसन्न हो उठे। वैसे सच कहा जाये, तो सब, सिवा उल्यानोव के। वे पूर्ववत एकाग्रचित्त होकर हाथों में खिड़की के मोटे, ज़ंग लगे सींखचे पकड़े खड़े थे। साथियों ने उन्हें पुकारा:

"तुम्हारी बारी है, व्लादीमिर। या तुम अब नहीं खेल रहे हो?"

उन्होंने मुड़कर देखा। उनका चेहरा पूर्णत: गम्भीर था।

"क्यों नहीं, खेल रहा हूं। ज़रूर खेल रहा हूं। सबसे पहली बात तो यह है कि मेरा सबसे पहला सपना इसी क्षण साकार हो रहा है। शहर में सब हमारा 'मार्सेल्ज़' गा रहे हैं। क़सम से, गा रहे हैं! सुनो, सुनो!"

कोठरी के सभी बंदी खिड़की की तरफ़ लपके। उल्यानोव दूसरों के लिए जगह छोड़कर हट गये। जब निस्तब्धता छा गयी, तो क़ैदियों के कानों में उनके अभी-अभी गाये 'मार्सेल्ज़' के बोल गूंजने लगे। दूर से आते, अत्यन्त दुर्ग्राह्य, पर साथ ही स्पष्ट भी।

उल्यानोव ने अपने साथियों पर एक विजेय दृष्टि डाली।

"देखा? लोगों ने अब हमारी झंडा संभाल लिया है!" वे कह उठे। "मैं यही सपना देख रहा हूं कि आगे भी ऐसा ही होता रहे। इसकी ख़ातिर मैं सब कुछ बलिदान करने को तैयार हूं। जहां तक ब्यालू का सवाल है, तो जेलर उसे हमें लाकर देंगे. इसमें मुझे कोई शक नहीं है। ज़रूर लाकर देंगे, हम इसके लिए उन्हें मजबूर कर देंगे। ज़रा हिम्मत तो करके देखें, न लाने की।" फिर वे एकाएक

चौकन्ने हो उठे। "तुम लोग सुन रहे हो?! नहीं, ज़रा सुनो तो सही। घसीटते ला रहे हैं, ला रहे हैं! मैंने क्या कहा था तुम लोगों से?.."

कोठरी के बाहर कारिडर में काफ़ी दूर से पत्थर के फ़र्श पर टीन के बर्तन की रगड़ की आवाज़ सचमुच सुनाई दे रही थी, जिसे वार्डर खींचते हुए कोठरी की तरफ़ ला रहे थे। रगड़ की आवाज़ पास आती और तेज़ होती हुई सुनाई दी। पहरेदार ने जब तक चाबियों का गुच्छा खनखनाते हुए ताला खोला, उल्यानोव ने और भी कुछ बातें कह डालीं। उनके उत्तर का यह दूसरा भाग था।

"मेरा भविष्य पूर्णतः स्पष्ट है। मैं क्रान्ति को चुन रहा हूं। और क्या चुन सकता हूं?"

कोठरी के पूरे खुले दरवाज़े में से भाप उठते पनीले सूप का बर्तन अंदर धकेला जाने लगा।

"वैसे यह कोई ख़ास अच्छा खाना नहीं है और एक सौ दस लोगों के लिए काफ़ी कम भी है," उल्यानोव ने उदासी से कहा। फिर कुछ क्षण मौन रहकर बोले: "ब्यालू कर लें, फिर मिलकर सोचेंगे कि आगे कैसे ज़िंदगी बितानी है। मैंने थोड़ी ही देर पहले एक अनोखी बात महसूस की है—आदमी रात को, पौ फटने से पहले ज़्यादा अच्छी तरह चिन्तन कर सकता है। बहुत ही अच्छी तरह और गहन चिन्तन। ख़ास तौर से भविष्य के बारे में।"

छुट्टी का दिन

उस दिन उन्हें अपना पति बहुत थका-हारा, पीला और किंचित अन्यमनस्क लगा।

"तुम्हें आराम करना चाहिए, वोलोद्या। तुम्हें कम-से-कम एक दिन तो ढंग से आराम करना चाहिए था।"

"यह तुम्हें कहां की सूझी है, नाद्या?* मैं तो बहुत अच्छा महसूस कर रहा हूं।"

---

* क्रूप्सकाया नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना (1869—1939)—व्ला० इ० लेनिन की पत्नी, पार्टी-कार्यकर्त्ता एवं शिक्षाशास्त्री।

"कभी मानते भी हो तुम! पर तुम्हारी आंखें तुम्हारा भेद खोल रही हैं। काश, हम दोनों साइकिलों पर शहर से बाहर सैर को चल पाते! मेहरबानी करके सारे काम छोड़ दो और पहियों में अच्छी तरह हवा भर दो। जानते हो, लोंभूमो* के रास्ते में बाबूने के फूलों का एक मैदान है..."

"हां, हां, वहां तो बाबूने के फूलों के मारे आंखें चौंधिया जाती हैं। वह मैदान, जंगल शुरू होने से ऐन पहले है।"

"तुमने देखा और एक बार भी वहां नहीं रुके!" नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने सिर हिलाकर उलाहना दिया।

"कभी फ़ुरसत ही नहीं मिलती..."

रविवार की सुबह दो साइकिल-सवार रास्ते पर निकल पड़े। वे नीले आकाश, धूप और पक्षियों के कलरव से आनन्दित होते, एक दूसरे से आगे निकलते तेज़ी से साइकिलें चला रहे थे।

"शाबाश, नाद्या! तुम्हें तो बहुत पहले ऐसा प्रोग्राम बना लेना चाहिए था! बहुत पहले..."

जब थोड़ा आगे बाबूने का पीला-सफ़ेद मैदान झिलमिलाता नज़र आने लगा, तो यात्रियों ने और ज़ोर से पैडल मारने शुरू कर दिये, और थोड़ी देर बाद ही

---

* लोंभूमो—फ़्रांस का एक नगर, जहां सन् 1911 में बोलशेविक पार्टी-स्कूल खुला हुआ था।

घास पर पटकी साइकिलों के पहिये हवा में घूमने लगे।

"बाबूने के फूल! कैसा जादू-सा लगता है!" व्लादीमिर इल्यीच ने झुककर एक फूल तोड़ लिया और उसे चेहरे के पास लाकर आंखें मूंद लीं। "बिलकुल वैसे हैं, जैसे वोल्गा के किनारे..."

"तुम्हारी तो नाक भी पीली हो गयी है।"

"सच? और तुम्हारी भी!"

वे दोनों ही अपनी मातृभूमि का स्मरण दिलानेवाले स्थान के दर्शन से हुई सुखानुभूति से हंस पड़े।

"तुम जानती हो यह किसका जैसा लगता है?" अचानक व्लादीमिर इल्यीच ने पूछा।

"क्या किसका जैसा लगता है?"

"बाबूना। संभलके, अभी इस क्षण की सारी खुशी काफ़ूर हो जायेगी। मैं कभी कवि नहीं बन सकूंगा। बाबूना तो हू-बहू फ़्राइड अंडे जैसा लगता है, तुम्हें नहीं लगता क्या?"

नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना चौंक उठीं।

"सबसे पहले तो मुझे यह लगता है कि तुम्हारी बीवी किसी काम की नहीं है। आखिर कल शाम से तुम्हारे मुंह में एक दाना भी नहीं गया है! अगर मां न होतीं, तो हम दोनों ही अब तक भूखे मर गये होते।"

वे भागकर साइकिलों के पास गयीं और अपनी साइकिल के केरियर से एक सफ़ेद डोरी से सलीके से बंधा बंडल उतारा।

"मुझे पूरा विश्वास है कि इसमें ज़रूर कोई स्वादिष्ट चीज़ है।"

नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने नैपकिन घास पर बिछा दिया और बंडल खोलने लगीं। व्लादीमिर इल्यीच ने उकड़ूं बैठकर दसेक फूल और तोड़ लिये।

"ये तुम्हारे लिए हैं, नाद्या। और ये एलिज़ाबेता वसीलियेवना के लिए हैं—उनके मनपसंद फूल।"

"धन्यवाद! तुम कहते हो कि तुम कवि होने लायक़ नहीं हो। सबसे सुन्दर और सबसे ज़्यादा गठे हुए फूल चुने हैं तुमने।"

"सबसे बड़े भी!"

वे दोनों फिर हंस पड़े। लेकिन नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने दुःखपूर्वक यह भाप लिया कि पति के चेहरे पर अक्सर झलकती रहनेवाली चिन्ता क्षण भर को भी दूर नहीं हो रही है।

जब तक उनकी यह छोटी-सी दावत चलती रही, व्लादीमिर इल्यीच कई बार नज़र बचाकर अपनी बग़ल की जेब में से एक छोटी-सी नोट-बुक निकालकर उसमें जल्दी-जल्दी कुछ लिखकर उसे वापस जेब में रखते रहे।

नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने शुरू में तो इस पर ध्यान न देने की सोची। लेकिन जब धूप में उनकी भली-भांति जानी-पहचानी, मोमजामे का कवर चढ़ी कॉपी चमक उठी, जिसके अनगिनत पृष्ठ के कोने मुड़े थे, और क्षण भर बाद ही उसके पन्नों पर व्लादीमिर इल्यीच की अच्छी तरह तराशी हुई पेंसिल खुले आम चलने लगी, तो उनसे न रहा गया:

"वोलोद्या! यह अच्छा नहीं है। पहले नोट-बुक और

उसके बाद पूरी कॉपी निकाल ली। और इसके बाद पेरिस भी भाग लोगे, वह भी लिओं या ज्यूरिच के रास्ते..."

"तुम सोच भी नहीं सकती कि तुम्हारी बात कितनी ठीक है! काश, लोंझूमो जा पाता, यहां से बहुत ही पास है। बहुत ज़रूरी है..."

नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने दृढ़ निश्चयता के साथ पति से पेंसिल छीन ली और फिर साइकिलों की ओर चल दीं।

वे कुछ सेकंड ही वहां नहीं रही होंगी, लेकिन जब लौटकर आयीं, तो कॉपी की लाइनों पर व्लादीमिर इल्यीच की उंगलियों में कसकर पकड़ी, जलकर काली माचिस की तीली चलती दिखाई दी।

"क्या इसे तुम आराम करना कहते हो? आखिर क्या करूं मैं तुम्हारा? शिकायत करूं क्या?"

"अगर और कोई चारा न बचा हो... सवाल यह है कि शिकायत किस से करोगी? सरकार से? मौजूदा सरकार से?"

नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना का और मज़ाक़ करने का मूड नहीं रहा। उनकी नाक के बांसे पर पड़ा बल और गहरा और कठोर हो गया।

"बस तुम्हें गुस्सा नहीं करना चाहिए। इतनी छोटी-छोटी बातों के कारण झगड़ा करना ठीक नहीं है!"

"तुम्हारी सेहत कोई छोटी-सी बात है?"

"मैं फिर कह रहा हूं कि अरसे से मेरी तबीयत इतनी अच्छी नहीं रही।"

"नहीं, नहीं, आज मैं मां को सारी बात बता दूंगी। अगर तुम उनकी ज़रा भी इज़्ज़त करते हो..."

"मां को बताओगी? तब तो बात गम्भीर है! हम इसी वक़्त जंगल में चलते हैं। और इसी क्षण से सारी बुलबुलें हमारे लिए गायेंगी।"

वे वन में व्याप्त, तत्क्षण उन्हें चारों ओर से घेर लेनेवाली शान्ति का आनन्द उठाते आगे चल पड़े। लेकिन एक विचार उन्हें निरन्तर व्याकुल कर रहा था, बरबस उन्हें अपने देश—रूस—की याद दिलाये जा रहा था।

"वहां क्या हो रहा है? कैसे हो रहा है? तुम जानती हो, नाद्या, मुझे बस कुछ ही दिन के लिए, बल्कि कुछ ही घंटों के लिए वहां पहुंचने का मौक़ा मिल जाये। इतने काम इकट्ठे हो गये हैं। सभी बहुत ज़रूरी और बहुत ही फ़ौरी। फिर अपनी आंखों से भी देख लूंगा कि मास्को में और पीटर्सबर्ग में क्या हो रहा है..."

"जानती हूं। तिस पर पिछले कुछ अरसे से समाचार भी बहुत थोड़े मिल रहे हैं। बहुत धीरे-धीरे और बड़ी मुश्किल से आ रहे हैं। मैं कल वेरा से मिली थी, उससे कुछ करने को कहा है। उसने वादा किया है।"

"वेरा ने वादा किया है, तो ज़रूर करेगी। जो सम्भव है, वह भी और जो असम्भव है, वह भी। तुम उससे कब मिलनेवाली हो? कल?"

"हमेशा की तरह ठीक पांच बजे, हमारे मिलने का यही समय तय है," और अचानक नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने पति की ओर दृष्टि डालकर और नज़रें फेरकर पूछा: "अरे, कल के बजाय कहीं आज ही क्यों न मिलें?"

"आज? आज कैसे?.. ठहरो, ठहरो! यह भी क्या बात हुई! एक आदमी के लिए तो ऐसे आराम करने की हिदायत कि अपनी कॉपी तक खोलकर देखने की मनाही, जबकि दूसरे के लिए..."

"तुम मेहरबानी करके नाराज़ मत होओ, तुम तो आख़िर जानते ही हो कि यह ज़रूरी है।"

"ज़रूरी है। सचमुच ज़रूरी है... ठीक है, माफ़ किया। पर मैं भी तो आख़िर शिकायत कर सकता हूं।"

"मां से?"

"बेशक। एलिज़ावेता वसीलियेवना और मुझ में परस्पर समझ है, पूरी तरह एक दूसरे को समझते हैं।"

"मैं सब देखती हूं और इससे बहुत ख़ुशी होती है मुझे। वे तो तुम पर जान न्यौछावर करने को तैयार हैं।"

"ऐसे लोगों की क़द्र करनी चाहिए, उनका हर तरह से ख़याल रखना चाहिए। बहुत भली हैं. कभी चैन से नहीं बैठतीं... उनके हाथों में जादू है! आज सुबह उन्होंने मेरी वास्कट को इतनी सफ़ाई से रफ़ू करके उस पर इतनी अच्छी तरह प्रेस की कि मैं उसे पहचान ही नहीं सका। उसे तो अब राजनयिकों की पार्टियों में भी पहनकर जाया जा सकता है... अच्छा, अब पांच बजने में कितनी देर है? क्या नदी तक होकर आ सकते हैं या नहीं?"

"चलो देखते हैं। पर पहले ज़रा इस टिड्डे की आवाज़ सुन लो, जो बंद होने का नाम नहीं लेती," नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने हाथ में बंधी घड़ी पति के कान से सटा दी। "सुना, कैसे राग अलापे जा रहा है?"

"हां, हां, हां! यह तो बिलकुल जीता-जागता टिड्डा है। ख़ैर, चलो, हम दोनों का दिन बहुत अच्छा बीत गया। छुट्टी का दिन, सच है ना? साथ ही न जाने कितने दिनों के लिए ताज़ी हवा खा ली और इतने सारे फूल भी चुन लिये।"

"और झगड़ते झगड़ते भी बचे..."

"कहां बचे?.. अच्छा, तो अब मेरी बारी है शर्तें पेश करने की। तो सुनो, वेरा के यहां से लौटते ही सोफ़े पर आराम से बैठ जाना और तुम्हारा रविवार जारी रहेगा। वादा करती हो ना?"

"मेरा क्यों?"

"अच्छा, हमारा सही?"

"यह ठीक है।"

"कहो कि वादा करती हूं।"

"वादा करती हूं।"

...रात को एक बजे के क़रीब व्लादीमिर इल्यीच को नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना के कमरे में बत्ती जली नज़र आ गयी। वे कमरे में गये और उन की मेज़ समाचारपत्रों की कटिंगों से भरी देखकर हैरान रह गये। नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना की आंखें नींद के मारे मुंदी जा रही थीं।

"नाराज़ मत होओ, वोलोद्या, वेरा से बातचीत लम्बी खिंच गयी। घर देर से लौटी, फिर यहां ढेरों काम पड़े थे।"

व्लादीमिर इल्यीच ने पत्नी के कंधे पर हाथ रख दिया:

"इजाज़त हो, तो मैं तुम्हारी मदद किये देता हूं।"

"नहीं, नहीं, किसी हालत में नहीं! मेरे अलावा इस

गोरख-धंधे को और कोई नहीं समझ सकता... तुम मां से मिले?"

"सच कहूं, तो मुझे भी कई जगह जाना पड़ा। आधा पेरिस नापना पड़ गया साइकिल पर।"

नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने पति पर उलाहना-भरी दृष्टि डाली।

"पर फिर भी एलिज़ावेता वसीलियेवना से एक मिनट को मिलता आया हूं। फूलों से वे बहुत ही खुश थीं। बोलीं, बिलकुल वैसे हैं, जैसे रूस में होते हैं। बहुत ही भावुक हो उठीं। और हालांकि मैं बहुत ही जल्दी में था, फिर भी उन्होंने पूछ ही लिया कि उनके लिए कोई काम है या नहीं।"

"तुम परचों के बारे में भूले तो नहीं?"

"नहीं भूला। लेकिन एलिज़ावेता वसीलियेवना की तबीयत पिछले कुछ दिनों से ख़राब चल रही है, तुम देख ही चुकी हो। उनसे कहना पड़ा कि इस बार के परचे बिलकुल फ़ौरी नहीं हैं। उन्हें अस्तरों में बाद में सिया जा सकता है। लेकिन जो काम मैंने उन्हें फ़ौरन करने को कहा, वह था अपनी बेटी का ख़्याल रखना, क्योंकि वह अपनी ज़रा भी फ़िक्र नहीं करती है, यहां तक कि ढंग से सोती भी नहीं है।"

"और मां ने क्या कहा?"

"यही कि तुम्हें मजबूर करना चाहिए।"

"यही कहा था?"

"हां। बोलीं कि नाद्या को अगर रात को मेज़ पर बैठे देखो, तो फ़ौरन मुझे बुला लेना।"

"यही तो समय है जाकर उन्हें बुलाने का।"

"मैं भी तो यही करने जा रहा हूं। अभी, इसी वक़्त।"

"जाना ही है, तो साथ ही चलो ना। मां सिर्फ़ मुझे ही तो रात-रात भर जागने के लिए भला-बुरा थोड़े ही कहती हैं।"

"यानी जाकर एक दूसरे की शिकायत करें? क्या कहने! क्यों न सुबह तक के लिए उठा रखें इस काम को? क्यों न आराम करने दें उन्हें?"

"ठीक है, शिकायत का काम सुबह तक छोड़ देते हैं। लेकिन काम मुझे निबटाना ही होगा, कुछ भी करो... ओह, ज़रा देखो, मां फिर लैम्प बुझाना भूल गयीं। एक न एक दिन हमारे यहां ज़रूर आग लग कर रहेगी!.."

वे दोनों एलिज़ावेता वसीलियेवना के कमरे की तरफ़ गये। उनके कमरे के अधभिड़े दरवाज़े में से हरी-सी रोशनी बाहर आ रही थी, जिससे हॉल में एक तंग-सी पगडंडी बनी हुई थी। वे उसी पगडंडी से दबे पांव दरवाज़े के पास पहुंचे और चौखट पर ठिठक गये।

एलिज़ावेता वसीलियेवना मेज़ पर झुकी हुई काम में जुटी थीं। उनके सामने कई कोट पड़े हुए थे, जिनमें से एक का अस्तर वे उस समय उधेड़ रही थीं। एलिज़ावेता वसीलियेवना के हाथों में कैंची बड़ी तेज़ी से चल रही थी।

टेबल-लैम्प के पास ही मेज़पोश पर लेनिन के "बिलकुल फ़ौरी नहीं" परचे फैले हुए थे।

वहीं, चीनी-मिट्टी के गुलदान में व्लादीमिर इल्यीच द्वारा भेंट किये गये बाबूने के फूल अपलक आंखों की तरह खुले हुए थे...

क्रान्ति के प्रथम शब्द

पीटर्सबर्ग के अंचल के अधिकांश बच्चों की तरह पाशा भी बड़े मज़े से खेल में क़ज़्ज़ाक लुटेरा बना करती थी और कबूतर उड़ाया करती थी। पर बच्चों की यह अल्हड़ ज़िंदगी ज़्यादा दिन नहीं चल पायी, अचानक बीच में ही ख़त्म हो गयी। पाशा का बचपन बीता नहीं, बल्कि पलक झपकते समाप्त हो गया। उसने तीसरी कक्षा पास की ही थी कि युद्ध * छिड़ गया। उसके पिता और बड़ा भाई लाम

* यहां तात्पर्य प्रथम विश्व-युद्ध (1914—1916) से है।

पर चले गये। बीमार मां और छोटे भाई की ज़िम्मेदारी अब पाशा पर आ पड़ी।

वह क्या करे? कहां और किसके पास जाये? दो जून की रोटी कैसे कमाये? नन्हे प्राणी के सामने ये समस्याएं मुंह बाये आ खड़ी हुईं। उनका कोई समाधान उसे नहीं सूझता था।

काफ़ी देर भटकने और बहुत कोशिशों के बाद पाशा को एक दफ़्तर में हरकारे का काम मिल गया। काम आसान न था। वह दिन-भर शहर में इधर-उधर भागती रहती और शाम ढले तक थककर चूर हो जाती। लेकिन मालिक हमेशा किसी न किसी कारण असन्तुष्ट रहता और रोज़ काम से निकालने की धमकियां देता रहता।

पाशा को अब न क़ज़्ज़ाक लुटेरों का खेल खेलने की फ़ुरसत मिलती और न ही कबूतर उड़ाने की। वह घड़ी भी आ गयी, जब पाशा को बिलकुल दूसरी ही तरह के क़ज़्ज़ाक देखने को मिले। उसने एक चौकी पर क़ज़्ज़ाकों को मज़दूरों को चाबुकों से मारते देखा। लम्बे खिंच गये भयानक युद्ध, गरीबी और भूख ने लोगों को सड़कों पर निकल आने को मजबूर कर दिया। नगर में ज़ोर-शोर से मीटिंगें, प्रदर्शन और हड़तालें होने लगीं। अल्पवयस्क कर्मचारी पाशा को रास्ते में जगह-जगह खड़े बैरीकेड मिलने लगे। एक बार तो उसे गोलीबारी के बीच अपने दफ़्तर जाना पड़ा।

वसन्त में एक बार लड़की भीड़ में फंसकर उसके साथ फ़िनलैंड स्टेशन पर पहुंच गयी। लोगों ने कहा कि वे लेनिन का स्वागत करने जा रहे हैं। तब तक पाशा इस

नाम से भली-भांति परिचित हो चुकी थी। पिछले कुछ दिनों से यह नाम शहर में हर किसी की ज़बान पर था।

स्टेशन का चौक और उससे मिलनेवाले रास्ते हज़ारों लोगों की भीड़ से खचाखच भरे हुए थे। ट्रेन देर शाम ढले आयी। भीड़ में लेनिन को देखने में पाशा को बड़ी मुश्किल हुई, पर उसने किसी तरह उनकी झलक देख ही ली। वे उस क्षण अपने काले ओवरकोट के बटन खोले, कॉलर उठाये कहीं से धकेलकर लायी बख़्तरबंद गाड़ी के पास खड़े हुए और फिर उसके टरेट के ऊपर चढ़कर भाषण देने लगे थे। भीड़ का रेला बालिका को उनसे दूर ले गया। उसके लिए वक्ता का भाषण सुन पाना लगभग असम्भव हो गया, पर वह अपने कानों पर पूरा ज़ोर देकर सुनने की कोशिश करती रही और उसका सार समझ गयी।

देर रात गये एकान्त में पाशा ने अपने आप से कहा: "अवसर मिलते ही मैं उन लोगों की सहायता करूंगी, जो लेनिन के साथ हैं।" वह अभी यह नहीं जानती थी कि अपना यह स्वप्न वह कैसे साकार कर पायेगी। इतना वह भली-भांति जानती थी कि अपने स्वप्न को साकार करने के लिए आदमी को कभी-कभी धीरे-धीरे, ठोकर खाते, गिरते-पड़ते पर दृढ़ निश्चयता के साथ आगे बढ़ते जाना होता है। उसे मिली एक पुस्तक में भी ऐसा ही लिखा था।

कुछ ही महीने बाद वह क्रान्ति सफल हो गयी, जिसकी चर्चा लेनिन ने बख़्तरबंद गाड़ी पर खड़े होकर दिये अपने भाषण में की थी। घरों की दीवारों पर सोवियत सत्ता के साथ सहयोग का आह्वान करनेवाले परचे चिपके नज़र आने लगे। परचों पर लेनिन के हस्ताक्षर नहीं होते थे, पर

पाशा समझ गयी कि यह उन्होंने ही लिखा है। इसी कारण वह तुरन्त कहीं और नहीं, बल्कि सीधे लेनिन से मिलने स्मोलनी भवन के लिए रवाना हो गयी, जहां तब लेनिन का कार्यालय था।

सीढ़ियों से ऊपर चढ़ती बालिका को देखकर बंदूकें लिये और सीनों पर कारतूसों की आड़ी पट्टियां डाले खड़े लोग भी उसे रास्ता देने के लिए हट गये।

"क्या कहा, काम करना चाहती हो? सोवियत सत्ता के साथ?.." संतरियों द्वारा बुलाये गये ऊंचे कद के व्यक्ति ने पूछा, जिसने अपने आपको जन-कमिस्सारों की सोवियत* का सचिव बताया।

"हां," पाशा ने कहा।

"तुम कितने साल की हो, बिटिया? क्या काम आता है तुम्हें?"

पाशा क्षण भर के लिए सकुचायी, पर फिर स्वयं पर नियंत्रण करके बोली:

"पन्द्रह की। मैं, जो भी ज़रूरी काम होगा, सब करूंगी। मैं एक दफ़्तर में काम कर चुकी हूं। हरकारे का।"

"क्या कहा, दफ़्तर में?" सचिव विचारमग्न हो उठा। "कभी टाइपराइटर देखा है?"

"देखा है। और टाइप करने की भी कोशिश कर चुकी हूं। एक उंगली से..."

सचिव ने फिर पूछा:

---

* प्रथम सोवियत सरकार।

"एक उंगली से? बेशक यह तो नाकाफ़ी है..." उसके चेहरे पर हल्की-सी मुस्कान खेल गयी। "लेकिन जानती हो, मैंने भी कुछ दिन हुए ऐसे ही पूरा एक काग़ज़ टाइप किया था। तुम कहां तक पढ़ी हो?"

"शहरी स्कूल की तीसरी कक्षा तक।"

"शहरी स्कूल की?.. अच्छा, चलो, आज़माकर देखते हैं। कल से काम पर आ सकती हो?"

"आ सकती हूं।"

पाशा बहुत ख़ुश हुई और अगले दिन निश्चित समय से काफ़ी पहले आ पहुंची। सचिव अपने स्थान पर मौजूद था। उसने पाशा को संतरियों के सामने आकर रुकते समय देख लिया। वह उसके पास गया और उसे एक कमरे में लिवा ले गया, जिसमें लिखने की कई मेज़ें लगी हुई थीं। कमरा बड़ा और रोशनीदार था। कोने में खिड़की के पास लगी मेज़ पर कोई नहीं बैठा था। पाशा को उस पर एक काला टाइपराइटर रखा नज़र आ गया, जिस पर बना सुनहला राज्यचिन्ह आधा मिट चुका था।

"यह है तुम्हारे काम की जगह," सचिव ने कहा, "और यह अत्यन्त फ़ौरी काग़ज़ात की फ़ाइल है। सबसे अहम बात यह है कि कभी घबराना नहीं, समझ गयीं ना? पर मुझे तुम घबरानेवाली नहीं लगती हो, है ना?"

पाशा ने स्वीकृति में सिर हिला तो दिया, पर घबराये बिना न रह सकी। बहुत ही ज़्यादा घबरा गयी वह। गोल कुंजियों पर छपे सारे अक्षर और अंक मानो बिखरकर दौड़ने लगे और कोई भी किसी तरह अपने स्थान पर नहीं

लौट रहा था। प्रथम अक्षर पाशा डेढ़ घंटे से पहले टाइप न कर पायी।

टाइपराइटर चलने की आवाज़ सुनकर सचिव पाशा के पास आ गया। टाइप की हुई पंक्तियां देखकर उसने पाशा का उत्साह बढ़ाया:

"शाबाश! मैं तुम्हें जल्दबाज़ी करने को नहीं कहूंगा। काग़ज़ात हालांकि फ़ौरी हैं," उसने ज़ोर देकर कहना आवश्यक समझा, "लेकिन याद रखो कि ये बहुत ज़रूरी भी हैं।" यह कहकर वह चला गया। पाशा के लिए फिर एक मुसीबत खड़ी हो गयी। अभी तक काम कर रहा 'रेमिंगटन' फिर रुक गया।

दसेक मिनट बाद चिन्तित हुआ सचिव आ पहुंचा।

"अरे, तुम क्या कर रही हो? क्या हुआ? मैं तो साथी लेनिन को तुम्हारे बारे में बता भी चुका हूं, पर तुम हो कि... थक तो नहीं गयी हो?"

पाशा को यह स्वीकार करते शर्म आयी कि वह सिर्फ़ ज़िम्मेदारी के मारे डर गयी थी।

"थक गयी हूं, पर आप घबराइये नहीं, थोड़ी देर में सब ठीक हो जायेगा।"

"तो थोड़ी देर के लिए बाहर जाकर खुली हवा में सांस ले लो," सचिव बोला। "मैंने तुम्हारे लिए पक्का पास बनवा दिया है। यह लो।"

पाशा ने उसे धन्यवाद दिया और मेज़ से उठी ही थी कि उसे अचानक महसूस हुआ कि वास्तव में उसमें ताक़त ही नहीं रह गयी है। यह शायद मां के सिरहाने आंखों में काटी रात का असर था और निस्सन्देह स्मोलनी

में काम के पहले दिन से पूर्व हो रही घबराहट का भी। वह लड़खड़ाती हुई मेज़ों के बीच से निकलने लगी। सचिव ने सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से उसे जाते हुए देखा और एक ठण्डी सांस ली। कम-से-कम पाशा को तो ऐसा ही लगा।

पन्द्रह मिनट बाद 'रेमिंगटन' फिर चलने लगा, पहले की तरह ही रुक-रुककर, पर कुंजियां ज़रा ज़ोर से दब रही थीं। टाइपराइटर थोड़ा थोड़ा पाशा की इच्छानुसार चलने लगा था। लड़की को कोई जल्दी करने को नहीं कह रहा था, पर उसने देखा कि उसका टाइप किया हुआ हर काग़ज़ मेज़ से तुरन्त ग़ायब होता जा रहा है। वह अपना टाइप किया हुआ पन्ना पढ़ भी नहीं पा रही थी।

उस दिन पाशा स्मोलनी से दूसरों के साथ देर शाम ढले बाहर निकली। अगली सुबह वह दूसरों के आने से पहले टाइप का अभ्यास करने के इरादे मे और भी जल्दी वहां पहुंची। लेकिन उसकी इच्छा पूरी न हो सकी, क्योंकि जन-कमिस्सारों की सोवियत का सचिव और बहुत-से दूसरे लोग भी तब तक अपनी जगहों पर आ चुके थे।

पाशा ने देखा कि उसके आने से पहले ही उसकी मेज़ पर कोई काम कर चुका है। उसने यह बात सचिव से कही। सचिव ने उसे तसल्ली दिलायी:

"मैंने किया था एक और फ़ौरी दस्तावेज़ टाइप।"

"आप ही ने तो कहा था कि यहां सभी काग़ज़ात फ़ौरी हैं," पाशा ने आश्चर्य व्यक्त किया।

"वह बहुत ही ज़्यादा फ़ौरी था। साथी लेनिन का। वैसे ही कुछ तुम्हारे लिए भी बचे हुए हैं। यह देखो। इन्हीं से काम शुरू करो।"

पाशा के हाथों में बारीक लिखावट से भरे पन्नों की एक पूरी गड्डी-सी आ गयी। शुरू की ही एक पंक्ति में उसे एक ऐसा शब्द मिल गया, जिसे वह काफ़ी कोशिश के बावजूद पढ़ नहीं सकी। सचिव मामला समझकर टाइपिस्ट के पास आया।

"लाओ, मैं समझा दूं। मैं उनका प्रत्येक शब्द समझता हूं।"

और सचिव ने वास्तव में उसे फ़ौरन पढ़ डाला:

"को-रेस-पों-डेंट! तुम्हें इस शब्द का अर्थ तो मालूम है ना?"

पाशा ने स्वीकार किया कि वह शब्द उसने पहली बार सुना है।

सचिव ने फिर एक ठण्डी सांस ली, और इस बार पाशा को इसमें कोई सन्देह नहीं हुआ। उसने सचमुच इतनी ज़ोर से ठण्डी सांस ली थी कि कार्बन-पेपर फिसल कर फ़र्श पर गिर पड़ा था। सचिव और पाशा दोनों ही उसे उठाने के लिए एक साथ झुके। उनके सिर टकराते टकराते बचे, और दोनों ही हंस पड़े।

'कोरेसपोंडेंट' शब्द का अर्थ समझाकर सचिव अपना काम करने चला गया, पर जैसे ही 'रेमिंगटन' की खटखट बंद हुई, वह फिर टाइपिस्ट के पास आ पहुंचा। पाशा इसकी आदी हो गयी। जब भी वह आता, पाशा उसकी ओर बिना मुड़े, उसके पूछने का इंतज़ार किये बिना चुपचाप पेंसिल से उसे वह शब्द दिखा देती, जिस पर वह अटक जाती।

पर एक बार अटकने पर न जाने क्यों वह काफ़ी देर

तक मदद करने नहीं आया। पाशा ने स्वयं ही उस समस्या का समाधान करने की पूरी चेष्टा की, पर उसका कोई फल न निकल पाया। अचानक उसे ऐन अपने कान के पास किसी व्यक्ति की सांस महसूस हुई। पाशा ने राहत की सांस ली और आदतन पेंसिल से समझ में न आ रहे शब्द की ओर संकेत कर दिया। तुरन्त उत्तर मिला:

"कमिस्सार!"

पाशा चौंक उठी। आवाज़ उसके लिए जानी-पहचानी भी थी और नहीं भी। उसने झटके से मुड़कर देखा। मालूम पड़ा, उसके पास सचिव नहीं, स्वयं साथी लेनिन खड़े हैं, बिलकुल वैसे ही, जैसे कि तब फ़िनलैंड स्टेशन पर खड़े थे—बटन खुला ढीला काला ओवरकोट, उसका कॉलर खड़ा हुआ, मानो जैसे अभी-अभी कहीं से लौटे हों। वह तुरन्त उन्हें पहचान गयी, हालांकि उसने उन्हें अपने जीवन में केवल एक बार ही देखा था और उनकी आवाज़ भी एक ही बार सुनी थी। पाशा ने अप्रत्याशितता के कारण घबराकर पूछा:

"आप हैं?.."

"हां, मैं हूं... आप क्या मुझे जानती हैं?"

"आप लेनिन हैं!" पाशा शान्त पर दृढ़ स्वर में कह उठी।

"बिलकुल ठीक, लेनिन। लेकिन मैं भी आपको जानता हूं। आप स्मोलनी की पहली टाइपिस्ट हैं। ठीक है ना?"

पाशा और ज़्यादा शर्मा गयी। यह देखकर लेनिन बोले:

"यह बहुत अच्छी बात है कि अब हमारे पास टाइप जाननेवाला एक साथी हो गया है। आप सोच भी नहीं

सकतीं कि यह कितनी अच्छी बात है! आपका नाम पाशा है ना? मुझे आपके बारे में बताया गया था कि स्मोलनी में एक टाइपिस्ट काम कर रही है। और उसकी उम्र मुश्किल से पन्द्रह साल है। ठीक है ना?"

"पूरे पन्द्रह साल है..." पाशा ने स्पष्ट किया।

"पूरे पन्द्रह? कितनी अच्छी बात है!" लेनिन उल्लासपूर्वक कह उठे। "हर कोई इस बात पर गर्व नहीं कर सकता कि उसने इतनी छोटी उम्र में क्रान्ति में भाग लिया। आप मेरी बात समझीं?"

पाशा शायद बात पूरी तरह नहीं समझ पायी, पर उसने सिर स्वीकृति में हिला दिया।

"हमारे यहां कैसा लग रहा है, पाशा?" लेनिन ने पूछा। "पर मेहरबानी करके ईमानदारी से और साफ़-साफ़ बताना। मुश्किल होती है? क्यों?"

टाइपिस्ट ने उत्तर देने के बजाय अपनी पतली, उत्तेजना के कारण कांपती और साथ ही रिबन के कारण बैंगनी धब्बे लगी तर्जनी आगे कर दी।

"एक उंगली से टाइप करती हैं," लेनिन बिना अतिरिक्त स्पष्टीकरण के समझ गये। "तो क्या हुआ! हर बड़ा काम छोटे काम से शुरू होता है। आप घबराइये नहीं, धीरे-धीरे सब ठीक हो जायेगा। और लिखावट का क्या हाल है?"

पाशा इस प्रश्न को समझ न पायी और उसने किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर लेनिन की ओर देखा। लेनिन से उसकी नज़रें टकरा गयीं:

"मेरा लिखा आप अच्छी तरह समझ पाती हैं या नहीं?

मैं जल्दी में कभी-कभी ऐसी घसीट मारता हूं कि नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना भी उलझन में पड़ जाती हैं।"

पाशा की समझ में नहीं आया कि क्या और कैसा जवाब दे। लेनिन ने उसके कंधे के ऊपर से झुककर 'रेमिंगटन' से टाइप की हुई पंक्तियों को ग़ौर से देखा और बोले:

"मेरे विचार में आपका काम अच्छा चल रहा है, पाशा। अब 'कमिस्सार' शब्द भी टाइप कर देंगी और दो 'एस' लगाकर बिलकुल सही टाइप करेंगी, ठीक है ना? और 'कोरेसपोंडेंट' शब्द भी आपने बिलकुल ठीक टाइप कर दिया। शाबाश!"

लेनिन ने अचानक सीधे होकर शरत्कालीन घने कोहरे से आच्छादित खिड़की की ओर देखा और धीरे से कहा:

"जानती हैं, अभी मैं किस बारे में सोच रहा था? आप अंदाज़ भी नहीं लगा सकेंगी? मेरी बात ध्यान से सुनिये। हमें कठिन और जटिल समय में जीना पड़ रहा है। जटिल और कठिन, पर अद्भुत समय में! हम इन दिनों क्रान्ति के प्रथम शब्दों को एक एक अक्षर करके लिख और टाइप कर रहे हैं! आप ध्यान से सुनिये मेरी बात, पाशा। 'अक्तूबर', 'कमिस्सार', 'जनप्रतिनिधि'!.. एक दिन आयेगा, जब इन शब्दों को संगीतबद्ध किया जायेगा। हां, हां! आप और हम सारी दुनिया में सबसे सुखी, सबसे अधिक सुखी लोग हैं। आप मुझ से सहमत हैं ना?"

पाशा ने फिर स्वीकृति में सिर हिला दिया। पर इस बार अधिक आत्मविश्वास के साथ, संशय की लेशमात्र छाया के बिना।

लेनिन ने सन्तोषपूर्वक बड़े कमरे पर और वहां काम कर रहे लोगों पर नज़र डाली और वैसी ही विचारमग्नता की स्थिति में, किन्तु किंचित ऊंचे स्वर में फिर कहा:

"सुखी। सबसे अधिक सुखी, मैं आपको विश्वास दिलाता हूं!"
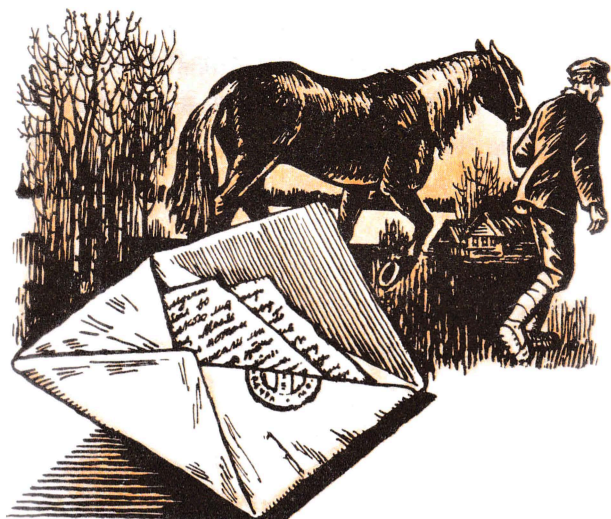
उपहार

पावेल के लिए युद्ध काफ़ी पहले समाप्त हो चुका था, पर सैन्य-सेवा जारी थी। सन् 20 के वसन्त में वह मास्को में मशीनगन चलाने के प्रथम कोर्स में प्रशिक्षण पा रहा था। पावेल को यह बहुत अच्छा लगता था कि उसे, एक ग्रामीण युवक को सशस्त्र पहरा देने के लिए और कहीं नहीं, बल्कि क्रेमलिन में तैनात किया गया है। क्यों? इस प्रश्न का उत्तर शायद वह स्वयं अपने को भी नहीं दे सकता था। उसे तो बस यह अच्छा लगता था। उसने अपने पिता को भी यही लिखा था: "मेरी ड्यूटी अच्छी

है।" साथ ही उसे यह भी लिखने की इच्छा हुई कि उसे लेनिन के निवास-स्थान की रक्षा करने का सम्मान प्राप्त हुआ है, पर उसका इरादा बदल गया। बल्कि यह कहना ठीक होगा कि उसके मित्रों ने उसे ऐसा न लिखने की सलाह दी:

"तुम्हें इतनी ज़िम्मेदारी का काम सौंपा गया है, और तुम..."

"मैं आख़िर अपने पिता को ही तो लिखना चाहता हूं।"

"कुछ भी हो, आख़िर यह एक राज़ है। सरकारी राज़।"

पावेल यह समझता था, पर अपने हर्ष को छिपा पाने में असमर्थ था। ड्यूटी पर खड़ा-खड़ा कभी-कभी वह मुस्करा पड़ता था। उसके मित्रों ने यह बात काफ़ी पहले देख ली थी।

उनमें से एक ने एक बार उसका नाम ही पावेल-मुस्की रख दिया। सभी उसे इस नाम से पुकारने लगे। पर पावेल ने इसका कभी बुरा नहीं माना।

एक बार लेनिन मुस्कराते पहरेदार को देखकर उसके पास रुक गये।

"मूड बहुत अच्छा है, क्यों?"

पावेल ने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

"बहुत ही अच्छी बात है। आपका नाम क्या है?"

"पावेल..."

पहरेदार को सकुचाता हुआ देखकर लेनिन ने हौले से उसके कंधे को छूकर कहा:

"बहुत ख़ुशी हुई आपसे मिलकर, साथी पावेल।"

तब से वे दोनों एक दूसरे का मौन अभिवादन करने लगे। जब भी एक दूसरे को देखते, मन्द-मन्द मुस्करा देते।

पर एक बार व्लादीमिर इल्यीच पावेल को देखकर पहचान नहीं पाये कि क्या यह उनका वही परिचित है। उनके सामने पावेल नहीं, बल्कि एक अत्यन्त उदास व खिन्न व्यक्ति खड़ा था।

"आपको क्या हुआ?" लेनिन ने उसके पास आकर पूछा।

पावेल ने सिर और नीचा झुका लिया।

"कोई अप्रिय बात हुई है क्या, क्यों?"

पावेल ने पहली बार की तरह ही इस बार भी स्वीकृति में सिर हिला दिया।

"पहरा बदलने पर कृपया मेरे पास आइये। लेकिन ध्यान रखिये, झिझकने या किसी तरह की औपचारिकता के बिना। मैं आपकी प्रतीक्षा करूंगा।"

शाम को पावेल लेनिन के पास गया।

"अहा! आइये, यहां बैठिये," व्लादीमिर इल्यीच सौहार्द के साथ उससे मिले। "हां, तो क्या हुआ?"

"मुझे आपको परेशान करते कुछ अच्छा नहीं लगता है..."

"नहीं, नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। कृपया अवश्य बताइये।"

पावेल ने तनाव के कारण माथे पर चुहचुहा आये पसीने को ऐसे पोंछा, मानो कहना चाहता हो: "अब जो हो, सो हो!" उसकी झिझक दूर होने लगी।

"गांव से चिट्ठी आयी है, व्लादीमिर इल्यीच।"

"अच्छा। क्या लिखा है आख़िर चिट्ठी में? कोई बुरी ख़बर है?"

"मेरे पिता पर विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा है।"

"क्या वोल्गा के तटवर्त्ती प्रदेश से आये हैं?"

"नहीं, हम कूर्स्क इलाक़े में रहते हैं।"

"कूर्स्क?" लेनिन ने भी माथे पर हाथ फेरा। "मुझे चिट्ठी दिखा सकते हैं?"

पावेल ने अपनी फ़ौजी क़मीज़ की जेब में से काग़ज़ का एक मुसा हुआ टुकड़ा निकालकर दिया। लेनिन ने उसे एक नज़र में पढ़ डाला।

"हूं... किसान का जीवन बड़ा कठिन होता है, साथी पावेल," लेनिन ने पत्र लौटाते हुए कहा। "बहुत ही कठिन, विशेषकर आज के ज़माने में।"

लेनिन पावेल की ओर देखते रहे, पर लगा जैसे उस क्षण वे उसे नहीं देख रहे हैं।

"कूर्स्क, कूर्स्क... पर वह तो पूरा काली मिट्टीवाला इलाक़ा है! इस समय तो आपके पिता को तो जुताई से फ़ुर्सत नहीं होनी चाहिए।"

"यही तो, व्लादीमिर इल्यीच। लेकिन हमारे सारे गांव में सिर्फ़ एक ही घोड़ी थी। वह जाड़े के बाद बच नहीं पायी..."

"आपके गांव का नाम क्या है, साथी पावेल?"

"ज़बीतोये *, व्लादीमिर इल्यीच।"

---

* रूसी में भूला हुआ, विस्मृत।

"क्या, क्या?.."

"ज़बीतोये। सदियों से यही नाम है उसका।"

"सदियों से?! गांव का नाम ज़बीतोये और उसके वासियों को भी वैसे ही पुकारा जाता है, क्या यही बात है?"

"बुरा लगता है सुनकर, यह अन्याय है। आप मानते हैं ना?"

"जी।"

"आपको और हमें मिलकर रूस का नक़्शा नये सिरे से बनाना होगा।"

"क्या?" पावेल उनकी बात पूरी तरह नहीं समझ पाया।

"मैं कह रहा हूं कि हमारे यहां न तो भूले हुए गांव रहने चाहिए और न ही भूले हुए लोग। बेशक बात नाम की नहीं है। यह तो मैंने ऐसे ही कहा है। लेकिन फिर भी, आपके गांव का नाम सुनकर बहुत बुरा लगता है।"

"जी!" लेनिन का आशय समझकर पावेल ने कहा। "बेशक नाम तो अच्छा नहीं है, पर, अगर हमारी लंगड़ी न मर गयी होती..."

"यानी लंगड़ी कहकर पुकारते थे आप अपनी अन्नदाता को?"

"लंगड़ी।"

"अच्छा, यह बताइये, पावेल, अगर आपको एक नयी घोड़ी मिल जाये, तो आप क्या उसका नाम फिर लंगड़ी ही रखेंगे?"

"लंगड़ी क्यों रखेंगे? वह तो जन्म से ही लंगड़ाती थी, पर नये घोड़े को तो... पर आख़िर उसे लायेंगे कहां से?"

"अच्छा आपकी ट्रेनिंग कैसी चल रही है?" लेनिन ने अचानक बात का रुख़ दूसरी ओर मोड़ दिया।

"उसमें सब ठीक चल रहा है, व्लादीमिर इल्यीच। हम अपनी तरफ़ से पूरी लगन से सीख रहे हैं।"

"यह बहुत अच्छी बात है! हमारे कार्य में सबसे अहम बात है, साथी पावेल, हौसला कभी न पस्त हो।"

उन्होंने "हमारे कार्य में" इस तरह से कहा कि पावेल ने अपने को और लेनिन को पूर्णत: बराबर समझा, जिनका ध्येय एक हो, जिन्हें एक ही चिन्ता हो।

"ख़ैर, आप निराश मत होइये, साथी पावेल। बाक़ी सब भी ठीक होगा।" पावेल का हौसला बढ़ाने के इरादे से लेनिन ने उसकी ओर आंख भी मार दी।

एक दूसरे से विदा लेकर लेनिन और पावेल अपने अपने काम करने चल दिये। रात देर गये जब बैरक में सब कभी के सो चुके थे, पावेल ने फिर न जाने कौन-सी बार जेब से अपने पिता का पत्र निकाला और फिर पढ़ने लगा।

"प्यारे बेटा पावेल, हम पर विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा है," पावेल कांपते हाथों से लिखी गयी चिट्ठी को बड़ी मुश्किल से समझ पा रहा था। "लंगड़ी, हमारी अन्नदाता मर गयी। बिना घोड़े के अब हम कैसे रहेंगे? जीते जी मर जायेंगे। हम थोड़ी-सी भी ज़मीन नहीं जोत पाये, सारी खेती रुक गयी है। क्या तुम कोशिश करके दसेक दिन की छुट्टी लेकर आ सकते हो? तब किसी तरह काम निबटा लेंगे। तुम आ जाओ, मेरी तबीयत भी ख़राब रहती है।

कह नहीं सकता कि तुम्हारे आने तक बच पाऊंगा...''

रात भर पावेल की पलक से पलक न लग सकी। सुबह होने पर उसने प्रशिक्षण कोर्स के कमांडेंट के पास जाकर उसे अपने पिता के पत्र के बारे में बताने का निश्चय किया। उसके मित्रों ने भी उसे यही सलाह दी।

पावेल ने कमांडेंट के कार्य-कक्ष की दहलीज़ लांघी ही थी कि एकाएक वह स्वयं ही उठ खड़ा हुआ और बोला:

"सब जानता हूं। तुम छुट्टी मांगने आये हो ना?''

"छुट्टी,'' पावेल स्वयं अपनी ही आवाज़ न सुन पाकर बुदबुदाया।

कमांडेंट ने कैडेट को मेज़ के पास बिठा दिया:

"लिखो।''

"जी, मैं... जी, मेरे...'' पावेल ने पत्र निकालने के लिए कांपती उंगलियों से फ़ौजी क़मीज़ की जेब का फ़्लेप खोलने की कोशिश की।

"कह तो दिया, सब जानता हूं।''

कमांडेंट ने कमरे में धीरे-धीरे चहलक़दमी करते हुए पावेल को उसका अवकाश का प्रार्थनापत्र पहली से आख़िरी पंक्ति तक बोलकर लिखवा दिया। फिर उसे ज़ोर से पढ़ा कि उसमें क्या लिखा है और बोला:

"हस्ताक्षर कर दो।''

पावेल ने हस्ताक्षर कर दिये।

"अब मैं हस्ताक्षर किये देता हूं। दो हफ़्ते की छुट्टी मंज़ूर हो गयी तुम्हारी।''

"धन्यवाद, साथी कमांडेंट। मैं इस अवधि के लिए बाद में ड्यूटी दे दूंगा।''

"अच्छा, अच्छा, ठीक है। पर ड्यूटी पर निश्चित समय के बाद कोई चाहे तो भी तैनात नहीं रह सकता। तुम गार्ड ड्यूटी के नियम तो जानते हो ना?"

"जानता हूं।"

"फिर ऐसी बात क्यों कहते हो?"

"धन्यवाद, साथी कमांडेंट।"

"धन्यवाद मुझे नहीं, सोवियत सरकार को दो।"

"सरकार को भी धन्यवाद।"

दोनों ने एक दूसरे की ओर ख़ुशी-ख़ुशी देखा।

पावेल उठने लगा, पर कमांडेंट ने हाथ के इशारे से उसे रोक दिया।

"अभी बात पूरी नहीं हुई है," उसने टेलीफ़ोन के पास जाकर चोंगा उठाया और बोला: "नमस्ते, येलेना द्मित्रियेवना! आप मेरे कैडेट से मिलना चाहती थीं ना? वह यहां मेरे कमरे में बैठा है ... उसे आपके पास भेज दूं? अभी इसी वक़्त भेजता हूं ... हां, छुट्टी मंज़ूर हो गयी ... दो हफ़्ते की ... अच्छा, नमस्ते, येलेना द्मित्रियेवना।"

पावेल टकटकी बांधे अपने कमांडेंट को ताक रहा था, जो उसे और अधिक आश्चर्यचकित किये जा रहा था।

"मैं स्तासोवा से बात कर रहा था। उन्हें जानते हो? वे पार्टी की केंद्रीय समिति की सचिव हैं। उन्हें लेनिन से तुम्हारे लिए एक चिट्ठी मिली है।"

"मेरे लिए?"

"हां, घोड़े के बारे में। व्लादीमिर इल्यीच ने खेती में तुम्हारे पिता की मदद के लिए एक घोड़े का इंतज़ाम करने को कहा है। सेना के कुछ घुड़सवार दस्ते भंग किये

जा रहे हैं। उनके घोड़े ज़िलों के ग़रीब किसानों को दे दिये जायेंगे। तुम्हारी बारी सबसे पहली होगी।"

पावेल यह नहीं समझ पाया, बल्कि कहना चाहिए कि समझ पाने की स्थिति में था ही नहीं। वह शाम हुए बैरक में भी मुश्किल से होश संभाल पाया। वहां साथी कैडेटों ने उसे घेर लिया और न जाने कितनी बार उससे सब कुछ सिलसिलेवार ढंग से बताने का अनुरोध करते रहे।

लेनिन द्वारा लिखे पुरज़े को लोग एक दूसरे से ले-लेकर पढ़ रहे थे। पावेल को अब कुछ गुस्सा आने लगा:

"अरे, तुम लोग इसे ज़रा सलीके से पकड़ो, सलीके से..."

उसने पुरज़े को छिपा दिया और उसे केवल जाने के दिन ही निकाला, जब मित्र उसे विदा करने लगे, वह भी यह विश्वास कर लेने के लिए कि वह अपनी जगह पर ही है या नहीं।

पावेल दो सप्ताह के लिए चला गया, जैसा कि आदेश में लिखा था। उसके साथी कैडेटों में उसके पिता और घोड़े के बारे में बातें शायद पूरे दो सप्ताह तक होती रहतीं।

पर पावेल के भाग्य में अपनी छुट्टी का पूरा उपयोग कर पाना बदा ही न था। पांच दिन बाद ही पावेल सुबह-सवेरे बैरक में फिर नज़र आया। केवल इसी बात से बैरक में हलचल मच गयी, और जब साथियों ने अपने अपने पलंग से उचक-उचककर पावेल को ध्यान से देखा, तो वे स्तब्ध ही रह गये।

उनके सामने ज़िंदादिल, हंसमुख, हृष्ट-पुष्ट युवक नहीं, जिसे उन्होंने पिछले सप्ताह विदा किया था, बल्कि

क्लान्त और मुरझाया हुआ आदमी खड़ा था।

"तुम्हें क्या हो गया, पावेल?" मित्र उससे पूछने लगे।

"बहुत बुरा हुआ मेरे साथ, भाइयो।"

"क्या घोड़ा नहीं दिया गया।"

"घोड़ा तो शायद दे दिया जाता।"

"शायद से क्या मतलब? बताओ, बताओ। लोगों ने तुम्हारी मदद की और भी कर देंगे।"

"अब और किसी तरह मदद नहीं की जा सकती। पिता जी नहीं रहे।"

"पिता जी नहीं रहे?"

"लंगड़ी की मौत के बाद उन्होंने बिस्तर जो पकड़ा, तो फिर नहीं उठे। मेरे पहुंचने के तीन दिन पहले मर गये।"

पावेल के मित्र उसे घेरे मौन, किंकर्त्तव्यविमूढ़ हुए खड़े रह गये। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहें, क्या करें।

पावेल किसी तरह अपने पलंग तक पहुंचा, निढाल होकर उस पर बैठ गया। उसने थोड़ी तम्बाकू मांगी।

"तुम्हारी मां नहीं हैं क्या?" किसी ने पूछा।

"वे तो गृहयुद्ध* से पिता जी के लौटने के बाद ही मर गयी थीं। डाक्टर ने कहा कि खुशी के मारे मर गयीं।" वह चुप हो गया और किसी की दी, हाथ की बनायी

---

* रूस का गृहयुद्ध (1918—1920)—मजदूरों व मेहनतकश किसानों द्वारा कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति की उपलब्धियों की रक्षा के लिए आंतरिक व बाह्य प्रतिक्रान्तिकारियों के विरुद्ध लड़ा गया युद्ध।

सिगरेट के कई कश लगाकर बोला: "आदमी भी कैसा जीव है, ख़ुशी के मारे मर जाता है, और दुख के मारे तो वैसे भी मरता है। मैं तो उसका नाम 'उपहार' रखने जा रहा था।"

"किस का?"

"घोड़े का।"

"पर घोड़े के लिए जो पुरज़ा मिला था, उसका क्या किया?"

"क्या करता उसका? गांववालों को दे आया। अब वही ले लें उसे। पिता जी ने ठीक ही लिखा था कि हमारे गांव में एक भी घोड़ा नहीं है।"

"पर तुमने उन्हें लेनिन के साथ हुई अपनी बातचीत के बारे में बताया?"

"कैसे नहीं बताया? मैं उन्हें उनका पता भी दे आया, ताकि वे घोड़ा मिलने पर सारे गांव की ओर से उन्हें धन्यवाद दे दें।"

"और कुछ नहीं भूले?"

"बस यह याद दिलाना भूल गया कि घोड़े का नाम 'उपहार' रखें।"

"वाह रे, पावेल!.."

"मैं थोड़ा घबरा गया था।"

कैडेटों ने उसी शाम को पावेल के गांव के वासियों को एक पत्र लिखा। उसमें सबसे पहले उन्होंने यही लिखा कि घोड़े का नाम 'उपहार' रखा जाये। "और घोड़ा मिलने में कोई अड़चन आये," उन्होंने लिखा, "तो पावेल को सूचित करें। वह लेनिन को स्वयं बता देगा।"

"ठीक लिख दिया न हमने?" कैडेटों में से किसी ने पूछा।

"ठीक," पावेल ने उत्तर दिया। "मैं ख़ुद लेनिन को बता दूंगा। हर हालत में हमारे गांव में एक घोड़ा तो हो जायेगा।"
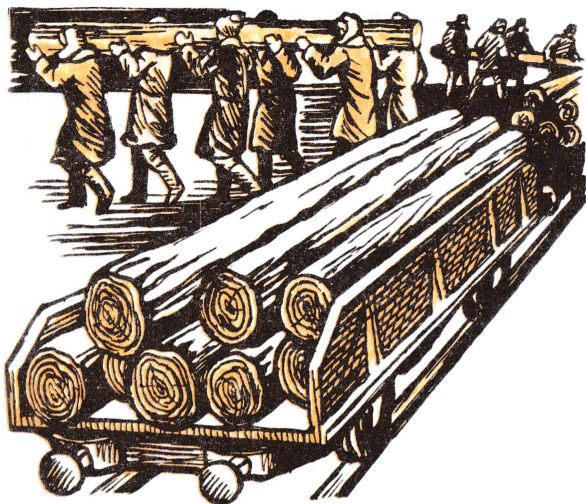
श्रमदान

साइडिंग पर खड़ी फ़्लेट-कारें बर्फ़ से ढके लट्ठों के ढेरों तले दबी चर्र-चूं कर रही थीं। शाम होते होते कड़ाके की ठण्ड पड़ने लगी, यह समझ न आ रहा था कि लट्ठे क्यों चरमरा रहे हैं—तेज़ ठण्ड के कारण या अपने ही वज़न के कारण।

रेलवे लाइन पर लगे बर्फ़ के ढेरों पर ठोकरें खाते मज़दूर जब ट्रेन के पास पहुंचे, तो उनका दिल बैठ गया—या तो इस कारण कि दिसम्बर की शाम का झुटपुटा बहुत जल्दी गहरा गया था, या मालगाड़ी वास्तव

में इतनी लम्बी थी कि उसका ओर या छोर नज़र ही नहीं आ रहा था।

"बाप रे!.. यहां तो काम अंधेरा होने तक तो क्या सुबह तक भी नहीं निबटा पायेंगे!" किसी ने एक ठण्डी सांस लेकर धीरे से, पर इस तरह कहा कि सब सुन लें।

ये शब्द कहनेवाले व्यक्ति को भी अन्य लोगों ने मिलकर धीरे से चुपका दिया और कहा:

"तुम डरते क्यों हो? यह तो आखिर श्रमदान है।"

"चाहो, तो अपने घर का रास्ता नाप सकते हो, हम तुम्हारे बिना भी लट्ठे ढो लेंगे।"

"मेरे बिना नहीं ढोओगे, क्योंकि मैं यहां से कहीं नहीं जानेवाला।"

"यह हुई ना बात!"

श्रमदान आरंभ हो गया। मिनट-भर बाद ही सुप्रसिद्ध रूसी लोकगीत 'दुबीनुश्का' के बोल समवेत स्वर में ऐसे गूंज उठे, जैसे बफ़रों के टकराने की लहर पूरी गाड़ी में दौड़ जाती है।

लगा कि 'दुबीनुश्का' के साथ उठ रहे क़दमों की आह्लादक लय को कोई भी और कुछ भी नहीं भंग कर सकेगा। पर जब काम अपने ज़ोरों पर था, वह उतने ही अप्रत्याशित रूप से रुक गया, जैसे कि शुरू हुआ था। एक फ़्लेट-कार से दूसरी फ़्लेट-कार तक गूंजते, दोहराये जाते एक ही शब्द सुनाई देने लगा:

"लेनिन!.."

काला ओवरकोट और फ़र की कनटोपी पहने दरमियाने

क़द के लेनिन हिमानी आंधी में न जाने कहां से आ पहुंचे और लोगों का प्रसन्नचित्त से अभिवादन करके उनका स्वागत करने की कोशिश करनेवाले लोगों की भीड़ में तुरन्त ओझल हो गये।

उसके बाद वे दो मज़दूरों के साथ एक बर्फ़ लगा लट्ठा उठाकर ढोते हुए नज़र आये। और मिनट-भर के लिए बंद हुए गीत के बोल हवा की चीख़ के साथ मिलकर फिर गूंज उठे।

अपने काम में मग्न लेनिन को यह तुरन्त अनुभव न हो सका कि जिन लट्ठों के नीचे वे अपना कभी एक, तो कभी दूसरा कंधा लगाने की कोशिश कर रहे हैं, वे सब के सब आश्चर्यजनक रूप से हलके और लगभग भारहीन हैं। शुरू में तो उन्हें ऐसा भी लगा कि यह बचपन से उनके जाने-पहचाने गीत 'दुबीनुश्का' का चमत्कार है, जो दूरस्थ सिम्बीर्स्क में गोदी-मज़दूरों और माल से लदे बजरे खींचनेवाले मज़दूरों को उनकी बोझ उठाने में सहायता किया करता है।

लेकिन मामला समझ में आने पर व्लादीमिर इल्यीच ने ज़ोर से हंसकर कहा:

"कितने अक़्लमंद हो! मुझे ही बुद्धू बनाने की ठान ली!"

यह बात उनकी समझ में पहले ही क्यों न आयी! लट्ठे को दोनों सिरों से उठानेवाले उनके दो साथी उनसे क़द में काफ़ी ऊंचे और ताक़तवर हैं, और उनके बीच में चलते समय उनका कंधा भारी बोझ को मुश्किल से ही छू पाता है।

"नहीं, साथियो, ऐसे काम नहीं चलेगा! आइये ईमानदारी से काम करें, नहीं तो मैं दूसरी टोली में चला जाऊंगा।"

"व्लादीमिर इल्यीच, हम ईमानदारी से काम कर रहे हैं। आपको भ्रम हुआ है कि..."

"तो फिर ऐसे करो, ताकि किसी को कोई भ्रम न हो। मैं आगे खड़ा होऊंगा और आप..." लेनिन ने एक नौजवान के चौड़े सीने को हौले से उंगली से छूकर कहा, "आप बीच में, यहां मेरी जगह पर खड़े होयेंगे। शक्ति का पुनर्गठन कभी-कभी लाभदायक होता है। आइये!"

अपनी जगहें बदलकर उन्होंने फिर लट्ठा उठाया।

लेकिन लट्ठा फिर ऐन लेनिन के कंधे के ऊपर हवा में झूलता रहा और उनके ओवरकोट के कॉलर में सिर्फ़ थोड़ी-थोड़ी ज़ंग-सी लगी बर्फ़ ही गिरती रही।

"अरे, यह क्या कर रहे हैं आप लोग?!" लेनिन क्रुद्ध हो उठे।

"व्लादीमिर इल्यीच, यह लट्ठा टेढ़ा-मेढ़ा है। कैसे भी रखिये एक तरफ़ से ऊंचा उठ जाता है। अभी दूसरा उठाते हैं।"

लेनिन ने एक भी शब्द और मुंह से नहीं निकाला, केवल सिर हिलाकर उन दोनों शर्मिंदा हो रहे नटखटों पर एक उलाहना-भरी दृष्टि डाली। फिर वे दोनों हाथों को अपने ओवरकोट की जेबों में ठूंमकर फ़ौजी ढंग से झटके मे मुड़कर अपने लिए नये साथी ढूंढ़ने चल दिये।

लेनिन तब तक सबके साथ मिलकर काम करते रहे, जब तक कि पूरी मालगाड़ी ख़ाली न हो गयी। उस

मालगाड़ी में चालीस से अधिक फ़्लेट-कारें थीं और उनमें से हरेक पर लट्ठों का पूरा ढेर लदा हुआ था।

लेकिन आश्चर्यजनक बात यह थी कि उस शाम लेनिन मज़दूरों में से जिस किसी के भी पास गये, जिस किसी की भी टोली के सुलगते अलाव पर उन्होंने हाथ तापे, सभी लोग उन्हें परी-कथाओं के भीमकाय महावीर प्रतीत हुए। और जिस भी लट्ठे को उन्होंने अपना कंधा लगाकर उठाने की कोशिश की, सभी हलके, एक दूसरे से ज़्यादा हलके लगे, मानो रोमों की तरह ख़ुद ही हवा में उड़ते चले जा रहे हों।

दस्ताने

वह पत्र बुढ़िया दार्या के नाम मास्को से आया था। उसके मिलने की आशा छोड़ देने से पहले, हालांकि सभी पड़ोसी यही कहते रहे थे:

"वह नहीं लिखनेवाले, दार्या। इस वक़्त उन्हें फ़ुरसत नहीं है तुम्हें चिट्ठी-पत्री लिखने की।"

दार्या ख़ुद भी समझती थी कि पत्र पानेवाला बहुत व्यस्त है, फिर भी आस लगाते हुए थी कि उत्तर अवश्य आयेगा।

"मेरा काम बहुत ज़रूरी है। एक आदमी की ज़िंदगी का सवाल है।"

आख़िर एक दिन सुबह सारे गांव के सामने डाकिया साशा चाचा अपने कंधे पर एक भारी थैला लादे बर्फ़ में सीधी पगडंडी बनाता बुढ़िया के घर के सामने रुका और खिड़की खटखटाकर बोला:

"तुम्हारे नाम एक ज़रूरी चिट्ठी है, दार्या। दरवाज़ा खोलो।"

उस समय किसी को यह नहीं मालूम पड़ा कि उस चिट्ठी में क्या लिखा था, पर यह पूर्णत: स्पष्ट हो गया था कि बुढ़िया अपना काम करवाके मानी है। गांववालों ने भी चैन की सांस ली, क्योंकि दार्या किसी के द्वारा अपमानित, बीमार और अपनी ही जैसी बिलकुल बूढ़ी, अकेली अध्यापिका की ख़ातिर दौड़धूप कर रही थी।

एक सप्ताह बाद ही गांववाले और भी आश्चर्यचकित रह गये। दसेक साल से अपने घर से न निकलनेवाली दार्या स्टेशन की ओर जल्दी जल्दी पैर घसीटती चली जा रही थी।

नगर ने अपने सदा के शोरगुल, होहल्ले के साथ दार्या का स्वागत किया, पर बुढ़िया स्टेशन से सीधे, बिना कहीं रुके केन्द्र की ओर रवाना हो गयी और शीघ्र ही अपने गन्तव्य पर पहुंच गयी।

"आप किस से मिलना चाहती हैं, दादी?" क्रेमलिन के बुर्ज के पास फ़ौजी वरदी पहने एक आदमी ने उसे रोका।

"मुझे ख़ुद लेनिन से मिलना है।"

"पास बनवाना ज़रूरी है।"

"जानती हूं कि ज़रूरी है, पर मेरे पास वक़्त बहुत कम है। आज ही पहुंची हूं और आज ही लौट जाना है। तुम ख़ुद ही कुछ करवा दो, बेटा।"

दार्या ने ट्रेन में ही अच्छी तरह सोच लिया था कि लेनिन से भेंट होने पर उसे क्या कहना चाहिए, पर हुआ सब उसका उलटा ही। लेनिन के कार्य-कक्ष में क़दम रखते ही पहले से तैयार किये सारे शब्द वह भूल गयी। पर लेनिन उसे देखते ही मेज़ से उठ खड़े हुए और स्वयं ही पहले बोले:

"नमस्ते, दार्या सिम्योनोवना। आइये, यहां बैठिये रोशनी के पास और बताइये क्या कहना चाहती हैं।"

दार्या मौन रही। उसने एक बार फिर अपने विचारों में तारतम्य स्थापित करने का प्रयास किया, पर पहले से सोचे गये शब्दों में से उसे एक भी किसी तरह याद न आया।

"मैं तो बस धन्यवाद कहने आयी हूं। हमारी अध्यापिका की मदद के लिए।" फिर वह उठकर लेनिन के बिलकुल पास आ गयी और अपने साथ लायी पोटली खोलकर बोली: "यह तुम्हारे लिए है। गुस्सा मत होना, इसे ऐसे ही स्वीकार करना, जैसे अपनी मां से करते।"

मेज़ के किनारे पर धूसर रंग के दस्ताने रखे नज़र आये। हरी बनात पर रखे जाने पर उनकी लोमश सिलवटें इस तरह निःशब्द, हौले से दूर हो गयीं, मानो उन्होंने विचारमग्नता में एक ठण्डी सांस ली हो।

दार्या ने भी एक उसांस छोड़ी।

"ये दस्ताने किसानी ढंग के, मामूली दस्ताने हैं। पहनो और ख़ुश रहो।"

लेनिन ने एक दस्ताना उठाया और पहनकर देखा। बिलकुल ठीक निकला।

"हमारी तरफ़ भी ऐसे ही दस्ताने बुने जाते हैं। बढ़िया बटा हुआ ऊन है। बहुत बहुत धन्यवाद आपको।"

लेनिन कुछ और भी कहना चाहते थे, पर बुढ़िया हड़बड़ी में उनसे विदा लेने लगी:

"माफ़ करना, मुझे जल्दी है।"

और जैसे अप्रत्याशित रूप से वह आयी थी, वैसे ही चल दी।

लेकिन शीशे के दरवाज़ों से बाहर आकर उसने एकाएक जल्दबाज़ी छोड़ दी और शहर जितने बड़े अहाते में वैसे ही धीरे-धीरे चलने लगी, जैसे अपने अहाते में चला करती थी। और उसके गरम रूमाल से ढके कंधों पर जनवरी की सूखी, तराशी हुई-सी बर्फ़ भी वैसे ही पड़ रही थी, जैसे कि उसके अपने गांव में पड़ा करती थी।

बुढ़िया ने रुककर एक विचारमग्न दृष्टि अपने चारों ओर प्राचीन चर्चों के सुनहले गुम्बदों, कंगूरेदार गुलाबी प्राचीरों और अरसे से चुप खड़ी तोपों की क़तारों पर डाली।

क्रेमलिन के घंटों की गूंज दूसरी बार शाम के झुटपुटे में लिपटी मास्को नदी के पार निकल गयी पर दार्या वैसे ही अपने विचारों में मग्न मुस्कराती खड़ी रही।

बोरोवीत्सकी द्वार के बाहर एक स्लेज-गाड़ी में बैठे

साईस ने अचानक उसे आवाज़ दी:

"आप दार्या सिम्योनोवना हैं?"

"हां," बुढ़िया ने आश्चर्य से कहा।

"लेनिन ने आपको स्टेशन तक छोड़ आने को कहा है।"

दार्या अपने गांव सन्तुष्ट और प्रसन्नचित्त लौटी। गांववाले उसका क़िस्सा सुनकर मज़ाक़ किये बिना न रह सके:

"तुम तो कुछ जवान-सी हो गयी लगती हो!"

"मुझे और हो भी क्या सकता है? वहां शहर में जाकर देखो, बर्फ़ में तीन सौ सालों से रखी तोपों के भी ज़ंग नहीं लगा है..."

बस दार्या को यही बात मालूम न थी कि जिसके लिए उसने दस्ताने बुने थे, वह इन्हें पहनता भी है या नहीं।

"अरे, क्या ज़रूरत पड़ी है उन्हें तुम्हारे दस्तानों की, तुम ख़ुद ही सोचो," पड़ोसी कहते, "उनके पास तो मिल के बुने हुए होंगे।"

"यह सच है," दार्या सिम्योनोवना स्वीकार करती। "पर क्या पता कड़ाके की ठण्ड में पहनते हों?"

वह मन-ही-मन आस लगाये हुए थी कि वे उन्हें पहनते होंगे।

कुछ दिनों बाद ही गांव के लड़के शहर का चक्कर लगाकर आये और सबसे पहले दार्या के पास आकर बोले:

"वे पहनते हैं उन्हें! हमने ख़ुद देखा है।"

दार्या चुपचाप लड़कों की बातें सुनती रही। उसके ऐन चश्मे के शीशों के आगे इस्पात की तेज़ नोकवाली सलाइयां शाम की लाली में चमकती रहीं।

पास ही खिड़की के दासे पर तैयार दस्ताने रखे थे। उनमें से एक का अंगूठा ऐसे निकला हुआ था, मानो किसी महावीर के हाथ पर पहनाया हुआ हो।

"ये किसके लिए हैं, दार्या सिम्योनोवना?"

"ये व्लादीमिर इल्यीच के साईस के लिए हैं। और अपने डाकिये साशा चाचा के लिए भी बुन दूंगी। चिट्ठियों से भरा कितना भारी थैला ढोना पड़ता है उसे कड़ाके की ठण्ड में रोज़ाना!"

...न जाने कितने वर्ष बीत गये तब से। लेनिन नहीं रहे, दार्या ख़ुद भी कब की नहीं रही। दार्या के गांव में अब रोज़ाना सुबह कोई और ही डाकिया बर्फ़ में पगडंडी बनाता चलता दिखाई देता है, लेकिन जिन सलाइयों से बुढ़िया ने अपने अमूल्य उपहार तैयार किये थे, वे शायद आज भी सही-सलामत हैं, लगातार अपना काम जारी रखे हुए हैं।

हाल ही में हमारे एक पड़ोसी वीर विमान-चालक को हमारे देश के दूसरे छोर से एक पारसल मिला। खोला, तो देखा—दस्ताने हैं! बिलकुल वैसे ही, जैसे कभी लेनिन के लिए बुने गये थे।
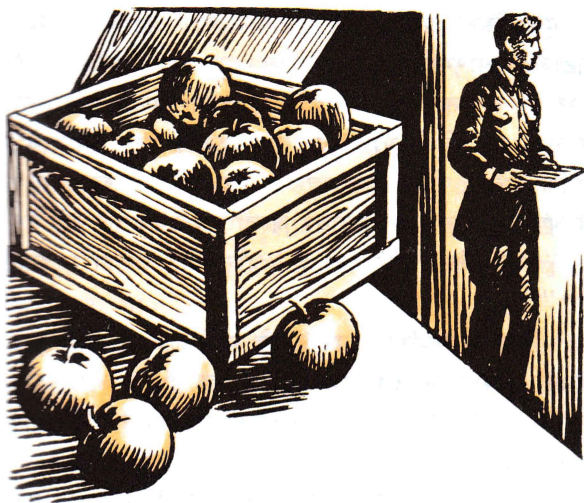
पारसल

दज़ेर्झीन्स्की * दिन में कई बार ताज़ा डाक देखा करते थे। पत्र हमेशा बहुत सारे होते थे, सरकारी भी और साधारण भी।

दूरस्थ सीमान्त से तस्करों के विरुद्ध की जा रही कार्रवाइयों की रिपोर्टें आती थीं। वोल्गा तटवासी अकाल से पीड़ित बच्चों के लिए तुरन्त सहायता भेजने की प्रार्थना करते थे। साइबेरिया से रूस के केन्द्रीय क्षेत्रों में भेजे जा रहे खाद्यान्न व बीजों की सूचनाएं होती थीं।

* प्रतिक्रान्तिकारी शक्तियों से संघर्ष के आयोग (चेका) के अध्यक्ष।

दज़ेर्झीन्स्की प्रत्येक पत्र, प्रत्येक तार का अविलम्ब, सटीक व सारगर्भित उत्तर देते थे। उस समय भी वे लम्बे दौरे पर रवाना होने से पहले यह काम विशेष सावधानी के साथ कर रहे थे और सुबह तक बैठने के लिए तैयार थे, ताकि उनके पीछे काग़ज़ात के ढेर पड़े न रह जायें। वे अपने सचिव से भी बराबर जल्दी करने को कह रहे थे।

"क्यों, कैसा चल रहा है? और कोई सरकारी डाक है?"

सचिव मिनट-मिनट पर उनके कार्य-कक्ष में आ रहा। अपनी सुविधा के लिए वह कहीं से एक ट्रे ढूंढ़ लाया था, जिसमें ताज़ा डाक रखकर फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच के पास लाता था।

दज़ेर्झीन्स्की ने यह काफ़ी पहले देख लिया था, पर नौजवान को उसके आवश्यकता से अधिक उत्साह के लिए झिड़की देने का उन्हें किसी प्रकार समय ही नहीं मिल रहा था, इसीलिए यह बात अनुकूल अवसर तक के लिए टली हुई थी। उस दिन सुबह आख़िर उनसे और न सहा जा सका :

"बिलकुल पुराने उपन्यासों जैसी बात है: काउंट की नींद खुलती है, वह घंटी बजाता है, और उसके लिए ट्रे में चिट्ठियां और काली कॉफ़ी पेश कर दी जाती है!"

"अगर कॉफ़ी होती..." सचिव ने धीरे से कहा।

"ठीक है, अगर होती! ट्रे तो बड़ी है, और उससे फ़ायदा बहुत कम है। सुबह से शाम तक आप उसमें सिर्फ़ काग़ज़ात ढोते रहते हैं। हो सकता है, यह सुविधाजनक हो, पर ध्यान रखियेगा कि यह कुछ अधिक पौष्टिक नहीं है।"

जन-कमिस्सार * और युवक दोनों ही दुबले-पतले और पीले चेहरेवाले एक दूसरे के सामने खड़े थे। यह मज़ाक़ दोनों के लिए क्षण-भर को अकाल, टाइफ़स और शत्रुओं के बारे में भूल जाने में सहायक सिद्ध हुआ।

"आख़िर आपने कहां से ढूंढ़ निकाली है यह ट्रे?"

"यह ट्रे, फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच, सचमुच उपन्यासों जैसी है, शुद्ध चांदी की है। इसे एक बूर्जुआ के यहां से ज़ब्त किया गया था।"

द्ज़ेर्झींस्की ने सचिव की ओर ऐसी नज़रों से देखा कि वह ख़ाली ट्रे लिये हैरानी से कंधे उचकाता कक्ष से चला गया:

"आदमी जी-जान से कोशिश करता है, फिर भी..."

यह बात उसने स्वागत-कक्ष में कही थी, और द्ज़ेर्झींस्की ये शब्द नहीं सुन पाये थे। सचिव ने भी उसके निकलते ही द्ज़ेर्झींस्की की ली हुई ठण्डी सांस नहीं सुनी थी। वह फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच का युवा, पर गहरी थकान के कारण मलिन चेहरा भी नहीं देख पाया था।

"हूं..." सचिव सोच रहा था, "आज के दिन की शुरूआत कुछ ज़्यादा अच्छी नहीं हुई। शाम तक ज़रूर बिजली गिरेगी।"

उसे यह मालूम नहीं था कि बिजली उससे काफ़ी पहले गिर जायेगी। वह जन-कमिस्सार के पास ताज़ा डाक लेकर आया, निस्सन्देह ट्रे में नहीं, क्योंकि अब उसके होने का तो सवाल ही नहीं उठता था। और हो गयी शुरूआत।

---

* जन-कमिस्सार — मंत्री।

"सुबह मैंने स्वागत-कक्ष में लाख की सील लगी प्लाईवुड की एक पेटी देखी थी। उसके बारे में रिपोर्ट क्यों नहीं की?"

"फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच, मैंने इस बात को काम ख़त्म होने तक के लिए उठा रखा था। बाकू से साथी खन्दालोव ने पारसल भिजवाया है। ग़ैरसरकारी है। कहने का मतलब है—उपहार है।"

"कैसा उपहार है?"

"आपको दिखाये बिना मैंने उसे न खोलने का निश्चय किया, पर वैसे ही ख़ुशबू आ रही है, पूरे स्वागत-कक्ष में भर रही है, इतनी तेज़ कि सिर चकरा रहा है..."

पेटी जब खोली गयी, तो उन्हें अपनी आंखों पर विश्वास न हुआ। बड़े-बड़े लाल-सुर्ख़, बाकू की सुनहली धूप में पके रसभरे सेब एक दूसरे से टकराते सारी मेज़ पर लुढ़कने लगे...

"सुनिये, इन्हें पैक करके यहां से उठा ले जाइये। इसी वक़्त!" द्ज़ेर्झीन्स्की ने पैड की ओर हाथ बढ़ाया और उसमें से झटके से एक पन्ना फाड़ लिया।

"अभी ले जाता हूं..."

"नहीं, पहले बाकू भेजने के लिए मेरा जवाब लिखिये।"

"लिखाइये, फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच।"

सचिव आशुलिपि में बड़ी मुश्किल से लिख पा रहा था।

"लिख लिया?"

"जी, पूरा का पूरा।"

"कृपया पढ़कर सुनाइये।"

"सुनिये। 'ख़न्दालोव, अध्यक्ष चेका, आज़रबैजान। आदरणीय साथी, याद रखने के लिए धन्यवाद। आपका पारसल मिला। मैंने उसे चेका के अस्पताल को बीमार कर्मचारियों के लिए दे दिया। तथापि मैं आपको ध्यान दिला दूं कि चेका का अध्यक्ष और कम्युनिस्ट होने के नाते आपको इस प्रकार के उपहार किसी को भी नहीं भेजने चाहिए, न मुझे और न ही किसी अन्य व्यक्ति को। द्ज़ेर्झींस्की।'"

"ठीक है, मेरे विचार में यह न्यायसंगत और मानवोचित रहेगा। भेज दीजिये। और सेब जिन्हें देने चाहिये, इसी वक़्त दे दीजिये।"

"जैसी आज्ञा।"

"लौटकर आयें, तो फ़ौरन लेनिन से टेलीफ़ोन मिला दीजिये।"

दसेक मिनट बाद सचिव लौट आया। उसकी मुख-मुद्रा ऐसी थी कि रिपोर्ट के बिना ही स्पष्ट था कि उसने सारे आदेशों का पालन कर लिया है।

"फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच, टेलीफ़ोन मिला रहा हूं।"

"व्लादीमिर इल्यीच? नमस्ते, मैं द्ज़ेर्झींस्की बोल रहा हूं..."

लेनिन को सब मामलों की विस्तार से रिपोर्ट देकर फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच ने अन्त में कहा:

"आज मुझे हमारे एक साथी ने परेशानी में डाल दिया, बल्कि खिझा दिया। मेरे नाम उसने खाने की चीज़ का पारसल भेजा! मैंने उसे जवाब दे दिया है, हो सकता है, कुछ सख़्त लगे, लेकिन मेरे विचार में न्यायसंगत है।

इस उत्तर के बारे में मैं आपसे सलाह करना चाहूंगा। मैंने कहीं ज़रूरत से ज़्यादा सख़्ती तो नहीं बरती है?"

द्ज़ेर्झीस्की ने ख़न्दालोव को भेजे अपने पत्र का सारांश बता दिया।

"आपकी क्या राय है, व्लादीमिर इल्यीच? कहीं ज़्यादा सख़्त तो नहीं है?.."

चोंगे में कुछ खड़खड़ हुई और बंद हो गयी। द्ज़ेर्झीस्की ने पैर बदला।

"हां, भेज दिया है..."

सचिव बड़े ग़ौर से फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच के चेहरे की ओर देखता रहा, पर वह कुछ अनुमान न लगा सका कि लाइन के दूसरे छोर पर क्या हो रहा है।

द्ज़ेर्झीस्की लेनिन की बात घबराहट में मुस्कराते हुए सुन रहे थे और प्रश्नों की झड़ी का बड़ी मुश्किल से जवाब दे पा रहे थे:

"स्पष्ट है। समझता हूं। सहमत हूं। बहुत बहुत धन्यवाद..."

देर शाम ढले घर जाने से पहले द्ज़ेर्झीस्की ने आख़िरी बार सचिव को बुलाया:

"तो कल आप और मैं साइबेरिया जा रहे हैं। हमारी सब तैयारी हो चुकी है ना?"

"जी, सब तैयार है, फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच!"

"तो फिर चलिये अपने अपने घर!"

आम तौर पर इन शब्दों के बाद विदा लेकर, सचिव एड़ियां बजाकर अगले दिन तक के लिए चला जाता था, पर उस दिन न जाने क्यों देर कर रहा था।

"आपको कोई परेशानी है क्या?"

सचिव मेज़ के किनारे को नाख़ून से कुरेदता खड़ा रहा।

"ट्रे, मुझे आशा है, गोदाम में है?"

"जी, गोदाम में है, फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच।"

"और सेब?"

"बीमार चेकावालों को मिल चुके हैं।"

"तो फिर आपको क्या बात परेशान कर रही है?"

"क्या मैं जान सकता हूं कि ख़न्दालोव के पारसल के बारे में साथी लेनिन ने क्या कहा था?"

"अ-हा! तो यह बात है! लेकिन देखिये सिर्फ़ हमारे बीच में रहनी चाहिए बात। पूरी तरह राज़ ही रहे। ठीक है?"

"स्पष्ट है, फ़ेलिक्स एद्मुंदोविच।"

"तो सुनिये, व्लादीमिर इल्यीच ने मुझे डांट लगायी थी। और जानते हैं यह काम उन्होंने कितनी कुशलता के साथ किया? बोले, आपको तो सब लौह-पुरुष कहते हैं, पर वास्तव में आप बहुत ही दयालु और विनम्र व्यक्ति हैं। मैं तो बाकू के उस साथी की ऐसे ख़बर लेता और फटकारकर आगे से ऐसा न करने की चेतावनी भी देता। हां, हां, हां। समझ गये?"

द्ज़ेर्झींस्की ने 'समझ गये' कुछ इस तरह कहा कि यह स्पष्ट न हुआ कि लेनिन ने उनसे इस तरह प्रश्न किया था या अब द्ज़ेर्झींस्की अपने सचिव से यह पूछ रहे हैं—समझ गये ना आप कि लेनिन कितने गुस्सा हुए थे?

सचिव ने द्ज़ेर्झींस्की की ओर ध्यान से देखा और बहरहाल जवाब में कह दिया: "समझ गया!.."

बिल्लौरी फूलदान

लेनिन को उस अद्‌भुत फूलदान के बारे में लूनाचार्स्की से मालूम पड़ा था। शिक्षा के जन-कमिस्सार बहुत पहले से महसूस करने लगे थे कि व्लादीमिर इल्यीच प्रतिभापूर्ण कृतियों के कितने उत्कृष्ट पारखी हैं। और वे लेनिन की पैनी दृष्टि और छोटी से छोटी वस्तुओं में भी सौन्दर्य के दर्शन करने की उनकी क्षमता से सदा आश्चर्यचकित रह जाते थे। यही कारण था कि जब लूनाचार्स्की को वह बिल्लौरी फूलदान दिखाया गया, तो वे उस पर मुग्ध हो गये। उन्होंने तुरन्त लेनिन को टेलीफ़ोन करके उनसे उस

अजूबे को एक नज़र देखने के लिये समय निकालने का अनुरोध किया।

एक रविवार को लेनिन ने अपने घरवालों से कहा कि वे लगभग पूरा दिन उनके साथ बितायेंगे, केवल एक या ज़्यादा से ज़्यादा डेढ़ घंटे के लिए ही बाहर जायेंगे। आत्मीयों को बहुत ख़ुशी हुई कि चलो, व्लादीमिर इल्यीच आख़िर थोड़ा बहुत आराम तो कर सकेंगे।

पर दोपहर के खाने पर वे व्यर्थ ही उनकी प्रतीक्षा करते रहे। केवल शाम ढले ही वे एक क़सूरवार की मुस्कान के साथ घर लौटे।

"मुझे सज़ा मिलनी चाहिए और साथ ही माफ़ी भी। लेकिन जब आप लोग सुनेंगे कि मुझे देर किस कारण हुई, तो मुझे पूरा विश्वास है कि आप लोग मुझे माफ़ कर देंगे।"

और उन्होंने हॉल में अपना ओवरकोट उतारे बिना ही उस फूलदान के बारे में बताना शुरू कर दिया।

"वह सचमुच एक अजूबा है! लूनाचार्स्की ने बिलकुल ठीक कहा था। हां, हां, वास्तव में एक अजूबा है! इसमें लेश मात्र भी अतिशयोक्ति नहीं है।"

व्लादीमिर इल्यीच ने अपने आत्मीयों पर एक दृष्टि डाली, जो कुछ भी समझ नहीं पा रहे थे।

"क्या आप बिल्लौर से बने कार्नेशन फूलों के एक गुलदस्ते की कल्पना कर सकते हैं? गुलदस्ते की भी नहीं, बल्कि बिल्लौर के फूलों की एक पूरी पूली की! उन्हीं ने तो मेरा मन मोह लिया था, मुझ पर जादू कर दिया था। और जानते हैं, मैं वहां इतनी देर तक किस लिए रुका था?

आपको कभी विश्वास नहीं होगा। सूरज निकलने की प्रतीक्षा करता रहा था! अनातोली वसील्येविच ने कहा था कि फूलदान सूरज की रोशनी में बहुत ही सुन्दर दिखाई देता है, पर दुर्भाग्य से दिन-भर बादल ही घिरे रहे। केवल थोड़ी देर पहले आकाश कुछ खुला और हम वह देख पाये, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। हर फूल मोर के पंखों की तरह झिलमिला रहा था। सूरज की किरण जहां गिरती, फूल नयी आभा के साथ चमक उठता, उसकी रूप-रेखा तक बदल जाती। कितनी कल्पना-शक्ति है और साथ ही कितना सामंजस्य भी! निष्प्राण और शीतल पदार्थ हर पंखड़ी में, डंठल की हर गांठ में सजीव हो उठता है। समझ में नहीं आता कि कोई मनुष्य अपने हाथों से ऐसी वस्तु की रचना कैसे कर पाया! मैं आप लोगों को उस फूलदान को दिखाने ज़रूर ले जाऊंगा।"

लेनिन को अपने आत्मीयों को वह फूलदान दिखाने का अवसर तो नहीं मिल पाया, पर उसकी नियति में उन्हें निजी हस्तक्षेप अवश्य करना पड़ा।

"रूसी अजूबे" के बारे में शीघ्र ही कुछ विदेशियों ने भी सुन लिया। दुर्लभ वस्तुओं के संग्रहकर्त्ता किसी भी क़ीमत पर उस निधि को पाने के सपने देखने लगे। एक विदेशी धनी की तो आंखें ऐसी चौंधियाई उस फूलदान को देखकर कि उसने जोश में उसके बदले में पांच नये रेल के इंजन देने का प्रस्ताव कर दिया। लेनिन को यह बात बतायी गयी।

"पांच इंजन?.."

"पांच! शक्तिशाली और चालू हालत में!"

लेनिन उत्तेजित मुख-मुद्रा में कमरे में तेज़ी से चहलक़दमी करने लगे।

"ठीक, ठीक, ठीक... मामला सोचने लायक़ है।"

"यही तो बात है, व्लादीमिर इल्यीच। रूस के लिए आज यह एक बहुत बड़ी नियामत है।"

"मानता हूं। बहुत बड़ी नियामत है। पर आप लोगों की क्या राय है?"

"हमने तो सबसे पहले आपको बताने का फ़ैसला किया है।"

"मैं भी अकेला इसका फ़ैसला नहीं कर सकता। आइये मिलकर सब भला और बुरा सोच लें। आप लोग अर्थव्यवस्था के विशेषज्ञ हैं, आप ही सबसे पहले बोलिये।"

"रूस में तबाही छायी है, व्लादीमिर इल्यीच। यातायात के साधनों के बिना देश का कारोबार ठप पड़ा है। पांच इंजन कोई मज़ाक़ नहीं होते। मेरे ख़्याल में क़ीमत अच्छी मिल रही है।"

"हूं... क़ीमत कम नहीं है, यह ठीक है।"

"हमने भी ऐसा ही सोचा है, व्लादीमिर इल्यीच। रूस भिखारी हो चुका है। हमसे ज़्यादा ग़रीब शायद ही कोई और देश हो।"

"आपने कहा, भिखारी हो चुका है?" लेनिन उदास हो उठे। "हां...तबाह हो चुके हैं हम, लुट चुके हैं, हद से ज़्यादा. यह मानना पड़ेगा, चाहे कितना ही बुरा क्यों न लगे। पर... आपने ख़ुद तो देखा है ना उस फूलदान को?"

"वह कैसा भी क्यों न हो, व्लादीमिर इल्यीच, पर इंजन हमारे लिए इस समय ज़्यादा ज़रूरी हैं।"

"लेकिन फिर भी? देखा है? या नहीं?"

"देखा है।"

"अच्छा लगा।"

"यह कहना तो कम होगा, व्लादीमिर इल्यीच। बहुत ही सुन्दर है वह!"

"अगर यह बात है, तो आइये उसे बहुत बड़े फ़ायदे के साथ बेचने के बजाय यह सोचें कि उसे किस तरह सुरक्षित रखा जाये। यह समझिये कि वह उन प्रतिभाशाली दस्तकारों की बनायी एक अद्वितीय कलाकृति है, जो हमारी जनता की शान हैं।"

अर्थ-विशेषज्ञ लेनिन की बात सुनते रहे तथा वे और भी अधिक भाव-विभोर होकर बोलते रहे:

"उराल में कास्ली के कारीगरों को याद कीजिये। ढलवां लोहे की अद्‌भुत वस्तुएं ढालते हैं वे। बहुत ही बारीक काम होता है। और पालेख़वालों की रोग़न से की जानेवाली आश्चर्यजनक चित्रकारी? और वोल्गा क्षेत्र के ख़ोख़लोमावालों का काम? और म्स्त्योरा? और फ़ेदोस्किनो? पूरे के पूरे परिवार और पूरे के पूरे गांव हैं रूस में प्रतिभाशाली दस्तकारों के! इसलिए अगर ठीक से समझने की कोशिश की जाये, तो हमारी इतनी ग़रीबी के बावजूद हम विपुल सम्पदा और असंख्य निधियों के स्वामी हैं। और हमें हर क़ीमत पर यह सब बचाना और सुरक्षित रखना चाहिए। निस्सन्देह हमारी आज की तंगी हमें और भी बलियां देने को विवश कर सकती है।

लेकिन हमें समझदार गृहस्वामी होना चाहिए। मतलब यह है कि कोई भी और उपाय खोजिये, पर फूलदान को किसी भी सूरत में नहीं बेचिये।"

अर्थ-विशेषज्ञों के जाने के बाद लेनिन ने जमी हुई खिड़की के पास जाकर उसकी बर्फ़ की पपड़ी पर सांस छोड़ी और पिघलकर साफ़ हुए हिस्से से हिमाच्छादित मास्को को देखने लगे।

"हां ... समय कठिन है। अकाल है। कड़ाके की ठण्ड है। तबाही फैली है। लोगों को सबसे ज़्यादा ज़रूरी चीज़ें तक नहीं मिल रही हैं। तीन दिन हुए जन-कमिस्सारों की सोवियत की बैठक में ही साथी त्सुरूपा की तबीयत ख़राब हो गयी। डाक्टरों ने जांचकर कहा: भूखा रहने से बेहोश हुए हैं। खाद्यान्न का जन-कमिस्सार, सारे देश को अनाज सप्लाई करनेवाला आदमी भूखा रहने से बेहोश हो गया! 'कितना भयानक विरोधाभास है!' कोई कह सकता है। लेकिन कोई विरोधाभास नहीं है इसमें! आख़िर इसी कारण तो हम अटल हैं, क्योंकि हमारे बीच ऐसे निःस्वार्थ, अपने कर्त्तव्य के प्रति निष्ठावान और ऊंचे मनोबलवाले क्रान्तिकारी हैं। और फूलदान बनानेवाले जादूगर? अगर आज ऐसी नारकीय परिस्थितियों में लोग ऐसा कर दिखाने में सक्षम हैं, तो कल संसार को वे कितनी उत्कृष्ट कलाकृतियां भेंट करेंगे!.."

कमरे में सचिव के आने से लेनिन का विचार-क्रम भंग हो गया।

"व्लादीमिर इल्यीच, आपका फ़ोन आया है।"

"कौन है. माफ़ कीजिये।"

"फिर वही लोग हैं। फूलदान के बारे में उन्हें फिर कोई बात पूछनी है।"

व्लादीमिर इल्यीच ने चोंगा उठाया:

"मैं सुन रहा हूं... अच्छा, तो यह बात है! आपको फ़ौरन ही यह बता देना चाहिए था। अभी मिलकर इबारत बना लेते हैं। लिख रहे हैं? लिखिये! 'फूलदान बिकाऊ नहीं है। न पांच रेल के इंजनों के बदले में, न पच्चीस के। ख़रीदार महोदय को मालूम हो जाना चाहिए कि यह एक अमूल्य निधि है...' लिख लिया? बहुत अच्छा। हां, यह और जोड़ दीजिये: 'फूलदान आज के महानतम कलाकर — रूस के श्रमिक वर्ग की कलाकृति है।' अब कृपया पढ़कर सुना दीजिये, क्या लिखा है हमने... ठीक है, ठीक है, ठीक है... धन्यवाद। आपको कोई आपत्ति है? तब फिर काम पूरा कीजिये। हम यह मान लेंगे कि इस प्रश्न पर निर्णय लिया जा चुका है।"

पिल्मेनी *

"व्लादीमिर इल्यीच, रविवार को हमारे यहां आइये ना," टेलीफ़ोन पर हुई बातचीत के अन्त में लेनिन के एक पुराने परिचित निकोलाई मत्वेयेविच स्तेपानोव ने अचानक कहा। "ज़रूर आइये। हमारे यहां कुछ नहीं होगा और न ही कोई और आयेगा। बैठकर गपशप करेंगे। थोड़ी

---

* पिल्मेनी—ताज़ा गुंधे मैदा में क़ीमा भरकर और पानी में उबालकर तैयार किया जानेवाला एक प्रकार का रूसी पकवान।

चाय-वाय पी सकते हैं। दिल की बातें करेंगे। अब शिकार-विकार की भी सोचनी चाहिए।"

लेनिन मान गये।

"एक-दो घंटे बैठकर अपने सपनों के बारे में बातचीत करने में कोई बुराई नहीं है। मैं नाद्या को भी चलने को कहूंगा। अच्छा, तय है! पर, भगवान के लिए चाय-वाय का झंझट मत कीजिये। यह पक्की बात है, वादा करते हैं?"

लेकिन सख़्ती से आगाह किये जाने के बावजूद निकोलाई मत्वेयेविच की पत्नी ने दौड़-धूप करनी शुरू कर दी, और स्वयं गृहस्वामी भी चिन्तित हो उठा।

"कभी वे पिल्मेनी बड़े शौक़ से खाया करते थे। साइबेरिया की असली पिल्मेनी, बर्फ़ में जमकर कुरकुरी होने के बाद बनी पिल्मेनी। याद है?"

"याद तो है, पर..."

"गुदड़ी-बाज़ार पास में ही तो है।"

"तो क्या हुआ? हम लोगों के पास चांदी की कोई चीज़ तो जन्म मे ही नहीं रही। और हमारे कपड़ों के बदले में कोई कुछ नहीं देगा। सब पुराने हैं।"

"फिर भी कोई तो तरकीब करनी ही चाहिए ना?"

पति-पत्नी मिलकर अपना संदूक टटोलने लगे। सबसे नीचे उन्हें चमत्कारवश बचे हुए मालकिन वेरा स्पीरीदोनोवना के गिलहरी की खाल के दस्ताने मिल गये, वही, जिन्हें निकोलाई मात्वेयेविच ने उन्हें अपने विवाह की वर्ष-गांठ पर उपहार में दिये थे। उस बात को कई वर्ष हो चुके थे, पर दस्ताने अभी तक देखने में काफ़ी अच्छे लगते

ये। बूढ़े-बुढ़िया ने एक दूसरे की तरफ़ देखा, दस्तानों को हाथों में उलटा-पलटा और सूखारेव्स्काया चौक में स्थित गुदड़ी-बाज़ार चल दिये।

इस तरह घर में अचानक मैदा और गोश्त दोनों ही आ गये। पर स्वादिष्ट पिल्मेनी बनाने के लिए अभी सिरके की कुछ बूंदों और एक प्याज़ की और ज़रूरत थी। लेकिन पिल्मेनी वैसे ही बहुत बढ़िया बन गयी थीं।

अतिथियों की प्रतीक्षा की जाने लगी, पर दुर्भाग्य मे उन्हें भी आने में देर हो रही थी।

हर पांच मिनट में निकोलाई मत्वेयेविच खिड़की के बाहर हाथ डाल-डालकर देख रहे थे, जहां एक सफ़ेद थैली में लटकायी पिल्मेनी, नियमानुसार बर्फ़ में जमाये जाने के बाद हवा के कारण आपस में टकराती हुई खनखना रही थीं।

"असली साइबेरियाई पिल्मेनी हैं! बढ़िया क़िस्म की!"

लेनिन ने रास्ते से ही उन्हें यही सब करते देखा।

"अरे, आप वहां यह क्या कर रहे हैं?" व्लादीमिर इल्यीच ने अहाते में से ही चिल्लाकर पूछा।

अतिथि अंदर आये, तब तक पिल्मेनी काली मिर्च पड़े पानी में उबाली जाने लगी थीं।

अरसे से गरम नहीं किये गये मकान में पिल्मेनी की ख़ुशबू क्षण-भर में चारों ओर फैल गयी। सबसे पहले उसे व्लादीमिर इल्यीच ने महसूस किया।

"नाद्या, लगता है, हम दोनों को धोखा दिया गया है।"

"धोखा नहीं दिया गया है, बल्कि हम तो आपको ख़ुश

करना चाहते हैं," प्लाईवुड के पार्टीशन की आड़ में से झेंपी हुई गृहस्वामिनी ने कहा।

"नहीं, नहीं, धोखा ही दिया है। मैंने निकोलाई मत्वेयेविच के साथ यह तय कर लिया था कि हमारी ख़ातिरदारी का झंझट नहीं किया जायेगा। अगर मुझे मालूम होता, तो मैं नहीं आता, क़सम से!"

व्लादीमिर इल्यीच कुरसियों से टकराते हुए उत्तेजित मुख-मुद्रा में तंग कमरे में चहलक़दमी करने लगे थे।

"साइबेरियाई हैं," दरवाज़े में भाप छोड़ती पतीली लेकर आयी वेरा स्पीरीदोनोवना ने गर्वपूर्वक कहा।

"मैं ख़ुशबू से जान चुका हूं कि साइबेरियाई हैं, पर आयी कहां से? कौन से कोठार से?"

जैसे ही पानी में पहली पिल्मेनी नज़र आयी और लेनिन ने झुककर देख लिया कि वह बिलकुल सफ़ेद मैदा से बनी है, तो उन्होंने आंखें मूंद लीं और उनका गाल ऐसे विकृत हो उठा, मानो दांतों में असह्य पीड़ा हो रही हो।

स्तेपानोव दम्पति की ओर देखकर उन्होंने किंचित बुझे, शान्त पर अत्यन्त स्पष्ट स्वर में कहा:

"तो बात यह है, मेरे प्यारे मेज़बानो। आप मुझ पर ग़ुस्सा होएं या न होएं, पर ये पिल्मेनी मैं हरगिज़ नहीं खाऊंगा। हां, हां! औरों की बात मैं नहीं जानता, पर मेरे गले में ये फंस जायेंगी। नमस्ते। निर्णय एकमत से लिया गया है," उन्होंने देहलीज़ पर से मुड़कर कहा और नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना का कसकर हाथ पकड़कर बोले, "और इसके विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती।"

...सोमवार को सुबह लेनिन काम पर बहुत खिन्न मन:स्थिति में पहुंचे। ऐसी मुद्रा में वे अरसे से नहीं दिखाई दिये थे। उन्होंने एक के बाद एक उन सब लोगों को अपने पास बुलवाया, जो किसी न किसी सीमा तक कालाबाज़ारी के विरुद्ध संघर्ष के लिए उत्तरदायी थे। सबको उन्होंने फ़ौरी या बहुत फ़ौरी काम सौंपे और अन्त में अत्यन्त कड़ी चेतावनी दी:

"मैं खुद आपके काम की जांच करूंगा। मज़दूरों के तो पेट भूख के मारे फूले जा रहे हैं, जबकि गुदड़ी-बाज़ारों के साहब मालदार हुए जा रहे हैं, चरबी चढ़ाये जा रहे हैं।"

बुलाये गये कर्मचारी जब उन्हें सौंपे गये आदेश लिख लेने के बाद चले गये, तो लेनिन ने निकोलाई मत्वेयेविच से टेलीफ़ोन पर बात करवाने को कहा।

सचिव जब तक टेलीफ़ोन का घरघराता हैंडिल घुमाता रहा, व्लादीमिर इल्यीच मानो अपने आप से ही बातें करते हुए विचारमग्न और अब काफ़ी शान्त स्वर में बोले:

"बूढ़े-बुढ़िया से सुलह कर लेनी चाहिए। इसमें उनका कोई ज़्यादा दोष तो है नहीं। ईमानदार और भले लोग हैं।"

लेनिन स्तेपानोव को कल की बात की याद नहीं दिलाना चाहते थे, लेकिन बातचीत न जाने कैसे कल ही की बात से शुरू हुई।

"निकोलाई मत्वेयेविच!" लेनिन बोले। "शिकार के बारे में तो हम कुछ तय कर ही नहीं पाये थे। अगले रविवार को चलें, तो कैसा रहे? अगर एक रीछ मार लें,

तो मैं ख़ुद आपके यहां पिल्मेनी की दावत खाने आ पहुंचूंगा, पर गुदड़ी-बाज़ार से मुझे बहुत घिन आती है, नफ़रत करता हूं उससे! सुन रहे हैं आप? नफ़रत करता हूं उससे? हम दोनों की ओर से अपनी पत्नी से यही कह दीजिये।"

"यही कह दूंगा, व्लादीमिर इल्यीच।"

सुनहली धारीवाली गेंद

लेनिन से मिलने आनेवाले लोगों का हमेशा तांता बंधा रहता था। सचिव इस प्रवाह को बड़ी कठिनाई से नियंत्रित कर पाता था।

"साथी सोकोलोवा, आप ही हैं ना साइबेरिया से?"

"हां। मुझे फ़ौरी काम है।"

"आइये, व्लादीमिर इल्यीच अभी आपके बारे में पूछ रहे थे।"

"साथी वसील्येवा, आपने देर कर दी, आपको थोड़ी देर इंतज़ार करना होगा।"

"ज़रूरी है, तो इंतज़ार कर लूंगी।"

"अरे, लड़को, तुम्हें किस से मिलना है?" सचिव ने देहलीज़ पर हिचकिचाकर रुके हुए, कुछ अजीब-से तीन मुलाक़ातियों से पूछा।

"लेनिन से," बाक़ी दोनों साथियों से कुछ बड़े लगनेवाले और बिखरे बालोंवाले लड़के ने थोड़ा आगे बढ़कर जवाब दिया। "उन्होंने हम से पांच बजे आने को कहा था।"

सचिव ने असमंजस में कंधे उचकाये और खुले हुए पैड को टेबल-लैम्प के ज़रा और पास खिसकाया।

"क्या कहा, पांच बजे? ठीक है, पांच बजे, पर आज नहीं, कल।"

"हम कल नहीं आ सकते," उसी लड़के ने सबकी ओर से कहा। "अभी मिलने दीजिये... बहुत मेहरबानी होगी।"

उसी क्षण लेनिन के कार्य-कक्ष का दरवाज़ा खुला, और वे बाहर निकले। उन्होंने आश्चर्य से लड़कों की ओर देखा।

"कैसे? आप लोग आ गये? मुझे अच्छी तरह याद है कि हमने आठ तारीख़ को मिलना तय किया था।"

"आठ को हमें काम है... आज इजाज़त दे दीजिये।"

"तो आइये, अगर कोई चारा नहीं।"

व्लादीमिर इल्यीच ने स्वागत-कक्ष में बैठे हुए लोगों पर एक क्षमा-याचनापूर्ण दृष्टि डाली।

लेनिन के कार्य-कक्ष में पहुंचने पर लड़के एकाएक सकुचाने लगे, जबकि व्लादीमिर इल्यीच क्लान्त मुद्रा में हौले से कुरसी पर बैठकर पूछने लगे:

“बताइये क्या काम है?”

“हम लोगों की बैठक होगी।” बिखरे बालोंवाले लड़के ने जेब से कुछ लिखा हुआ काग़ज़ निकाला।

“बैठक है? अजेंडा क्या है?” लेनिन की आंखें सिकुड़ उठीं।

“क्या?”

“मैं यह जानना चाहता हूं कि बैठक में किस बारे में बातचीत होगी।”

“हम लोग अक्तूबर क्रान्ति की वर्ष-गांठ मनाने की तैयारी कर रहे हैं, व्लादीमिर इल्यीच।”

“शाबाश! क्या करने का निश्चय किया है?”

“ग़रीब बच्चों के लिए उपहार तैयार कर रहे हैं।”

“ग़रीब बच्चों के लिए?”

“हां, यतीमख़ानों के बच्चों के लिए।”

लेनिन ने लड़कों पर अनिमेष दृष्टि डाली। उनके सामने दुबले-पतले, पीले-से चेहरोंवाले लड़के खड़े थे। अपने पिताओं के पैबंदों से भरे कोट और फ़ौजी क़मीजें उनके कंधों पर से नीचे खिसककर भोंडे ढंग से लटकी हुई थीं।

एक दिन पहले जब लेनिन का उन लड़कों के साथ परिचय हुआ था, घुटकर बातचीत हुई थी, तब उनका ध्यान इस ओर ज़्यादा नहीं गया था। व्लादीमिर इल्यीच उनके पास उस समय पहुंचे थे, जब वे लोग सारी दुनिया से बेख़बर शरत्कालीन डबरों में एक गेंद से खेल रहे थे। लेनिन को आश्चर्य इस बात पर नहीं हुआ था कि उस खेल का यह मौसम नहीं था। ऐसी फ़ुटबाल उन्होंने अपने जीवन में पहली बार देखी थी—छोटी, काली और भीगे

झबरीले पिल्ले जैसी। व्लादीमिर इल्यीच पूछे बिना न रह सके: कैसा लगता है खेलना ऐसी गेंद से?"

उत्तर भी उतना ही स्पष्टवादितापूर्ण मिला:

"आप भी क्या! यह भी कोई गेंद है!.."

लेनिन ने विचारमग्नता में खेल रोक चुके लड़कों के पास थोड़ी देर खड़े रहकर पूछा:

"क्या दूर रहते हैं आप लोग?"

"यहीं के, क्रेमलिन के हैं हम," फ़ुटबाल खिलाड़ियों में सबसे बड़े ने कहा।

"यानी हम पड़ोसी हैं? बहुत अच्छी बात है। जब हम पड़ोसी ही हैं, तो सुनिये मेरी बात। परसों मेरे पास आइये... छः बजे के आस-पास, और भी बेहतर होगा अगर पांच बजे आयें। आयेंगे?"

"पर किसलिए?" उनमें से एक लड़के ने पूछा।

"थोड़ा नज़दीक से जानना चाहता हूं आप लोगों को। पड़ोस में रहते हैं, पर एक दूसरे को बिलकुल नहीं जानते।"

"हम आपको जानते हैं..."

"अगर जानते हैं, तब तो ज़रूर ही आना चाहिए! बस देर मत कीजिये, मुझे समय की पाबंदी अच्छी लगती है।"

"ठीक समय पर आयेंगे, स्लावा के पिता जी के पास घड़ी है।" पूरी टीम की नज़रें सबसे छोटे और सबसे ज़्यादा ठिठुर रहे खिलाड़ी की ओर मुड़ गयीं।

"यह तो बहुत ही अच्छा किया कि आप लोग पूरे एक दिन पहले आये! पर इसका क्या किया जाये?" लेनिन

लड़कों के पतले, अधनंगे और निस्सन्देह बुरी तरह ठिठुर रहे पैरों की ओर एकटक देखते हुए मौन रहे। "यानी आप लोगों ने सबसे ग़रीब बच्चों के लिए उपहार तैयार करने का निश्चय किया है?"

"आज ही शुरू किया है, व्लादीमिर इल्यीच। हम घर घर जा रहे हैं।"

"और स्लावा भी गया था?" लेनिन ने उनमें सबसे छोटे लड़के के नज़र न आने पर पूछा।

"स्लावा भी गया था।"

"कितने साल का है आपका वह महावीर?"

"न जाने क्यों वह बढ़ता ही नहीं है, व्लादीमिर इल्यीच, हालांकि उसकी उम्र काफ़ी है।"

"फिर भी कितने साल का है?"

"ग्यारह का। जल्दी ही हो जायेगा।"

"हां, बेशक," व्लादीमिर इल्यीच ने सहमति व्यक्त की, "काफ़ी बड़ा हो चुका है। पर सबसे अहम बात यह है कि चेतनाशील है।" यह कहकर लेनिन मेज़ से उठकर किताबों की अलमारी के पास गये।

"और यह लीजिये आपकी टीम को मेरा छोटा-सा उपहार।"

अलमारी का शीशा लगा किवाड़ खुला और लड़कों के पैरों के पास लाल-नीले रंग की सुनहली धारीवाली गेंद लुढ़कती आ रुकी।

"यह भी फ़ुटबाल नहीं है," लेनिन ने कहा, "लेकिन मेरे ख़्याल से इससे खेला जा सकता है। क्या राय है सबसे बड़े विशेषज्ञों की?"

लड़के पुलकित हुए गेंद को देखते रहे, पर कुछ बोले नहीं।

"अरे, हिचकिचाओ नहीं!" व्लादीमिर इल्यीच ने कहा और गेंद उठाकर उसे ऊंचा उछाल दिया।

केवल इसके बाद ही बच्चों के तीन जोड़ी हाथ उस बिलकुल नयी गेंद के इर्द-गिर्द एक दूसरे से गुंथे।

"अच्छा, अब आप लोग जा सकते हैं। देखा अभी और कितने लोग इंतज़ार कर रहे हैं?" लेनिन ने पूछा।

"देखा।"

"अब समझ गये ना? और शायद वे यतीमख़ाने के बच्चे भी आना चाहते होंगे, वही जिनके लिए आप लोग उपहार तैयार कर रहे हैं।"

लड़के लेनिन के कार्य-कक्ष से बाहर निकले, उनके तेज़ क़दमों की आहटें आना बंद हो गयीं, क्रेमलिन के गलियारों में खो गयीं।

लेनिन के कमरे में एक के बाद दूसरा मुलाक़ाती जाता और निकलता रहा। व्लादीमिर इल्यीच उनमें से प्रत्येक की बात ध्यानपूर्वक मुनते रहे, उससे स्वयं भी प्रश्न पूछते रहे, पर साथ ही कार्य-कक्ष में चहलक़दमी करते हुए कनखियों से खिड़की की ओर भी देखते रहे। उन्हें यह देखने की बहुत इच्छा हो रही थी कि लड़के अपने जीवन की पहली असली गेंद से कैसे खेलते हैं।

लड़के काफ़ी देर तक अहाते में नज़र नहीं आये। लेनिन को बहुत आश्चर्य हुआ। लेकिन फ़ुटबाल का खेल अन्तत: शुरू होने पर उन्हें और भी अधिक आश्चर्य हुआ। लड़के अपनी उसी फटी-पुरानी गेंद से खेल रहे थे। नयी गेंद

पटरी पर रखी हुई थी और उसकी सुनहली धारी वर्षा व बर्फ़ में हलकी-हलकी चमक रही थी।

"कुछ समझ में नहीं आता!.." व्लादीमिर इल्यीच उलझन में पड़ गये। जब अन्तिम मुलाक़ाती चला गया, तो उन्होंने सचिव को बुलाया और उसे खिड़की के पास ले गये।

"सब स्पष्ट है, व्लादीमिर इल्यीच। वे उसे संभालकर रखे हुए हैं। आजकल ऐसे उपहार रोज़ाना कहां मिला करते हैं।"

"मानता हूं। रोज़ाना नहीं मिलते। फिर भी कृपया आप नीचे उतरकर उनसे कहिये कि वे नयी गेंद से ही खेलें, वरना मैं बुरा मान जाऊंगा।"

सचिव बाहर चला गया। कुछ मिनट बाद वह लौटा और लेनिन के कार्य-कक्ष का दरवाज़ा थोड़ा-सा खोलकर बोला:

"कल अगर मौसम थोड़ा सूखा रहेगा, तो वे नयी गेंद से खेलेंगे, व्लादीमिर इल्यीच। यह तय हो चुका है। आपसे मिलने के लिए यतीमख़ाने के बच्चे आ गये हैं। आने दूं?"

"हां, हां! ज़रूर।"

जब तक बच्चे अंदर आये, लेनिन ने एक बार और खिड़की पर नज़र डाली, जिसके बाहर तेज़ी से अंधेरा छाने लगा था।

अहाते में अब कोई नहीं रहा था। पनपत्थर रूपी इने-गिने नन्हे द्वीपों पर कभी वर्षा की बौछारें पड़ रही थीं, तो कभी बर्फ़ की।

सन् 21 का अक्तूबर माह चल रहा था।
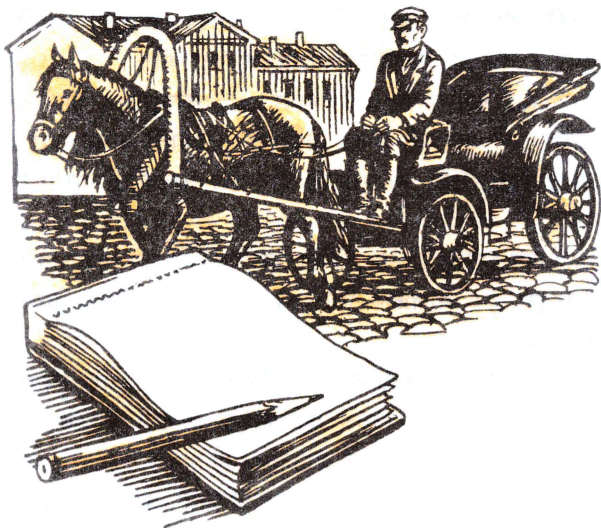
रिपोर्टर

लेनिन कहीं भी क्यों न जाते, सवारी में या पैदल, हर समय, हर जगह एक अजीब-सा दिखनेवाला आदमी खामोशी से उनके साथ लगा रहता। न जवान, न बूढ़ा, न उदास और न ही हंसमुख। लेनिन चुपचाप उसको ध्यान से देखते रहते और सोचते रहते: "कौन है यह? किसलिए और कहां से आया है? कहीं सुरक्षा-दल का तो नहीं है? द्ज़ेर्झींस्की से कहना पड़ेगा कि वह मुझे इन अंगरक्षकों से छुटकारा दिलाये।"

लेकिन लेनिन उस रहस्यमय अपरिचित पर ज्यों-ज्यों ग़ौर

से नज़र रखते रहे, त्यों-त्यों अपने अनुमानों में और भी ज़्यादा उलझते गये। एक बार उनसे रहा न जा सका और वे पूछ बैठे:

"माफ़ कीजिये, साथी, आप हर समय यह क्या लिखते रहते हैं?"

"समाचारपत्र के लिए रिपोर्ट लिखता रहता हूं। मैं रिपोर्टर हूं, व्लादीमिर इल्यीच, 'प्राव्दा' का।"

"रिपोर्टर हैं?! पर मैं तो कुछ और ही सोच रहा था। और सच मानिये, मैं आपके ख़िलाफ़ शिकायत भी करना चाहता था। लेकिन एक सहकर्मी के नाते मुझे फ़िलहाल आपसे कोई शिकायत नहीं है। बस इतनी कृपा कीजिये, सदा सटीक लिखिये और समयनिष्ठ रहिये। हमारे काम में किसी तरह की ढील अच्छी नहीं होती।"

"पूरी कोशिश करूंगा, व्लादीमिर इल्यीच।"

और वास्तव में 'प्रावदा' में सभी समाचार बिना व्यर्थ के शब्दों के, रिपोर्टर की ओर से अपना कुछ जोड़े बिना प्रकाशित हो रहे थे। त्र्योखगोरका* की महिला-बुनकरों के समक्ष दिये लेनिन के भाषण के बारे में, मास्को के अंचल में स्थित एक गांव की उनकी यात्रा के बारे में, जहां रूस में निर्मित पहले ट्रैक्टर ने फकफक नीला धुआं छोड़ते हुए काली मिट्टीवाली भूमि की पहली परतें उलटी-पलटी थीं, रेलवे डिपो के कौम्सोमोल-मेम्बरों के साथ उनकी बातचीत के बारे में...

---

* त्र्योखगोरका — वर्तमान मास्को की 'त्र्योखगोरनया मनुफ़क्तुरा' फ़े० ए० द्ज़ेर्झीन्स्की नामक सूती कपड़ा मिल। सन् 1799 में स्थापित।

फिर भी एक बार चूक हो ही गयी।

लेनिन एक महत्त्वपूर्ण सभा में भाषण दे रहे थे। भाषण समाप्त होते ही एकाएक उसी रिपोर्टर ने उनके पास आकर पूछा:

"व्लादीमिर इल्यीच, आपने आज जो कुछ अपने भाषण में कहा, उसे कृपया संक्षेप में दोहरा सकते हैं?"

"क्या मतलब है आपका? आख़िर आप कहां थे?"

"मुझे देर हो गयी..."

"मैं समझा नहीं..."

"देर से पहुंचा, व्लादीमिर इल्यीच। ट्रामें नहीं चल रही हैं, बिजली ही नहीं आ रही है सारे रुट पर।"

"फिर आप कैसे आये? पैदल चलकर आये हैं न?"

"ऐसे ही। पहले लम्बे-लम्बे डग भरकर चलता रहा, फिर थक गया, और..."

लेनिन ने झेंप रहे रिपोर्टर को ग़ौर से देखा और उनका पहली बार इस बात पर ध्यान गया कि वह 'न जवान, न बूढ़ा' नहीं, बल्कि बूढ़ा, बहुत ही बूढ़ा और सफ़ेद बालोंवाला आदमी है।

"कुछ भी हो, देर से आना शोभा नहीं देता।"

रिपोर्टर तुरन्त और ठीक से नहीं समझ पाया कि लेनिन मज़ाक़ कर रहे हैं या गम्भीरता से बात कर रहे हैं।

लेकिन व्लादीमिर इल्यीच मज़ाक़ नहीं कर रहे थे। उन्होंने रिपोर्टर पर एक बार फिर नज़र डालकर बिना लेशमात्र व्यंग्य के कहा:

"चलिये अब एक तरफ़ हटकर लिख लें कि मज़दूरों और मुझ में किस बारे में बातचीत हुई थी।"

वे दोनों तेज़ी से ख़ाली हो रहे वर्कशाप के छोटे-से दफ़्तर में गये और वहां से बाहर जल्दी नहीं निकले।

शाम की पाली काफ़ी पहले शुरू हो चुकी थी, वर्कशाप में फिर शोर होने लगा था, धुआं उठने लगा था, पर लेनिन और रिपोर्टर की बातचीत बराबर जारी थी। सच कहा जाये, तो उनमें से एक बोल रहा था, जबकि दूसरा बड़ी मुश्किल से पैड के पन्ने उलटता जल्दी-जल्दी लिखे जा रहा था।

लेनिन ने जब लिखवाना बंद किया, तो रिपोर्टर का पैड भी पूरा भर चुका था।

"कितने अफ़सोस की बात है," लेनिन बोले, "सिर्फ़ एक पन्ना कम पड़ गया। दुर्भाग्य से मेरे पास भी कोई पन्ना नहीं है!"

"व्लादीमिर इल्यीच, आप बोलिये, मैं सब याद रखूंगा और सम्पादकीय कार्यालय में जाकर सब शब्दश: लिख लूंगा," रिपोर्टर ने अनुरोध किया।

उसी समय दफ़्तर का दरवाज़ा हौले से खुला। वर्कशाप-इनचार्ज अंदर आया और उसने रिपोर्टर की ओर एक तेल से चिकटा, हरा, लाइनोंवाला काग़ज़ का टुकड़ा बढ़ाया, जो शायद आर्डर-फ़ार्म था।

"नहीं, नहीं, यह मेरे लिए है." लेनिन ने उसे रोक दिया।

व्लादीमिर इल्यीच ने झटके से स्टूल अपनी ओर खींची, वर्कशाप-इनचार्ज की छोटी-सी, चरमराती मेज़ पर बैठकर हरे काग़ज़ पर जल्दी-जल्दी कुछ लिखा और उसे रिपोर्टर की ओर बढ़ा दिया।

"यह लेकर कल ही जन-कमिस्सारों की सोवियत प्रबंध-निदेशक के पास चले जाइये।"

इतना कहकर व्लादीमिर इल्यीच ने वर्कशाप-इनचार्ज और रिपोर्टर से हाथ मिलाया और चले गये।

कुछ मिनट बाद धुएं से भर गये छोटे-से दफ़्तर से रिपोर्टर भी चला गया। अगले दिन सुबह वह लेनिन का परचा लेकर जन-कमिस्सारों की सोवियत में गया। उस नोट में लिखा था कि 'प्रावदा' के संवाद्दाता को एक घोड़ागाड़ी दे देनी चाहिए, कि वह जवान नहीं है और उसके लिए दिन-भर समाचारपत्र के काम से दौड़ते-भागते रहना मुश्किल है।

लेनिन ग़लती पर थे, शायद जीवन में पहली बार, रिपोर्टर ने कभी अपने आपको इतना जवान और उत्साही महसूस नहीं किया था, जितना कि उस दिन।
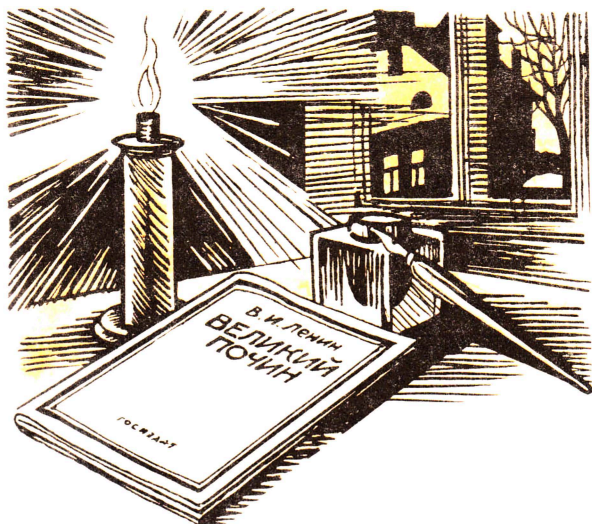
शुभकामनाओं सहित

रविवार शाम के समय वसीली सेर्गेयेविच बर्मीन के दरवाज़े पर किसी ने कुछ अजीब ढंग से दस्तक दी। प्रोफ़ेसर के परिवार में इस तरह से कोई भी दस्तक नहीं दिया करता था।

"कौन है?" मरीया पावलोव्ना ने दरवाज़ा खोले बिना पूछा।

आगंतुक का स्वर उसकी दस्तक से भी अधिक विनम्र था।

"मैं नहीं जानता कि आपको कैसे बताऊं। साथी बर्मीन के साथ मेरी मामूली-सी जान-पहचान है।"

ताला खुला। ओवरकोट का कालर उठाये एक दरमियाने क़द का आदमी सीढ़ियों में व्याप्त नीलाभ धुंधलके से निकलकर मरीया पावलोवना के सामने आया।

"साथी बर्मीन घर पर हैं?"

"वसीली सेर्गेयेविच एक मरीज़ को देखने गये हैं। आपको कोई तकलीफ़ है?"

"डाक्टर कहते हैं कि मुझे हज़ारों तरह की बीमारियां हैं, लेकिन जहां तक मेरी तकलीफ़ का सवाल है, तो वह है मेरा दुर्भाग्य। मैं बस साथी बर्मीन से मिलकर उनसे दो-एक बातें कहना चाहता था। पर बहुत खेद है कि वे घर पर नहीं मिले।"

"उनका इंतज़ार कर सकेंगे? उन्होंने देर न लगाने का वादा किया था। आज आखिर रविवार है, हालांकि बेशक कुछ भी हो सकता है।"

"सच कहूं, तो मुझे भी और ढेरों काम करने हैं।"

"खैर, जैसी आपकी इच्छा।"

"अगर तकलीफ़ न हो, तो मेहरबानी करके क़लम-दवात दे दीजिये।"

"वसीली सेर्गेयेविच की मेज़ यह रही। यहां आपको सब मिल जायेगा।"

मरीया पावलोवना छींट के परदे के पीछे ओझल हो गयीं और शीघ्र ही तांबे का ऊंचा किरासिन-लैंप लिये लौट आयीं। लैंप की टिमटिमाती रोशनी से छोटे-से, फ़र्नीचर

से भरे कमरे में नुकीली परछाइयां हर कोने में हिलने-डोलने लगीं।

"यहां बैठकर लिख लीजिये।"

"धन्यवाद।"

गृहस्वामिनी फिर परदे के पीछे चली गयीं। अपरिचित मेज़ पर बैठ गया और धुंधले पड़े, तुषाराच्छादित खिड़की के शीशे को ताक़ता कुछ सोचने लगा।

"अजीब बात है!" मरीया पावलोवना ने सोचा: "कह तो रहा था कि जल्दी में हूं, पर अब ख़ुद ही..."

उस व्यक्ति ने जैसे उनके मन की बात भांप ली और क़लम काग़ज़ पर जल्दी-जल्दी चलने की आवाज़ आने लगी। मिनट-भर बाद ही वह उठकर परदे के पास आया और विदाई लेने लगा।

"मैंने आपका फ़र्श अपने जूतों से गंदा कर दिया और शायद बहुत ही बेवक़्त आ टपका।"

"अरे, आप भी क्या कहते हैं!" गृहस्वामिनी ने संयत किन्तु शिष्टतापूर्ण स्वर में कहा। "हमारे यहां तो लोग हमेशा ही आते रहते हैं।"

"फिर भी मुझे बहुत अटपटा महसूस हो रहा है, तिस पर आप लोग, जैसा कि मैं देख रहा हूं, बहुत तंगहाली में रह रहे हैं। और तकलीफ़ भी होती ही होगी। आपके पास कितने कमरे थे पहले?"

"पांच।"

"और अब?"

"एक।"

"देख लीजिये, मतलब तकलीफ़ है।"

"लेकिन इसका भी अपना एक कारण है।"

"क्या?"

"क्रान्ति। भला सब कुछ पलक झपकते ठीक हो सकता है। आपका क्या ख़्याल है?"

"सच कहूं, तो मैं भी कुछ ऐसा ही सोचता हूं, लेकिन प्रोफ़ेसर बर्मीन आख़िर कोई बूर्जुआ तो हैं नहीं। उनके हाथों में जादू है। वे बहुत काम करते हैं।"

"यह सच है," गृहस्वामिनी ने ठंडी सांस लेकर कहा। "सच कहूं, तो मैं अगर सरकार में होती, तो मैं उनको काम करने के लिए कम-से-कम एक और कमरा ज़रूर दे देती।"

"क्रान्ति के बावजूद?"

"हां।"

"मैं आपसे पूर्णतः सहमत हूं। और मुझे पूरा विश्वास है कि जैसे ही क्रान्ति थोड़ी और अधिक समृद्ध होगी, वैसे ही वह साथी बर्मीन जैसे लोगों के मामले में थोड़ी उदारता बरतने लगेगी।"

"आपको इसका पूरा विश्वास है?"

"पूरा!"

"ईश्वर आपको सदा स्वस्थ्य रखे!"

"मैं दावे के साथ कहता हूं कि आप ईश्वर में भी आस्था नहीं रखती हैं," अपरिचित ने देहलीज़ लांघते हुए मुस्कराकर कहा।

"उसका नाम तो ज़बान पर चढ़ा हुआ। ख़ैर, फिर भी अपने पति से आपके बारे में क्या कहूं?"

"सब वही कहिये, जैसे हुआ है: कि बेवक़्त आ

धमका, परेशान कर दिया और बहुत ही जल्दी में था। लेकिन अगर सच कहूं, तो एक बात ऐसी है, जिससे मेरा दोष कुछ कम हो जाता है—मैं वास्तव में बहुत ही व्यस्त हूं और रविवार के दिन तो ख़ास तौर से और भी ज़्यादा। नमस्कार!"

"नमस्कार," मरीया पावलोवना हैरानी के साथ कंधे उचकाकर बोलीं।

•

वसीली सेर्गेयेविच उस दिन आशा से कहीं ज़्यादा देर से घर लौटे।

मरीया पावलोवना को अपने सदा व्यस्त रहनेवाले पति पर थोड़ा गुस्सा भी आने लगा था। वे इन्हें उस अजीब-से मुलाक़ाती के बारे में बताना भी भूल गयीं।

केवल सुबह ही जब प्रोफ़ेसर अपनी क्लीनिक जाने की तैयारी कर रहे थे, तभी उन्हें अपनी मेज़ पर एक अपरिचित पुस्तक रखी नज़र आयी।

'लेनिन। महान शुरूआत'...* उन्होंने जिल्द पर छपा नाम पढ़ा।

उसके मुख-पृष्ठ पर लेखक की ओर से शुभकामनाओं सहित सन्देश लिखा था।

"कल हमारे यहां यह कौन आया था, वसीली?" मरीया पावलोवना ने पति से पूछा। "कैसा इनसान है वह?"

---

* 'महान शुरूआत'—गृह-युद्ध के दौरान मज़दूरों के वीरतापूर्ण कार्यों के बारे में व्ला० इ० लेनिन की कृति, जिसमें उन्होंने कम्युनिस्ट श्रमदान और श्रम के प्रति नये, कम्युनिस्ट दृष्टिकोण के महत्त्व को दर्शाया है।

“बिलकुल ठीक कहती हो, मरीया, इनसान ही है वह! कितनी होशियर हो तुम, हमेशा सबसे अच्छा, बिलकुल सटीक शब्द खोज लेती हो!” फिर कुछ सोचकर बर्मीन आगे बोले: “सही माने में असली इनसान है वह, उन सबसे कहीं बढ़कर, जो मैंने आज तक अपनी सत्तर बरस की उम्र में देखे हैं।”
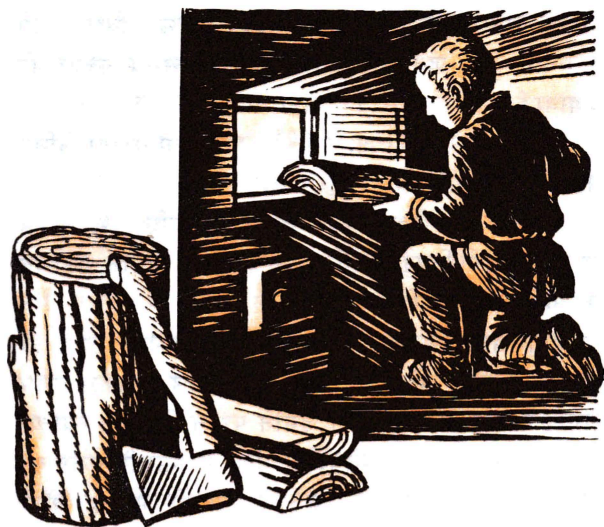
ललसरा ल्योंत्या

मां-बाप का साया सिर से उठ जाने के कारण ल्योंत्या को यतीमख़ाने में रहना पड़ा। लड़के की ज़िंदगी यहां भी आसान न थी। खाने को रोज़ाना केवल सुखायी हुई काली डबल-रोटी और पनीला सूप ही मिलता था। ऊपर से ड्यूटी, झाड़ना-बुहारना और मिस्त्री का काम भी करना पड़ता था।

"कुछ भी हो, यह कम-से-कम सड़क पर पड़े रहने से तो बेहतर है", ल्योंत्या सोचा करता था, "यहां किसी तरह गुज़र तो हो सकती है।"

अनाथ लड़के को उस दिन कुछ विशेष ही प्रसन्नता हुई, जब संचालक ने खाने के समय बच्चों को बताया :

"हमारे लिये सूजी आ गयी है। पूरी एक बोरी। लेनिन की ओर से।"

संचालक ने केवल कहा ही नहीं, बल्कि भंडार में से बोरी खींच निकाली और उसे बच्चों के सामने बड़े गर्व के साथ खोलकर दिखाया।

यतीमखाने के सभी बच्चे बोरी के इर्द-गिर्द जमा हो गये। हर कोई बोरी के अंदर हाथ डाल-डालकर देखने लगा, लेकिन एक भी दाना ज़मीन पर न बिखरा। ल्योंत्या संचालक की फैली उंगलियों के बीच से झरती सूजी को देखता हैरान होता रहा कि भूखे मास्को में यह बोरी आखिर आ कहां से गयी।

अगले दिन ही एक और चमत्कार हो गया। बच्चों को हम्माम में भेजने के लिए तैयार करते समय उपप्रबंधक ने प्रत्येक को साबुन का एक-एक टुकड़ा भी दिया। बर्च की पत्तियों की खुशबूवाले पानी से सराबोर ल्योंत्या ने अपने साथ नहा रहे लड़के से कहा :

"लेनिन अगर नये कपड़े भी दिलवा दें, तो कैसा रहे? मज़ा आ जाये!"

"'मज़ा आ जाये!' उसके साथी ने उसकी नक़ल उतारी और शरारती ढंग से साबुन का फेन ल्योंत्या की आंखों में फेंक मारा। "बकवास बंद करो और पहले अपने चकत्ते धोकर साफ़ करो।"

लेकिन कपड़े बदलने के कमरे में जब लड़कों

ने उपप्रबंधक को सफ़ेद-झक कपड़ों ढेर लिये आते देखा, तो उनके आश्चर्य का पारापार न रहा।

"लो, बच्चो, नयी वरदियां। सैनिकों की हैं। ख़ुद साथी लेनिन ने भिजवायी हैं।"

ल्योंत्या को सबसे ज़्यादा ख़ुशी हुई। हालांकि उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि उनके कपड़ों का इंतज़ाम लेनिन ने स्वयं करके उन्हें दूसरे के हाथों क्यों भिजवाया है, लेकिन उस समय सोच-विचार के लिए फ़ुरसत कहां थी। उपप्रबंधक ने कहा कि यतीमख़ाने के बच्चों को तीन मिनट में हम्माम खाली करना है।

कमीज़ें लड़कों के लिए बड़ी थीं, ख़ास तौर से ल्योंत्या के लिए, लेकिन कड़ाके की ठंड में सिकुड़ते हुए, लम्बे लम्बे डग भरते वह हम्माम में गरमाये बदन को देर तक गरम रखने की कोशिश करता, अपने सौभाग्य के बारे में सोचता हुआ मुस्कराता रहा, क्योंकि नहीं जानता था कि सौभाग्य और कैसा हो सकता है। 'क्या सौभाग्य इसी को कहते हैं, जब आदमी को ठंड नहीं लगती है? वह भी हम्माम के बाद ही नहीं, बल्कि रोज़ाना?' इन्हीं विचारों में मग्न वह यतीमख़ाने में पहुंचा और वहीं उसे बाद में काफ़ी देर तक, पूरी शाम, पूरी रात गरमाते रहे, जब तक कि सुबह कंबल से निकलने का समय न हो गया। उठते ही वह बोला:

"अब फिर हम्मान जाते तो कितना अच्छा होता..."

यह एक दुखभरा मज़ाक़ था, लेकिन उसके प्रत्युत्तर

में तुरन्त कई आवाज़ें एक साथ आयीं :

"वाह् रे, नये लड़के! ललसरा है, पर बात अक़्ल की करता है!"

ल्योंत्या ने कुछ जवाब नहीं दिया, उसे रूठने की इच्छा हुई, पर अवसर न मिल पाया। उसी समय संचालक कमरे में आ पहुंचा और उसने जल्दी-जल्दी कपड़े पहन चुके बच्चों को एक क़तार में खड़ा करके ऐलान किया कि "संरक्षक" आ रहे हैं। "संरक्षक" शब्द का अर्थ ल्योंत्या को ठीक से मालूम न था, बल्कि सच कहा जाये, तो बिलकुल मालूम न था। उसने हाथ भी उठाया संचालक से पूछने के लिए, पर कोई उसी वक़्त उसका हाथ नीचा करके उसके कान में फुसफुसाया :

"संरक्षक यानी जलावन की लकड़ियां!"

ल्योंत्या के पीछे से हंसी गूंज उठी, लेकिन शाम को उसने दूसरे लड़कों के साथ मिलकर "आपका स्वागत है, प्रिय संरक्षको!" पोस्टर तैयार किया।

"संरक्षक"—पड़ोस के एक कारख़ाने के दस-बारह मज़दूर शनिवार को जब पहुंचे, तो लड़के मेज़ पर बैठे अपनी ख़ाली रकाबियां खड़खड़ा रहे थे। ऐस्प की लकड़ियां गीली थीं। शाम का खाना पकने में हमेशा की तरह देर हो रही थी।

घर के बने नमदे के बूट पहने एक अधेड़ उम्र की स्त्री लड़कों के पास आयी।

ल्योंत्या को अपनी मां की याद नहीं थी, लेकिन उस समय न जाने क्यों उसे लगा कि वह भी उस स्त्री जैसी ही थी—मुस्कराती रहनेवाली, कंधे थोड़े झुके हुए, बाल

अधपके। उसके हाथ भी शायद वैसे ही थे—खुरदरे, सांवले, काम के मारे थके हुए।

नारी कुछ क्षण मौन रहकर उनकी ख़ाली रकाबियों में झांककर बोली:

"सुनो, बच्चो। आज से तुम में से हरेक का अपना परिवार हो जायेगा। समझ गये?"

"नहीं, नहीं समझे..." ल्योंत्या ने ऐसे उत्तर दिया, मानो प्रश्न उसी से किया गया हो।

"इसमें समझने की क्या बात है? हम अभी सबको अपने अपने घर ले जायेंगे। तुम लोगों के लिए यह कुछ बेहतर ही होगा।"

"हमेशा के लिए ले जायेंगे या ऐसे ही?" दूर के कोने से एक आवाज़ आयी।

"फ़िलहाल तो रविवार के लिए ले जायेंगे, उसके बाद देखा जायेगा। तैयार हो?"

लड़कों के पीछे खड़ा संचालक उन्हें इशारा कर रहा था, पर वे कुछ न समझ पा रहे थे कि क्या कहें। वे केवल उसी स्त्री को ताक रहे थे।

"हां, तो क्या ख़्याल है?" उस स्त्री ने अपना प्रश्न दोहराया।

"मौन सहमति का सूचक है!" संचालक ने उन सबकी ओर से उत्तर दिया।

किसी ने राहत की सांस ली:

"बिलकुल ठीक कहा।"

"देखा, कितनी अच्छी बात है!" नमदे के बूटोंवाली स्त्री ने संचालक की ओर मुड़कर कहा। "और आप

सोमवार तक इस कमरे को थोड़ा गरम रखने का इंतज़ाम कर लीजिये। सूखी लकड़ियां आज ही आ जायेंगी। हमारे ढलाईख़ाने के लोग ख़ास तौर से श्रमदान पर गये हैं।"

"गरम कर लूंगा," संचालक ने उत्तर दिया और "संरक्षकों" को आगे रसोईघर, सोने के कमरे और वर्कशाप में ले गया।

"संरक्षकों" ने सारे कमरे देखे, यतीमख़ाने का कोना कोना छान मारा और कुछ नोट करके चले गये। उनमें से प्रत्येक दो-तीन लड़कों को अपने साथ ले गया।

यतीमख़ाने में अचानक अजीब-सा सूनापन छा गया और कुछ ज़्यादा ही ठंड महसूस होने लगी।

संचालक जब सबको विदा करके वापस अंदर आया, तो उसका ध्यान सोने के कमरे के अंधेरे कोने में अकेले उदास बैठे ल्योंत्या पर तुरन्त न गया।

"अरे, तुम्हें क्या हुआ? कहां थे तुम?!" संचालक कह उठा।

"मैं कहीं नहीं जानेवाला," ल्योंत्या ने उदासीनता से कहा।

"आख़िर ऐसा क्यों? यह क्या सनक है तुम्हें?.."

"कोई सनक नहीं है। मुझे यहीं ज़्यादा अच्छा लगता है। मैं ड्यूटी पर हूं। कल आपके साथ अंगीठी जलाऊंगा।"

"ड्यूटी पर हो?" संचालक को आश्चर्य हुआ। "वैसे यह भी अच्छी बात है। यहां मुझ अकेले से भी काम नहीं निबट पायेगा।"

रात देर गये ल्योंत्या और संचालक ने मिलकर

दलाईखानेवालों द्वारा स्लेज में लायी लकड़ियां उतारीं, उन्हें फाड़ा और ड्योढ़ी में उनकी ढेरियां लगायीं। वे दिन निकलने से थोड़ी देर पहले ही सोने गये।

उस रात, सच कहा जाये, तो रात के बाक़ी बचे हिस्से में ल्योंत्या को एक अद्‌भुत सपना दिखाई दिया।

...ख़ाली पड़े पलंगों से उठाये तीन कम्बल ओढ़े लेटे ल्योंत्या के बदन में गरमी आयी ही थी कि किसी ने बाहर के दरवाज़े पर दस्तक देनी शुरू कर दी। "क्या हमारे लड़के 'संरक्षकों' के यहां से इतनी जल्दी लौट आये हैं?" वह कम्बलों से निकालकर नंगे पैर ही दरवाज़ा खोलने बाहर लपका। ज़ंग लगी कुंडी खोलते ही वह दंग रह गया: उसके सामने देहलीज़ पर लेनिन खड़े थे, बिलकुल वैसे ही रूप में, जिस रूप में वह उनकी अरसे से कल्पना करता रहा था। लम्बा क़द, फ़ौजी ओवरकोट और ऊंचे बूट पहने। उन्होंने अंदर आकर नमस्ते की और पूछा:

"तुम कौन हो?"

"मैं ल्योंत्या हूं। हमारे सब दोस्त संरक्षकों के यहां गये हैं।"

"संरक्षकों के यहां? पर तुम क्यों नहीं गये?"

"मैं ड्यूटी पर हूं।"

"ड्यूटी पर? अच्छा, चलो मुझे अपना ठिकाना तो दिखाओ ज़रा।"

ल्योंत्या लेनिन को कमरों में ले गया।

"यह हमारा वर्कशाप है। यह है भोजनालय। यह रहा सोने का कमरा। आपने देखा, हमारे संचालक कैसे घोड़े बेचकर सो रहे हैं? उन्हें जगाइये नहीं, बहुत ही थके हुए

हैं वे। सारी रात मेरे साथ संरक्षकों द्वारा भेजी गयी लकड़ियां फाड़ते रहे थे।"

लेनिन ने अपनी कसी मुट्ठियों पर फूंकें मारीं और सिकुड़ गये।

"अरे, यहां तो बहुत ठंड है! तुम्हारी लकड़ियां कहां गयीं?"

"हम दोस्तों के आने के कुछ ही पहले अंगीठी सुलगाना चाहते थे, ताकि कमरा देर तक गरम रहे, लेकिन चाहें, तो अभी गरम कर सकता हूं।"

"बेशक, अंगीठी सुलगा लो। मैं तो आदी हो चुका हूं, लेकिन तुम यहां बुरी तरह ठिठुर जाओगे और बाक़ी सब लोगों को भी ठंड से जमा दोगे।"

ल्योंत्या अंकवार-भर लकड़ियां उठा लाया और अंगीठी सुलगाकर उसकी लोहे की झिरी के सामने एक बेंच रख दी।

लेनिन ल्योंत्या के पास बैठ गये:

"तुमने क्या नाम बताया अपना?"

ल्योंत्या ने तुरन्त उत्तर नहीं दिया। वह कुछ क्षण मौन रहा और सिकुड़ गया।

"लड़के मुझे ललसरा कहते हैं। लेकिन मेरा असली नाम ल्योंत्या है। संचालक के रजिस्टर में भी यही नाम लिखा है, चाहें, तो देख सकते हैं।"

"मुझे बिना रजिस्टर देखे ही विश्वास है तुम पर। लेकिन फिर भी, ल्योंत्या, संरक्षक तुम्हें अपने साथ क्यों नहीं ले गये?"

"सच-सच बताऊं आपको?"

"बेशक, सच-सच ही बताओ।"

"इसी वजह से कि मैं ललसरा हूं, इसी लिए नहीं ले गये! इतना मैं पक्के तौर से जानता हूं।"

लेनिन हंस पड़े। लेकिन वह ठेस पहुंचानेवाली हंसी नहीं थी, केवल उनकी आंखें ही मन्द-मन्द मुस्करायी थीं।

"तुम्हें नहीं ले गये, ल्योंत्या, यह सचमुच अखरनेवाली बात है, पर इस कारण कि तुम ललसरे हो, यह बिलकुल फ़ालतू की बात है।"

लेनिन कुछ मिनट मौन बैठे रहे, फिर विचारमग्नता में अपनी कनपटियों पर हाथ फेरकर बोले:

"अच्छा, अब, ल्योंत्या, चलो मेरे यहां चलकर चाय पियेंगे। चलोगे?"

"चाय पीने?.. पर आपके यहां चीनी है?"

"चीनी? मेरे ख़्याल से थोड़ी बहुत निकल आयेगी।"

"तो फिर चलिये! मुझे याद नहीं आता कि मैंने पिछली बार कब चाय चीनी के साथ पी थी।"

"जल्दी से कपड़े पहनो! और जहां तक लड़कों का सवाल है, तो मैं उनसे ज़रूर कहूंगा कि वे तुम्हें आगे से कभी ललसरा नहीं, बल्कि सिर्फ़ ल्योंत्या कहकर बुलायें। मंज़ूर है?"

"अहां!.."

बुरे सपने हमेशा अन्त तक दिखाई देते हैं, बल्कि आगे भी चलते रहते हैं। लेकिन अच्छे सपने सदा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और रोचक स्थान पर टूट जाते हैं। उसी तरह यह सपना भी असमय टूट गया।

ल्योंत्या ने पुआल भरे, सरसराते तकिये को इधर-उधर रखकर कम्बलों को ख़ूब अच्छी तरह ओढ़ने की दसियों बार कोशिश की, पर सपना फिर दिखाई नहीं दिया।

ऊपर से फ़र्श के तख़्ते और चर्र-मर्र कर उठे...

ल्योंत्या ने आंखें खोलीं, तो संचालक को अपने सामने खड़ा पाया। वह विजेय भाव से मुस्करा रहा था:

"उठो, ड्यूटीवाले, हमारे लड़के अब आने ही वाले हैं। अंगीठी सुलगाने का समय हो गया! संरक्षकों ने टेलीफ़ोन पर बताया है कि हमारे यहां और लकड़ियां पहुंचा दी जायेंगी।"

ल्योंत्या उचककर उठा और हाथ-मुंह धोने लपका, जैसा कि उसे संचालक ने सिखाया था। हाथ-मुंह धोकर टूटे शीशे में उसने अपनी सूरत देखी और बरबस मुस्करा पड़ा। उसे अचानक लगा कि उसके सिर के बाल लाल हैं ही नहीं। यह तो सूरज की पहली किरण थी, जो उसके अरसे से न कटे बालों की भूल-भुलैयां में खो गयी थी।

आपरेशन

दुश्मनों की गोलियों से हुए घावों ने लेनिन के हृष्ट-पुष्ट शरीर का सन्तुलन काफ़ी लम्बे अरसे के लिए बिगाड़ दिया। लेकिन घाव भरते ही व्लादीमिर इल्यीच ने, जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा, अपनी तबीयत "काफ़ी अच्छी" महसूस की और सक्रिय कार्य में जुट गये। पर सन् 1922 के वसन्त में उनका स्वास्थ्य फिर बिगड़ने लगा। उन्हें सिर-दर्द के दौरे पड़ने लगे और थकाकर निढाल कर देनेवाली अनिद्रा परेशान करने लगी।

लेनिन ने इस बारे में कभी किसी से कुछ न कहा,

केवल यही शिकायत करते रहे कि दिन-भर में वे बस अपना पूर्वनिर्धारित काम पूरा नहीं कर पाते हैं।

"बहुत थक गये हो तुम, वोलोद्या, बहुत ही ज़्यादा थक गये हो," नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना कहतीं। "जानते हो कहां जाना चाहिए तुम्हें अब? आल्पस में। पर्वतारोही की कुल्हाड़ी उठाओ और सफ़र पर निकल पड़ो। तुम्हें पहाड़ों की हवा में सांस लेनी चाहिए कम-से-कम एक हफ़्ते के लिए। मैं जानती हूं कि अभी यह सम्भव नहीं है, लेकिन वादा करो कि मौक़ा मिलते ही..."

"हां, हां, नाद्या, पहला मौक़ा मिलते ही हम दोनों कहीं पहाड़ों में रहने के लिए निकल पड़ेंगे। वैसे अगर ध्यान से सोचा जाये, तो क्रेमलिन भी तो आख़िर पहाड़ी पर बना है। और इसी कारण वहां की हवा भी पहाड़ों की-सी ही है! यहां इन बर्च और फ़र पेड़ों के, पाख़रा नदी की ओर ढलती जा रही इन पगडंडियों के बीच भी तो। इस जगह का नाम 'गोरकी' (पहाड़ियां) भी तो आख़िर कुछ माने रखता है!"

नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना क्रूप्सकाया जानती थीं कि ऐसी हालत में व्लादीमिर इल्यीच लेनिन के साथ बहस करना व्यर्थ है, लेकिन पति के बिगड़ते स्वास्थ्य के कारण उनकी आशंकाएं बढ़ती ही जा रही थीं। वे बड़े से बड़े डाक्टरों से सलाह करके उनसे व्लादीमिर इल्यीच को कष्टों से मुक्ति दिलाने के लिए कारगर से कारगर उपाय करने को कह रही थीं।

डाक्टरों का कहना था कि लेनिन के सारे कष्टों का कारण उनका अत्यधिक कार्य-भार है और निस्सन्देह घावों

के दुष्परिणाम अभी काफ़ी समय तक उन्हें परेशान करते रहेंगे।

जैसा कि ज्ञात है, व्लादीमिर इल्यीच को दो गोलियां लगी थीं। उनमें से एक हंसली को चकनाचूर करके छाती में काफ़ी अंदर धंसी हुई थी। दूसरी बायें फेफड़े के शीर्ष को बेधकर गर्दन की मांस-पेशियों में घुसी हुई थी।

अप्रैल में जब लेनिन की हालत फिर बिगड़ने लगी थी, तब बर्लिन से एक चिकित्सक प्रोफ़ेसर क्लेंपेरेर को बुलवाया गया था। वे तुरन्त मास्को आ पहुंचे थे। लेनिन की जांच करके उन्होंने दूसरी गोली निकाल देने की सलाह दी थी, क्योंकि उनके मतानुसार सिर-दर्द उसी के कारण होता था। बर्लिन के एक अन्य सर्जन, प्रोफ़ेसर बोरहार्ड्ट और हमारे एक विशेषज्ञ रोज़ानोव ने जो स्वयं अत्यन्त अनुभवी शल्य-चिकित्सक थे, इस बारे में तुरन्त अपना मत हां या नहीं में व्यक्त नहीं किया था। बात यह है कि मानव शरीर में घुसी गोली को ऊतक किसी भी अन्य विजातीय वस्तु की भांति अच्छी तरह लपेटकर ढक देते हैं। लेकिन विजातीय वस्तु आखिर विजातीय ही होती है।

"हम सब मिलकर सोचेंगे और हरेक अलग से भी सोचेगा," तीनों चिकित्सकों के पहले दिन के विचार-विमर्श के बाद रोज़ानोव ने कहा। "इस बारे में सोचने-समझने को काफ़ी कुछ है।"

लेनिन को जब यह बात बतायी गयी, तो वे बोले:

"चलिये इसके 'पक्ष' और 'विपक्ष' के सारे तर्कों को तौल लें। डाक्टर भी आपस में सलाह-मशविरा करें और उनका रोगी भी सोच-विचार कर ले।"

यही बात तय हो गयी।

उस रात लेनिन लगातार कई घंटों तक चिकित्साशास्त्र की पुस्तकों के पृष्ठ उलटते-पलटते रहे। उन्होंने पुस्तकों में स्थान-स्थान पर बुकमार्कर लगाये, कई बातें नोट कीं और सुबह प्रसन्नचित्त स्थिति में नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना से डाक्टरों को यह कह देने को कहा कि अब वे आपरेशन करने के लिए उनके पीछे न पड़ें।

"क्लेंपेरेर फिर भी आपरेशन करने पर ज़ोर दे रहे हैं, वोलोद्या। और प्रोफ़ेसर बोरहार्ड्ट भी क्लेंपेरेर के दृष्टिकोण से सहमत हो गये हैं।"

"और रोज़ानोव?" व्लादीमिर इल्यीच ने पूछा। "वे तो, जहां तक मैं समझा हूं, आपरेशन के पक्ष में बिलकुल नहीं हैं, बल्कि उलटे उसका विरोध कर रहे हैं।"

"मैंने अभी-अभी उनसे बात की है। उन्होंने कहा कि अन्तिम निर्णय वे आपसे बात करने के बाद ही करेंगे। वैसे तुम क्या जानना चाहते हो कि उनकी राय क्या है?"

"उन्होंने सोचने-विचारने का वादा किया है, नाद्या।"

"उन्होंने सोच लिया, वोलोद्या। सारी रात सोचते रहे। कहते हैं. सब कुछ तुम पर निर्भर करता है। उनका सारा अनुभव, सारा कौशल हमारी सेवा में है।"

"डाक्टर आखिर इतने नरम कब से हो गये हैं? मेरे जीवन में तो ऐसा पहली बार हुआ है!"

"यह एक विशेष घटना है, वोलोद्या। एक असाधारण घटना। रोज़ानोव कई बार ज़ोर देकर कह चुके हैं कि सब कुछ तुम पर निर्भर करता है। एक घंटे में वे टेलीफ़ोन करके तुम्हारे निर्णय के बारे में पूछेंगे।"

लेनिन ने घड़ी पर नज़र डाली:

"ठीक है। अगर ज़रूरी है, तो मैं इसी समय आपरेशन करवाने के लिए तैयार हूं। उनसे यही कह देना। जहां तक मैं समझता हूं, ज़ाहिर है, विदेशियों को अब जल्दी से जल्दी अपने घर लौट जाना चाहिए।"

"वे दोनों कह चुके हैं कि मास्को में जब तक ज़रूरी होगा रुके रहेंगे।"

ठीक एक घंटे बाद रोज़ानोव का टेलीफ़ोन आया। नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने उन्हें बताया कि व्लादीमिर इल्यीच को उन पर और उनके सहयोगियों पर पूरा भरोसा है। रोज़ानोव ने उत्तर में कहा कि ऐसी सूरत में कल गोलियों की स्थिति की एक बार फिर जैव भौतिकी संस्थान के एक्सरे-कक्ष में जांच की जायेगी और सुबह ही व्लादीमिर इल्यीच को लेने आने की अनुमति मांगी।

अगले दिन निर्धारित समय पर लेनिन और रोज़ानोव संस्थान के लिए रवाना हो गये।

रास्ते में लेनिन ने प्रोफ़ेसर से पूछा:

"आखिर आप, साथी रोज़ानोव, क्यों अपना निर्णय इतनी जल्दी बदल देते हैं? क्यों? मुझे तो आपसे इतनी आशा थी, पर आपने तो हथियार डाल दिये! क्या सोचूं मैं आपके बारे में?"

"व्लादीमिर इल्यीच, हमारे काम में दूसरे कामों की बनिस्बत यह कहावत शायद सबसे ज़्यादा ठीक लगती है—फूंक-फूंककर क़दम रखो। मुझे तो पूरा विश्वास है कि इसे सर्जनों ने ही गढ़ा है।"

"विचार बहुत ही दिलचस्प है, हालांकि नया नहीं

है!" व्लादीमिर इल्यीच ने कहा और कुछ सोचने लगे।

संस्थान के अहाते में कार से निकलते समय लेनिन ने रोज़ानोव पर नज़र डालकर फिर अपनी बात दोहरायी :

"बहुत ही दिलचस्प विचार है। आप कहते हैं, उसे सर्जनों ने गढ़ा है? ज़रूर गढ़ा होगा। वैसे आपको मालूम होना चाहिए कि उसे राजनीतिज्ञ भी गढ़ सकते थे, आपका क्या ख़्याल है? मेरा मतलब ईमानदार राजनीतिज्ञों से है।"

रोज़ानोव का ध्यान किसी और बात में ही लगा हुआ था :

"हमें जल्दी करनी चाहिए, व्लादीमिर इल्यीच। इधर चलिये, कृपया। और अब इधर..."

संस्थान से वे साथ ही वापस लौट रहे थे।

"हां, तो आपको अंदर क्या दिखाई दिया, साथी रोज़ानोव?" लेनिन ने अपने वक्ष को स्पर्श करते हुए कहा। "आख़िर यह तो बहुत पहले से मालूम है कि ये गोलियां कहां और कैसी हालत में हैं। आख़िर वे अंदर घूमती-फिरती तो रहती नहीं हैं?"

"बेशक, घूमती नहीं रहती हैं, व्लादीमिर इल्यीच। लेकिन अपनी स्थिति वे कभी-कभार बदल ज़रूर सकती हैं। इसी लिए तो हमने फ़ैसला किया कि आपरेशन करने से पहले पता लगा लेना चाहिए कि..."

"प्रसंगवश वह कौन-से दिन करना तय हुआ है आपरेशन?" लेनिन ने काफ़ी तटस्थ भाव से पूछा।

"हम आपसे 23 तारीख़ की सुबह के लिए आपकी

सहमति देने का अनुरोध करना चाहते हैं, यानी कल के लिए, व्लादीमिर इल्यीच। आपरेशन स्थानीय निश्चेतक के प्रभाव में किया जायेगा, उसमें कोई तीस-चालीस मिनट लगेंगे। आपरेशन बोरहार्ड्ट करेंगे, मैं उनका सहायक रहूंगा। आप सोल्दातेन्कोव्स्कया अस्पताल में सुबह नौ बजे पहुंच जायेंगे?"

लेनिन इन सब परिस्थितियों से सन्तुष्ट थे। विशेषत: इस बात से कि रोज़ानोव, जिनका वे इतना आदर-सम्मान करते थे, स्वयं आपरेशन में भाग लेंगे।

"आप एक नेक और दयाशील व्यक्ति हैं, साथी रोज़ानोव। कल मेरे लिए बहुत ही व्यस्त दिन है। आप सोच भी नहीं सकते कि कल मुझे कितने काम करने हैं!"

रोज़ानोव ने सिर हिलाकर हठपूर्वक नकारते हुए कहा :

"अगर आप सोचते हैं कि हम आपको तुरन्त छोड़ देंगे, तो यह आपकी बहुत बड़ी भूल होगी, व्लादीमिर इल्यीच। हम जल्दी से जल्दी काम करने की कोशिश करेंगे, पर..."

"मतलब, मैं बेकार ही आपकी प्रशंसा कर रहा था, साथी रोज़ानोव। आप न तो दयाशील ही हैं और न ही नेक।"

"डाक्टरों की न तो प्रशंसा करनी चाहिए और न ही उनके प्रति आभार व्यक्त करना चाहिए, खास कर समय से पहले, व्लादीमिर इल्यीच।"

तेईस तारीख की सुबह लेनिन और रोज़ानोव को लिये कार सोल्दातेन्कोव्सकया अस्पताल के लम्बे अहाते में आकर शल्य-चिकित्सा विभाग के सामने रुकी। मद्धिम

प्रकाशवाले लम्बे गलियारों की भूलभुलैयां को पार करके वे दूधिया प्रकाश से व्याप्त शल्य-चिकित्सा कक्ष में पहुंचे। सफ़ेद रंग की छोटी लोहे की अलमारी पर कुकरौंधे के फूल की तरह स्पिरिट-लैम्प की लौ हिलडुल रही थी। ईथर और कपूर की तेज़ गंध आ रही थी। निकिल की ट्रफ़ में खौलते पानी में सुइयां और नश्तर खदबदा रहे थे।

लेनिन ने डाक्टरों और नर्सों का अभिवादन करके उनसे पूछा कि उन्होंने कहीं ज़्यादा देर तो अपना इंतज़ार नहीं करवाया।

"आप भी कैसी बात करते हैं, व्लादीमिर इल्यीच!" उनमें से किसी के मुंह से निकल गया। "बिलकुल ठीक समय पर आये हैं आप!"

शीघ्र ही लेनिन को आपरेशन की मेज़ पर लिटा दिया गया। उन्होंने निश्चेतक के इंजेक्शन शान्तिपूर्वक लगवाये। चेहरे पर शिकन तक नहीं पड़ी।

उन्हें सफ़ेद चोगोंवाले व्यक्तियों का सधे ढंग से मिलजुलकर काम करना बहुत ही अच्छा लगा। उन क्षणों में वे उन्हें मंत्रमुग्ध-से देख रहे थे, हालांकि लेटे हुए उन्हें सब कुछ अच्छी तरह नज़र नहीं आ रहा था। बहुत-सी बातों का वे अनुमान ही लगा रहे थे क्योंकि डाक्टरों से उनका पहली बार तो पाला पड़ा नहीं था।

एक नर्स के हाथ की तामचीनी की ट्रे में टन्न से किसी भारी चीज़ के गिरने की आवाज़ आयी। "कुछ नहीं, गोली ही है," लेनिन ने सही अनुमान लगाया। "पूरी की पूरी गोली है! नामाक़ूल कहीं की!"

उसी टन्न के बाद रोज़ानोव, बोरहार्ड्ट और आपरेशन

में भाग लेनेवाले अन्य सभी लोगों ने चैन की सांस ली। लेनिन को यह सब भी स्पष्ट सुनाई दिया।

जब लम्बी पट्टियां बांधी जाने लगीं, तो व्लादीमिर इल्यीच ने पूछने की कोशिश की कि काम कैसा चल रहा है, पर उनके सामने खड़ी नर्स ने, जिसकी नज़रें उनसे बराबर टकरा रही थीं, अपने होंठों पर उंगली रखकर संकेत किया, और वे विनयपूर्वक मौन हो गये।

"हां, अब आप पूछ सकते हैं!" न केवल डाक्टरों के काम से, बल्कि लेनिन के व्यवहार से भी स्पष्टत: सन्तुष्ट रोज़ानोव ने कुछ समय बाद कहा। "आप क्या पूछना चाहते थे, व्लादीमिर इल्यीच?"

"मुझे उस कमबख़्त को दिखाइये," लेनिन ने हाथ बढ़ाया।

उनकी हथेली पर वह कमबख़्त गोली रख दी गयी। उन्होंने उसे हौले से उछाला, मानो उसके वज़न का अंदाज़ लगा रहे हों।

"बस यही है! इतनी ज़रा-सी चीज़ के लिए सारे रूस में शोर मचा हुआ था!" व्लादीमिर इल्यीच ने रोज़ानोव की ओर देखा। "और सारे जर्मनी में भी!" उन्होंने बोरहार्ड्ट की ओर नज़र घुमायी।

"आपकी तबीयत कैसी है, व्लादीमिर इल्यीच," रोज़ानोव ने पूछा। "दर्द तो नहीं हो रहा है? थोड़ी देर में ठिठुरन ख़त्म हो जायेगी।"

"मेरी तबीयत? कैसे बताऊं आपको? अच्छी, बिलकुल ठीक, बल्कि बहुत ही अच्छी है, लेकिन बड़ा अटपटा लग रहा है। इतने सारे लोगों को कितना परेशान कर डाला

मैंने! वह भी इस ज़रा-से लोहे के टुकड़े के कारण। किसी ने ठीक ही कहा है—बेवकूफ़ गोली..."

फिर अचानक उन्होंने एक ऐसा प्रश्न पूछ लिया, जिसका सम्बन्ध सीधे रोज़ानोव से ही था:

"मुझे यहां कितने समय रहना होगा, साथी रोज़ानोव? आपने मुझे जल्दी छुट्टी देने का वादा किया था।"

"मैंने ऐसा नहीं कहा, व्लादीमिर इल्यीच, आप शायद मेरी बात ठीक से नहीं समझे।"

"पर फिर भी कितने समय?" लेनिन ने ज़ोर दिया।

"सबसे पहले तो हमें आपको वार्ड में ले जाना होगा, व्लादीमिर इल्यीच। वहीं सारी बातें करेंगे।"

लेनिन को स्ट्रेचर पर लिटाकर दूसरी मंज़िल पर एक अलग वार्ड में पहुंचा दिया गया। यह एक छोटा-सा कमरा था। लोहे का पलंग, छोटी अलमारी और दो कुर्सियां।

सबके जाने और रोज़ानोव के साथ अकेले रह जाने के बाद लेनिन ने तुरन्त उस बात का ज़िक्र छेड़ दिया, जो उन्हें उस समय परेशान कर रही थी:

"अस्पताल में जगह की तंगी है, साथी रोज़ानोव, फिर भी आपने मुझे इतनी ज़्यादा जगह दी है।"

"इतनी तंगी नहीं है, व्लादीमिर इल्यीच। आम बात है..."

"आम बात है? मरीज़ गलियारों में पड़े हुए हैं, मैंने ख़ुद देखा है। नहीं, नहीं, नहीं, मुझे झांसा देने की कोई ज़रूरत नहीं है। फिर मैं आपसे पहले ही कह चुका हूं कि मेरे पास इतना काम है!" उन्होंने गर्दन पर बंधी पट्टी पर हाथ फेरा और उनके चेहरे पर असह्य पीड़ा झलक उठी।

रोज़ानोव ने यह देख लिया :

"देखा आपने? आपरेशन के बाद आराम कर लीजिये, व्लादीमिर इल्यीच। अभी आपके एक इंजेक्शन लगाया जायेगा, आप थोड़ी देर सो लेंगे। जितना ज़्यादा सोयेंगे, उतना ही अच्छा होगा।"

शाम देर गये प्रोफ़ेसर फिर व्लादीमिर इल्यीच के पलंग के सिरहाने बैठे थे।

"आप मुझे अच्छे लगते हैं," रोज़ानोव ने लेनिन की जांच करके कहा।

"और मुझे भी!" लेनिन के पास आए अस्पताल के मुख्य चिकित्सक सोकोलोव ने कहा। "टेम्परेचर सामान्य है, नब्ज़ ठीक चल रही है, और रक्तचाप भी सामान्य होता जा रहा है।"

लेनिन सन्तोष के साथ बोले :

"अगर हम एक दूसरे को इतने अच्छे लगते हैं, तो सब तय कर सकते हैं!"

"आपका तात्पर्य क्या है. व्लादीमिर इल्यीच?" रोज़ानोव ने पूछा।

"बहुत ही सीधी-सी बात है. साथी रोज़ानोव। मैंने आपका कहना माना? माना! इतनी अच्छी नींद सोया, जितनी कि अरसे से नहीं सो पाया था। रात भी मैं ठीक से सोने का वादा करता हूं, पर एक शर्त पर। बहुत ज़रूरी शर्त है।"

"कैसी शर्त, व्लादीमिर इल्यीच?"

"कल अस्पताल में मरीज़ों की संख्या कुछ कम करने की सोचेंगे। मुझे एक अच्छी ख़ासी योजना सूझी है।

शुरूआत बेशक इसी वार्ड से करेंगे। कल से ही। आप समझ गये ना, साथी रोज़ानोव? और आप, साथी सोकोलोव?"

उन दोनों को उत्तर देना पड़ा कि वे समझ गये हैं।

"देखिये, मैं जानता था कि हम बात तय कर लेंगे!" व्लादीमिर इल्यीच कह उठे।

अगले दिन 24 तारीख़ को पट्टियां बदले जाने के बाद लेनिन घर लौट गये। रोज़ानोव फिर उनके साथ थे।

रास्ते में लेनिन मौन साधे किसी बारे में एकाग्रचित्त होकर सोचते रहे, केवल राह के अंत में उन्होंने एक दिन पहले की बात दोहरायी:

"एक अच्छी ख़ासी योजना है, साथी रोज़ानोव! इस सोल्दातेन्कोव्सकया अस्पताल के बारे में कुछ करना चाहिए।"
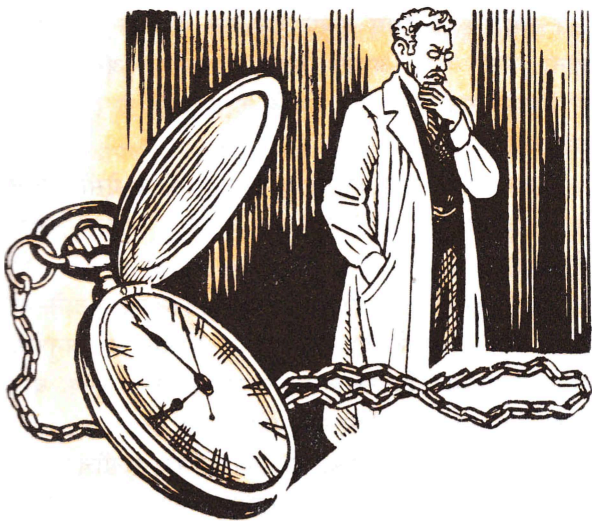
पांच मिनट

गम्भीर घाव लगने और गोलियों को निकाले जाने के लिए किये गये आपरेशनों के बाद सन् 1922 के अन्त में लेनिन का सुधरता स्वास्थ्य फिर बिगड़ने लगा। उनके सिर में दर्द फिर होने लगा और अनिद्रा भी परेशान करने लगी। उनका कभी शक्तिशाली रहा शरीर फिर दुर्बल होने लगा। यह किसी की दृष्टि मे छिपा न था, पर कोई भी इसे मानने को तैयार न था। उनमें सर्वप्रथम तो निस्सन्देह लेनिन स्वयं ही थे। उनका स्वास्थ्य जितना बिगड़ता जा रहा था, वे उतनी ही दृढ़ निश्चयता के साथ

उसे सुधारने के लिए संघर्ष कर रहे थे। उन्हें उत्तेजित होना मना था, अर्थात् पढ़ना, लिखना और लोगों से मिलना सब मना था। पर वे काम करने के लिए सदा आतुर रहते थे।

"आज मुझे कुछ ज़्यादा आराम है!" वे ऐसी हालत में भी दृढ़तापूर्वक कहते रहते थे, जबकि "आराम" नहीं होता था।

इसके तुरन्त बाद ही वे किसी पुस्तक को मंगाने या किसी व्यक्ति का टेलीफ़ोन अविलम्ब मिलाने का अनुरोध करने लगते थे। पिछले कुछ सप्ताहों से ऐसा अनेक बार होता रहा था। उस दिन भी यही हुआ।

"आपकी तबीयत कैसी है, व्लादीमिर इल्यीच? क्या मेरी नयी पुड़ियों से आपकी तबीयत कुछ सुधरी है?" डाक्टर ने सुबह लेनिन के कमरे में आकर पूछा।

"धन्यवाद, डाक्टर, बेहतर है! आपको देखते ही मैं बिलकुल ठीक महसूस करने लगता हूं।"

"बहुत ख़ुशी है मुझे, बहुत, व्लादीमिर इल्यीच! बेहद ख़ुशी है!" डाक्टर ने लेनिन की कलाई अपने हाथों में लेकर, अपनी चांदी की स्विस जेबी घड़ी का ढक्कन खट से खोलकर उसकी सेकंड की सूई पर ध्यान केन्द्रित करके कहा। "यानी मुझे यहां अक्सर आते रहना चाहिए। मैं तो बड़ी ख़ुशी से कुछ समय के लिए यहां इस कमरे में रहने आ जाता, व्लादीमिर इल्यीच। हम दोनों को कोई ज़्यादा जगह की तो ज़रूरत है नहीं, सच है ना? उधर उस दीवार के सहारे एक और पलंग लगाया जा सकता है। आप सहमत हैं?"

"किसी हालत में नहीं, डाक्टर! इसका सवाल ही नहीं उठता।"

डाक्टर को आश्चर्य हुआ:

"मैं आपको बिलकुल परेशान नहीं करूंगा, व्लादीमिर इल्यीच। आपको मेरी उपस्थिति का आभास तक न मिलेगा।"

"आप तो मुझे परेशान नहीं करेंगे, पर मैं आपको कर सकता हूं। न मैं खुद सोता हूं और न दूसरों को सोने देता हूं।"

"आज फिर आप ठीक से नहीं सो पाये हैं क्या?" डाक्टर ने पूछा, हालांकि वह वैसे ही जानता था कि वे रात भर सोये नहीं हैं और परेशान रहे हैं।

"आज तो कोई ज़्यादा बुरा नहीं रहा, ख़ास तौर से सुबह होने में। पौने चार बजे मैं गहरी नींद में डूब गया था..."

लेनिन समझ गये कि वे अपना राज़ खोल चुके हैं। अगर कोई आदमी यह जानता हो कि ठीक कितने बजकर कितने मिनट पर उसे नींद आयी थी, तो इसका मतलब है कि वह बिलकुल नहीं सोया है।

फिर भी डाक्टर ने अपने रोगी की ग़लती को न पकड़ पाने का स्वांग रचा, बल्कि उसका मनोबल ऊंचा उठाने का भी प्रयास किया:

"तभी तो मैं देख रहा हूं कि आपकी हालत बिल्कुल बदली हुई है, कल या परसों जैसी बिलकुल नहीं है, व्लादीमिर इल्यीच।"

“और नब्ज़? मेरे इस मनमौजी साथी के क्या हाल हैं?”

“और नब्ज़ भी बेहतर है। लाइये, एक बार ज़रा फिर देख लूं, क्या भरोसा इसका।”

घड़ी का ढक्कन एक बार फिर खट से खुला। लेनिन ने एक बार फिर आशावादिता से ओत-प्रोत शब्द सुने:

“मैं आपसे बहुत सन्तुष्ट हूं, व्लादीमिर इल्यीच।”

लेनिन के पीले पड़े गालों पर एक दुर्ग्राह्य मुस्कान खेल गयी। वे बोले:

“हमारा हिसाब साफ़ हो गया, डाक्टर।”

“मैं समझा नहीं, व्लादीमिर इल्यीच,” डाक्टर ने कहा।

“आज आप बहुत अच्छे लग रहे हैं, डाक्टर, जैसे कि पहले कभी नहीं लगते थे। आगे से मैं आपकी सारी हिदायतें ग़ुलाम की तरह पूरी किया करूंगा।”

“ग़ुलाम की तरह करने की क्या ज़रूरत है?” डाक्टर ने पूछा। “हमारे यहां ग़ुलाम तो अब रहे ही नहीं, व्लादीमिर इल्यीच।”

लेनिन क्षण-भर के लिए विचारमग्न हो गये, फिर डाक्टर की ओर उदासी-भरी और साथ ही विजेय दृष्टि डालकर बोले:

“कितनी अच्छी बात है कि ये शब्द आप ग़ैरपार्टी बुद्धिजीवी मुझ जैसे पेशेवर क्रान्तिकारी से कह रहे हैं! अतिसुन्दर! लेकिन एक गोपनीय बात मुझे आपको बतानी ही होगी। वह यह कि रूस में एक ग़ुलाम फिर भी रह ही

गया है। आपका आज्ञाकारी सेवक। मुझ पर हुक्म चलाइये, डाक्टर, मैं पूरी तरह आपके हाथों में हूं।"

यह सुनकर डाक्टर रोगी की ओर से होनेवाले अगले आक्रमण को झेलने को तैयार हो गया। और उसने ठीक ही किया। लेकिन उसे यह आशा नहीं थी कि यह आक्रमण इतना शक्तिशाली होगा, जिसका मुक़ाबला करना असम्भव होगा और वह लगभग बिना किसी तैयारी के तत्क्षण आरम्भ हो जायेगा।

लेनिन डाक्टर को अब अपनी उदास व विजेय भाव मिश्रित दृष्टि से बराबर देखे जा रहे थे। डाक्टर बड़ी कठिनाई से रोगी के प्रश्नों का उत्तर दे पा रहा था।

"डाक्टर, क्या आप चाहते हैं कि मेरी नब्ज़ पहले से बेहतर चले? कल से, परसों से बेहतर?"

"ज़रूर, व्लादीमिर इल्यीच, ज़रूर!"

"और आपके मरीज़ को पहले से कम-से-कम कुछ अच्छी नींद आये?"

"मैं भी इसी का सपना देखता हूं और पूरी कोशिश करता हूं, यह आप जानते हैं।"

"कितनी अच्छी बात है यह! तब मुझे ध्यान से सुनिये, डाक्टर, लेकिन अपने आले और घड़ी के ज़रिये नहीं। उन पर हमेशा पूरी तरह भरोसा नहीं किया जा सकता। एक इनसान से इनसान की तरह सुनिये मेरी बात। क्या मैं एक बात पूछ सकता हूं?"

"ज़रूर, व्लादीमिर इल्यीच. ज़रूर पूछिये..." डाक्टर ने पूर्ववत् सहृदयता से, पर किंचित संयत स्वर में उत्तर दिया।

"आइये एक बात तय कर लें। मैं ठीक से इलाज करता रहूंगा, पर मुझे काम करते रहने का अधिकार दिया जायेगा। रोज़ाना और नियमित ढंग से। हां, हां! आप इतने अचरज से मत देखिये। मैं रोज़ाना, भले ही थोड़े-से समय के लिए, पर काम करते रहने के अधिकार की मांग करता हूं। तब मेरी सारी बीमारियां जल्दी से जाती रहेंगी, इसका मैं आपको विश्वास दिलाता हूं, डाक्टर।"

"आप कहना क्या चाहते हैं, व्लादीमिर इल्यीच?" डाक्टर की घड़ी की ज़ंजीर उलझ गयी, मानो रोगी की बात से वह भी हैरान रह गयी हो। "आपको किताबें लाकर दी जाती हैं? टेलीफ़ोन पर बात करायी जाती है?"

"लाकर दी जाती हैं, बात करायी जाती है, धन्यवाद! लेकिन मुझे और भी अधिक सक्रिय काम शुरू करना चाहिए। और इसका अवसर मुझे आप देंगे, डाक्टर। वरना आपकी सारी दवाइयों को..."

लेनिन ने अपनी बात पूरी नहीं की, लेकिन उसका आशय पूर्णत: स्पष्ट हो चुका था।

"क्या यह अल्टीमेटम है?" किंकर्त्तव्यविमूढ़ रह गये डाक्टर ने पूछा और उत्तर न मिलने पर स्वयं ही अपने प्रश्न का उत्तर देने को विवश हो गया: "अल्टीमेटम है। मैं आपकी बात समझ गया, व्लादीमिर इल्यीच।"

"जब समझ ही गये हैं, तो मान जाइये!" लेनिन ने शान्त किन्तु दृढ़ स्वर में कहा।

"मैं समझ गया कि आपका मतलब क्या है," डाक्टर ने स्पष्ट किया, "लेकिन मैं आपके अनुरोध को अभी पूरा

नहीं कर सकता, व्लादीमिर इल्यीच, मेरे लिए यह असंभव है।"

"तो फिर हमारी वार्ता में गतिरोध उत्पन्न हो गया। खेद की बात है, मुझे आशा थी कि आपस में बात तय कर लेंगे।"

लेनिन ने डाक्टर की ओर ऐसी दृष्टि से देखा, जिसमें सुस्पष्ट मांग के साथ-साथ अत्यन्त विनम्र प्रार्थना, बल्कि विनती का भी भाव था।

प्रकटत: रोगी ने अपने चिकित्सक से कहा:

"इतनी मामूली-सी बातों की ख़ातिर दोस्ती छोड़ने और कहासुनी करने की भला कोई ज़रूरत है?"

"कैसे मामूली-सी बातों की ख़ातिर? ये मामूली-सी बातें नहीं हैं, व्लादीमिर इल्यीच..."

डाक्टर को अपनी बात पूरी करने का अवसर दिये बिना लेनिन ने अपनी हथेली कम्बल से बाहर निकाली। यह चेष्टा पर्याप्त रूप से अभिव्यक्तिपूर्ण थी, फिर भी लेनिन ने उसे पूर्णत: स्पष्ट कर देने का निश्चय किया:

"पांच मिनट, डाक्टर, सिर्फ़ पांच मिनट रोज़ाना, समझे आप? पां ऽऽ च। और मान जाइये इससे पहले कि मैं और भी सख़्त मांगें रखूं। इससे भी कहीं ज़्यादा सख़्त, मैं आपको आगाह किये दे रहा हूं।"

"एक और अल्टीमेटम," डाक्टर सोचने लगा। "एक के बाद दूसरा अल्टीमेटम। यह क्या ज़्यादा तो नहीं है? ज़्यादा ही है। इसके बाद आगे क्या होगा? ज़ाहिर है, कुछ तो झुकना ही पड़ेगा।"

"पांच मिनट कहा ना आपने? मैं आपकी बात ठीक

समझा ना, व्लादीमिर इल्यीच? आपकी बात रखता हूं—पूरे पांच मिनट!"

"ठीक है, डाक्टर। शुरूआत के लिए पांच मिनट ही सही, कृपा कीजिये।"

"यह मैं माने लेता हूं, व्लादीमिर इल्यीच। लेकिन सिर्फ़ पांच मिनट, इससे एक मिनट भी ज़्यादा नहीं, यह ध्यान में रखिये। यह भी एक अपवाद के रूप में। और कृपा करके और कोई सख़्त मांग मत रखिये, व्लादीमिर इल्यीच। मैं लोहे का तो हूं नहीं।"

"आप लोहे के नहीं हैं," व्लादीमिर इल्यीच ने स्वीकार किया। "आप अच्छे, बहुत अच्छे आदमी हैं। धन्यवाद, डाक्टर, बहुत बहुत धन्यवाद!"

कमरे में इतनी शान्ति छा गयी कि डाक्टर की जेबी घड़ी की टिक-टिक स्पष्ट सुनाई देने लगी।

सन्नाटे को सर्वप्रथम लेनिन ने ही अपने अप्रत्याशित प्रश्न से तोड़ा:

"शुरू कब से किया जाये, डाक्टर? मेरे सिर ढेरों काम जमा हो चुके हैं, और सभी फ़ौरी हैं।"

"कम-से-कम आज से नहीं, व्लादीमिर इल्यीच, आप बहुत थक चुके हैं, मैं देख जो रहा हूं। मैं ख़ुद ही पसीने से नहा गया हूं।"

"अगर हम बहस ज़रा कम करते, तो काम के लिए ज़्यादा ताक़त बची रहती, डाक्टर।"

"यानी सारा दोष नाचीज़ का है? यही मतलब निकलता है ना इसका, व्लादीमिर इल्यीच?"

"दोनों ही दोषी हैं। दोनों, डाक्टर। आइये, अब दोनों

ही भूल-सुधार कर लें। मैं अपनी योजना आपको बताना चाहता हूं, सुनिये। मैं 'प्रावदा' के लिए एक लेख लिख रहा हूं। कई दिनों से लगातार..."

"लेख?.." डाक्टर को आश्चर्य हुआ। "कब लिखते हैं?"

"अक्सर रात को, जब नर्स चौकस नहीं रहती या जब मुझे नींद नहीं आती। सच कहूं, तो आज बहुत ही कम लिख पाया हूं।"

"पौने चार बजे तक?" डाक्टर ने उपालंभपूर्ण स्वर में टिप्पणी की। "मान जाइये... आपको तो बिलकुल मना किया गया था।"

"सच है, किया गया था। मैं भी आपकी बात पकड़ रहा हूं, डाक्टर। मना किया गया था! पर अब मेरी तबीयत बेहतर है, आपने खुद ही जांच कर ली है। इसीलिए लिख रहा हूं। बेशक, मन-ही-मन में," लेनिन ने फिर कम्बल के अंदर से हाथ निकाला. "और अब कृपा करके स्टेनोग्राफ़र को बुलवा दीजिये।"

डाक्टर ने एक बार फिर अपने रोगी से हार मान ली। लेकिन पूरी सावधानी बरतते हुए। स्टेनोग्राफ़र को बुलाने के लिए सहमति देने से पहले उसने पूछा:

"सामग्री आशा है गोपनीय नहीं है, व्लादीमिर इल्यीच?"

"यही तो बात है कि वह गोपनीय है। पूर्णत: गोपनीय, डाक्टर..."

"आप ही ने तो अभी कहा कि आप लेख डिक्टेट करवायेंगे। भला लेख भी गोपनीय होते हैं?"

लेनिन कुछ सकुचाये, पर केवल क्षण-भर के लिए:

"आप जानते हैं, डाक्टर, कि कभी-कभी वे गोपनीय होते हैं। अपने आरम्भिक रूप में। इसलिए जब मैं डिक्टेट करवाना शुरू करूं, आप कृपया मुझे माफ़ करें..."

"ओह, ज़रूर, ज़रूर, व्लादीमिर इल्यीच!" डाक्टर ने कहा और अर्थपूर्वक जेबी घड़ी को अपनी हथेली पर रख ली मानो कहना चाहता हो कि मैं कमरे से बाहर तो चला जाऊंगा, पर उससे आगे एक क़दम भी नहीं जाऊंगा, यह ध्यान में रखिये। आपके दरवाज़े के बाहर ज़ंजीर से बंधे जैसे खड़ा रहूंगा।

रोगी के मुंह से बरबस एक गहरी सांस निकल गयी। लेकिन सच कहा जाये, तो यह उसकी विजय थी, भले ही बहुत मामूली-सी, पर थी एक और विजय। जहां पांच मिनट मिले, वहां दस भी मिल सकते हैं और उसके बाद आधा घंटा भी मिल सकता है। पर मुख्य बात यह थी कि काम आज ही, जल्दी ही शुरू किया जा सकता था।

कुछ समय बाद ही लेनिन के पास स्टेनोग्राफ़र आ पहुंची। डाक्टर थोड़े चरमराते दरवाज़े को बंद करके बाहर निकल गया।

लेनिन ने अपना काम शुरू कर दिया और निस्सन्देह उन्हें ध्यान ही नहीं रहा कि उन्हें दिया गया पांच मिनट का बहुमूल्य समय कब पलक झपकते बीत गया।

शीघ्र ही दरवाज़ा फिर चरमरा उठा और देहलीज़ पर अटल डाक्टर खड़ा दिखाई दिया:

"बस, व्लादीमिर इल्यीच। अब बस बंद कर दीजिये! वादा आखिर वादा ही होता है।"

स्टेनोग्राफ़र अपने काग़ज़ात समेटकर जाने की तैयारी करने लगी :

"नमस्ते, व्लादीमिर इल्यीच। नमस्ते, डाक्टर।"

"कल सुबह फिर मिलेंगे," लेनिन ने स्पष्ट करते हुए कहा कि कल वे शायद थोड़ी देर तक काम करेंगे।

"क्या मैं इसकी आशा कर सकता हूं, डाक्टर? या नहीं?"

"मैं कोई पक्का वादा नहीं कर सकता," डाक्टर ने जवाब दिया। "सब कुछ आप पर और आपकी तबीयत पर निर्भर करेगा, व्लादीमिर इल्यीच।"

"तबीयत अच्छी ही रहेगी। नींद भी ठीक आयेगी। नब्ज़ भी बिलकुल ठीक चलेगी," रोगी ने डाक्टर को विश्वास दिलाया। स्टेनोग्राफ़र के जाने के बाद वे बोले : "ख़ास तौर पर अगर आप कृपया मेरे पास कारीगर को भी भिजवा दीजिये।"

"कौन-से कारीगर को?" डाक्टर को आश्चर्य हुआ। "कब और किस लिए?"

"बढ़ई को। और वह भी आज ही। मुझे उससे एक काम है।"

"मेरी कुछ समझ में नहीं आता, व्लादीमिर इल्यीच। कृपा करके मुझ बेवकूफ़ को ठीक से समझाइये।"

"बहुत ही सीधी-सी बात है, डाक्टर। कल सुबह ही स्टेनोग्राफ़र मेरा लेख टाइप करके लायेगी। उसे पढ़ना होगा। उस वक़्त म्यूज़िक-स्टेंड जैसी वह चीज़ मेरे बहुत काम आयेगी। उस पर एक पन्ना रखकर ग़लतियां ठीक

करूंगा, फिर दूसरा। मैंने उस स्टेंड की बनावट अच्छी तरह सोच ली है।"

"लेकिन अभी तो मैं कुछ नहीं जानता हूं कि कल मैं आपको काम करने की इजाज़त दूंगा भी या नहीं," डाक्टर ने प्रतिवाद किया। "इसमें मुझे बहुत शंका है, बहुत ही शंका है, मैं फिर कह रहा हूं, व्लादीमिर इल्यीच। आज मैंने यह अपवादस्वरूप किया था।"

रोगी का हाथ फिर कम्बल के ऊपर निकल आया।

"हम तो यह तय कर चुके थे, डाक्टर। पांच मिनट रोज़ाना, भला यह कोई बहुत बड़ी बात है?"

"बहुत बड़ी, व्लादीमिर इल्यीच। अभी आपके लिए यह बहुत है।"

"आप ख़ुद ही कहते हैं—अभी के यानी आज के लिए बहुत बड़ी है। इसका मतलब है कि कल के लिए बिलकुल ठीक रहेगी। परसों और भी ज़्यादा! तर्कसंगत है ना?"

"मुझे इस बात में कोई तर्क नज़र नहीं आता, व्लादीमिर इल्यीच। मैं बस अपनी ओर से लगातार छूटें दिये जा रहा हूं, एक के बाद दूसरा समझौता किये जा रहा हूं।" डाक्टर ने हताशा से हाथ झटकारा।

और उस सुबह एक बार फिर रोगी के पीले पड़े गालों पर मुस्कान फैल गयी।

"यानी आपको मंज़ूर है? कारीगर को बुलायेंगे? अभी इसी वक़्त? फ़ौरन? धन्यवाद, डाक्टर, बहुत बहुत धन्यवाद! यह संयोग नहीं है कि आपको देखते ही मेरा मूड तुरन्त अच्छा हो जाता है, तबीयत सुधर जाती है, बहुत सुधर जाती है। कितनी अच्छी बात है!"

"आप यह मुझसे पहले भी कह चुके हैं, व्लादीमिर इल्यीच। आपको इस तरह हर क्षण और इतने ज़ोरदार शब्दों में मेरी प्रशंसा नहीं करनी चाहिए, न जाने मैं फिर अपने आपको क्या समझने लगूंगा।"

"ज़रूर समझिये, डाक्टर। समझिये! जब मैं आपकी प्रशंसा करता हूं, तो मतलब है, मेरे पास इसका कोई कारण है। विश्वास रखिये, मैं डाक्टरों को अब थोड़ा बहुत समझने लगा हूं। ख़ास तौर से पिछले कुछ अरसे से..."

महत्त्वपूर्ण काग़ज़

इवान लुकीच ने जब अपने पड़ोसी तिमोफ़ेई को बताया कि वह मास्को जा रहा है, तो वह आश्चर्यचकित रह गया।

"तुम से एक जगह बैठा क्यों नहीं जाता, इवान? कभी गांव जाते हो, कभी लोद्ज़, और अब वहां जाने की सूझी है! चलो, गांव में तो, मैं समझता, तुम्हारी बहन रहती है। लोद्ज़ में माना कि तुम्हारे यार-दोस्त रहते हैं। पर राजधानी में कौन है? एक भी तो जान-पहचान का नहीं है वहां!"

"राजधानी में भी एक ऐसा आदमी रहता है, जो पराया नहीं है। लेकिन, तिमोफ़ेई, ख़बरदार जो किसी से एक शब्द भी कहा इस बारे में, सुनते हो? उल्यानोव-लेनिन से बहुत ही ज़रूरी है मिलना!"

तिमोफ़ेई को और भी अधिक आश्चर्य हुआ:

"किस से, किस से?"

"अभी तक समझे नहीं क्या? सबसे बड़े से। व्लादीमिर इल्यीच से।"

तिमोफ़ेई ने खीसें निपोड़कर सिर हिलाया। फिर भी उसने इवान लुकीच को न जाने के लिए मनाने की कोशिश नहीं की। यह तो सब अरसे से जानते थे कि इवान के दिमाग़ में जो बात आ जाती है, वह उसे करके ही मानता है। इसके अलावा उसे यह भी मालूम था कि भाग्यवश अपनी जवानी के दिनों में ही इवान की लेनिन के साथ भेंट हो गयी थी, जब उसने मण्डलियों और मीटिंगों में जाना शुरू किया था और निषिद्ध पुस्तकें पढ़ना शुरू किया था। इसी कारण वह ज़ारशाही पुलिस द्वारा गिरफ़्तार कर लिया गया था और उसे राजनैतिक बंदी के रूप में सात महीने की क़ैद की पहली सज़ा मिली थी। तब उसे लगा था कि ये महीने जैसे कभी ख़त्म ही नहीं होंगे। हर दिन गिनता था और गिनती भूल जाता था। उसके फ़ौरन बाद उसे दम लेने का मौक़ा दिये बिना दूसरी मियाद के लिए बंद कर दिया गया था। अपराध वही था—राजनीतिक गतिविधियों के लिए। पूरे एक साल पेत्रोपावलोव्स्कया जेल में उसे सूखी रोटी तोड़नी पड़ी थी। वहां से उसे मास्को की एक जेल में भेज दिया गया था,

जो "बाश्न्या" ("टॉवर") कहलाती थी।

तिमोफ़ेई को आज यह सब याद हो आया और वह विचार भी, जो इवान लुकीच के अनुसार उल्यानोव-लेनिन ने उसके साथ हुई एक भेंट के दौरान व्यक्त किया था: "ये लोग हमें एक जेल से निकालकर दूसरी में ठूंस रहे हैं, एक कोठरी से निकालकर दूसरी में बंद कर रहे हैं। पर ये मामूली-सी बात भी नहीं समझते कि हम मिलकर संघर्ष करने के लिए एक दूसरे के साथ और ज़्यादा एकजुट होते जा रहे हैं।"

अपने पड़ोसी के सुनाये क़िस्सों से तिमोफ़ेई जानता था कि व्लादीमिर इल्यीच और इवान कई बार एक दूसरे से मिल चुके हैं। जब इवान लुकीच प्रोमींस्की को परिवार सहित दूरस्थ शूशा में निष्कासित कर दिया गया था, उन दिनों वह व्लादीमिर इल्यीच के घर आता जाता था, जो स्वयं भी वहां नज़रबंद थे। तब वे जाड़े की शामों को साइबे-रियाई बर्फ़ की आंधी की सांय-सांय में घंटों दुनिया भर के बारे में बातचीत किया करते थे: जीवन के बारे में, क्रान्ति के बारे में, जो रूस में किसी भी क्षण होने ही वाली थी। व्लादीमिर इल्यीच बार-बार यही कहा करते थे कि वे लोग, जिन्हें ज़ार साइबेरिया में निष्कासित कर रहा है, कड़ी सज़ाएं दे रहा है, बेड़ियों में जकड़ रहा है, वे और ज़्यादा मज़बूत और फ़ौलादी होते जा रहे हैं, एक दूसरे को और ज़्यादा अच्छी तरह समझते जा रहे हैं, एक दूसरे की ओर ज़्यादा क़दर कर रहे हैं।

तिमोफ़ेई को आज यह सब याद हो आया, फिर भी उसने इवान लुकीच को मास्को न जाने की ही सलाह दी:

"कड़ाके की ठंड है, इवान, भुखमरी और तबाही फैली है। तुम पहुंच भी पाओगे? फिर तुम्हारा उल्यानोव-लेनिन भी अब कितना बड़ा आदमी हो चुका है! जबकि तुम डिब्बों के पहियों में ग्रीज़ लगानेवाले जैसे पहले थे, वैसे ही रह गये हो। ठीक कह रहा हूं ना?"

"बिलकुल ठीक," इवान ने माना। "फिर भी जाकर पता लगाऊंगा। बस एक बार मिल लूं, और तो मुझे कुछ चाहिए नहीं। रेल का पास मुझे मिलता है, ख़र्चा कोई ख़ास होगा नहीं। सिर्फ़ खाने-पीने के अलावा। मैं तो बस गया और आया।"

एक-दो दिन बाद ही इवान लुकीच एक छोटी-सी पोटली कंधे पर डालकर स्टेशन की ओर चल पड़ा, तिमोफ़ेई अपनी खिड़की में से उसे जाता देखते हुए मन-ही-मन हैरान होता रहा कि कैसे कैसे भोले आदमी रहते हैं इस दुनिया में। सोचता रहा: "क्या ज़रूरत पड़ी है लेनिन को अब तुम्हारी, बुढ़ऊ? बहुत फ़ुरसत है जैसे उसको जेल के और निष्कासन के अपने पुराने दोस्तों से मिलने की! ठीक ही तो कहता हूं!"

एक सप्ताह बाद ही फिर वे एक दूसरे के पास बैठे हुए थे। दो लंगोटिया यार। उनमें मे एक का हौसला स्पष्ट रूप से बुलंद था। दूसरा लौटकर आये अपने मित्र को कुतूहल के साथ देख रहा था। उसे उतावली जो हो रही थी यह जानने की कि नेक सलाह न माननेवाले आदमी के साथ आख़िर क्या हुआ।

"क्यों, क्या हाल हैं मास्को के? क्या ख़बर लाये? सफ़र कैसा रहा? सब बताओ।"

"मास्को अपनी जगह खड़ा है। सच कहूं, तो पहुंचने में बहुत मुश्किल हुई। हर जगह रोक-रोककर पहचान-पत्र देख रहे थे। स्टेशन पर बड़ी मुश्किल से जांच करनेवालों से पिंड छुड़ा पाया। और जब लेनिन के पास जाने की कोशिश करने लगा, तो समझा-समझाकर थक गया कि मैं कौन हूं, कहां से आया हूं, कौन-से ऐसे फ़ौरी काम से व्लादीमिर इल्यीच से मिलने आया हूं। किसी न किसी तरह मैंने अपनी ठानी बेशक कर डाली। उनकी पत्नी नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना मुझ से मिलीं। उस दिन उनके पति घर पर नहीं थे सुबह से देर शाम गये तक।"

तिमोफ़ेई सिर हिलाकर बोला:

"मैंने भी तो यही कहा था ना! बेहतर होता अंगीठी के पास बैठकर अपनी सूखी हड्डियां सेंकते रहते। खुद भी आराम से रहते और दूसरों को भी चैन से रहने देते..."

"रुको भी तो. जल्दबाज़ी मत करो," इवान ने पड़ोसी को टोक दिया। "पहली बात तो यह है कि उनकी पत्नी से भी मेरी अच्छी जान-पहचान है। हम दोनों के लिए बहुत-सी बातें थीं करने को, याद करने को। मुझ, सफ़र के थके-मांदे को उन्होंने दो घंटे तक चाय-नाश्ता करवाया, सब बातों के बारे में पूछा। उन्हें बहुत दुख हो रहा था कि व्लादीमिर इल्यीच से मैं उस दिन शायद ही मिल पाऊं। उन्होंने इस बात में भी दिलचस्पी ली कि मुझे उनसे किसी तरह की मदद चाहिए या नहीं। मैंने कहा: 'धन्यवाद, मुझे किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है...'"

"तुम्हें उसी समय उठकर, धन्यवाद देकर चल देना चाहिए था," तिमोफ़ेई ने मित्र से कहा।

"मैंने ऐसा ही किया, बिलकुल ऐसा ही किया," तिमोफ़ेई को इवान ने विश्वास दिलाया। "धन्यवाद देकर विदा ली और व्यर्थ उनका समय लेने के लिए क्षमा मांगी, व्लादीमिर इल्यीच से नमस्ते कहने को कहा, उन दोनों के स्वास्थ्य की कामना की, उन्हें अपने पति का ख़्याल रखने और उन्हें बहुत ज़्यादा काम न करने देने को कहा। मैंने कहा कि यह हम सब मज़दूरों की विनती है: ख़्याल रखिये, उनका! फिर क्या हुआ, सोच सकते हो? मैं यह सब कह ही रहा था कि दरवाज़ा खुला और देहलीज़ पर खुद व्लादीमिर इल्यीच खड़े नज़र आये... ओवरकोट पहने, हाथ में काली टोपी लिये। मुझ पर नज़र पड़ते ही मेरी तरफ़ लपके। बोले: 'नमस्ते, प्यारे इवान लुकीच! नमस्ते! आप अंदाजा भी नहीं लगा सकते कि कितनी ख़ुशी हो रही है मुझे आप से मिलकर!'"

तिमोफ़ेई विस्फारित आंखों मे इवान को देखे जा रहा था, और वह अपना क़िस्सा सुनाये जा रहा था:

"लेनिन बिना ओवरकोट उतारे ही मेज़ पर बैठ गये। बोले कि अचानक जल्दी लौट आये हैं, पर अफ़सोस, थोड़ी देर के लिए, घंटे-भर बाद ही उन्हें फिर एक फ़ौरी काम से जाना है, पर यह घंटा वे मेरे साथ ही बितायेंगे, गपशप करेंगे, उन सब बातों के बारे में, जो कई सालों के हमारे विछोह के दौरान हुई हैं। 'कब से नहीं मिले हैं हम लोग, इवान लुकीच? ज़माना गुज़र गया एक, पूरा ज़माना! अच्छा, आप मेरे मेहमान हैं, आप ही पहले सुनाइये।'"

लेनिन ने इवान लुकीच को सब कुछ बताने को मजबूर किया, वह सब जो उसने भोगा, अपने सारे दुख-सुख के बारे में। उसके परिवार के बारे में पूछा, उसके हर सदस्य के बारे में। उन्हें यह जानकर बहुत ख़ुशी हुई कि फ़लाना ज़िंदा ही नहीं, सही-सलामत भी है, काम कर रहा है पूरे जोश-ख़रोश के साथ:

"कितना ज़रूरी है यह, भई, इस वक़्त हम सबके लिए! बहुत ही ज़रूरी है! कितना काम करना है अभी! इतना बड़ा काम करना है कि हम, पुराने सिपाहियों के लिए बीमार पड़ना किसी भी हालत में ठीक नहीं होगा, प्यारे इवान लुकीच! पर ख़ुद आप कैसे हैं?"

उपरोक्त अन्तिम प्रश्न लेनिन ने इवान के कथनानुसार बातचीत के दौरान कई बार पूछा। बोले: आप अब जवान तो रहे नहीं हैं, इतनी मुश्किलों से गुज़र चुके हैं और आपका काम भी तो हलका नहीं माना जा सकता। आपके बस का है भी या नहीं? क्या कोई ज़रा आसान काम ढूंढ़ा जाये आपके लिए? कहने लगे, ज़रूरत हो, तो किसी को और कहीं भी लिख दूंगा।

एक अपना क़िस्सा सुनाये जा रहा था, जबकि दूसरा बीच-बीच में व्यंग्यपूर्वक मुस्कराये जा रहा था। इवान लुकीच ने इसकी एक झलक देख ही ली, हालांकि तिमोफ़ेई अपनी व्यंग्यपूर्ण मुस्कान को छिपाने का जतन कर रहा था। केवल बातचीत के अन्त में उसने विनोद मिश्रित गम्भीर स्वर में पूछा:

"हां, तो फिर आख़िर इसका नतीजा क्या निकला?"

"हुआ यही कि मैंने अपने दिल की सारी भड़ास

निकाल ली। लेनिन से मिल लिया, हालांकि उन तक पहुंच बहुत मुश्किल से पाया। वापसी का सफ़र आसान हो गया। बहुत ही आसान हो गया!"

"तो क्या उन्होंने तुम्हें अपनी मोटर दी थी? क्यों?" पड़ोसी ने अब स्पष्ट व्यंग्य के साथ पूछा।

इवान लुकीच ने इस अनुचित मज़ाक़ को अनसुना कर दिया:

"जानते हो, तिमोफ़ेई, मोटर दी! स्टेशन तक छोड़ने आये, और फिर आने को कहा, जब उन्हें ज़्यादा फ़ुरसत होगी और यहां के रेल-डिपो में तार भेजने का भी वादा किया। फलां आदमी की अल्ताय की लाइन पर बदली करने का अनुरोध करता हूं, क्योंकि वहां खाने-पीने की चीज़ें सस्ती मिलती हैं और काम भी कोई और, ज़रा हलका दे दिया जाये। तो यह बात है, पड़ोसी! समझे?"

अब इवान लुकीच ने तिमोफ़ेई पर सिर से पैर तक एक विजेय दृष्टि डाली, ताकि उसके मन में कोई सन्देह नहीं रहे कि मास्को में सब कुछ ऐसे ही हुआ था। फिर उसने जेब में से तह किया हुआ एक काग़ज़ निकालकर उसे मेज़ पर फैला दिया और बड़ी सावधानी मे हाथ फेरकर उसकी सलवटें ठीक कीं:

"पढ़ो।"

तिमोफ़ेई सफ़ेद काग़ज़ पर झुककर उसे पढ़ने लगा। उसकी आंखें ऊपर के बायें कोने में छोटी, किन्तु स्पष्ट टाइप में छपे शब्दों पर रुक गयीं: "रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतंत्र। अध्यक्ष, जन-कमिस्सारों की सोवियत।"

"ठीक है। अब नीचे लिखा पढ़ो। उनकी लिखावट है, पड़ोसी!" ग्रीज़ से और लोहे व वक़्त की चोटें खाकर काली पड़ी इवान की उंगली उन पंक्तियों की ओर संकेत कर रही थी, जिन्हें तुरन्त पढ़ पाना इतना सरल न था: वास्तव में हाथ से जल्दी में चौड़ी लिखावट में लिखा हुआ था। तिमोफ़ेई आंखों पर ज़ोर देकर पंक्तियों को पढ़ने की कोशिश करने लगा।

"लाओ ज़रा मदद कर दूं," अपनी लम्बी यात्रा में लेनिन के लिखे हुए को न केवल समझ चुके, बल्कि कंठस्थ भी कर चुके इवान ने कहा। "सुनो और गांठ बांध लो: 'पत्र-वाहक इवान लुकीच प्रोमीस्की मेरे कारावास और निष्कासन के पुराने साथी हैं।' समझे? आगे सुनो: 'मैं सभी रेलवे-अधिकारियों व संस्थाओं से उन्हें हर प्रकार का सहयोग एवं आवश्यक सहायता देने का अनुरोध करता हूं..."

तिमोफ़ेई अभी भी अपने सामने रखे काग़ज़ को अविश्वास के साथ देखे जा रहा था। उस पर लिखे अस्पष्ट शब्द धीरे-धीरे उसकी समझ में आने लगे थे। हस्ताक्षर उसने स्वयं बिना इवान की सहायता के प्रकट में पढ़े:

"उल्यानोव-लेनिन। अध्यक्ष, जन-कमिस्सारों की सोवियत..."

"बिल्कुल ठीक, पड़ोसी। अध्यक्ष, जन-कमिस्सारों की सोवियत!" इवान ने दोहराया। "पढ़े-लिखे हो तुम, सुसंस्कृत आदमी हो, आखिर चर्च के स्कूल में तीसरी तक बेकार ही तो नहीं पढ़े हो। तो इस काग़ज़ को लेकर मैं ठाठ के साथ वापस लौटा हूं, समझे? कितना महत्त्वपूर्ण काग़ज़ है!"

तिमोफ़ेई सोच में पड़ गया। वह एक बार फिर सफ़ेद-झक कागज़ पर झुक गया। तिमोफ़ेई को एक और बात हैरान कर रही थी कि ऐसा कैसे हुआ कि इवान ने जिस प्रमाणपत्र को रास्ते में दसियों बार दिखाया होगा, वह एक के बाद दूसरे "जांचकर्त्ताओं" के हाथों में पड़कर भी इतना साफ़ रह गया। उसने यह बात इवान से पूछी।

उसे तिमोफ़ेई से भी अधिक आश्चर्य हुआ:

"तुम भी क्या कहते हो! किसे दिखाता मैं? सारे रास्ते किसी को एक बार भी नहीं दिखाया इसे। किसी आदमी को नहीं। भला इसे दिखाया जा सकता है? कह तो रहा हूं—महत्त्वपूर्ण कागज़ है यह! अपनी आखिरी सांस तक संभालकर रखूंगा इसे।"

काम का दिन

लेनिन को जब यह बताया गया कि एक विदेशी मूर्तिकार उनसे मिलना चाहती है, तो उन्होंने एक ठण्डी सांस लेकर सचिव की ओर उलाहना-भरी दृष्टि से देखा।

"फिर क्या हुआ? आपने उससे वादा कर लिया मुझसे मिलवाने का?"

"व्लादीमिर इल्यीच, न तो मैं वादा कर सकता हूं और न ही इन्कार कर सकता हूं, लेकिन सुना है, वह अच्छी मूर्तिकार है..."

"यानी मैंने ठीक कहा। आपने वादा कर लिया है ना?"

"व्लादीमिर इल्यीच, वह कहती है कि उसे हर हालत में आपकी मूर्ति बनानी ही है।"

लेनिन के चेहरे पर न छिपायी जा सकनेवाली खीज की छाया व्याप्त हो गयी। वे किंचित ऊंची आवाज़ में भी बोलने लगे, जैसा वे विरले ही करते थे।

"आप तो जानते हैं कि मेरे लिए यह कितना कष्टदायक होता है! अभी-अभी कला देवी के एक आराधक से पिण्ड छुड़ा पाया ही था कि दूसरा आ धमका। मैंने क़सम खा ली है दोबारा कभी मूर्तिकारों के लिए पोज़ न करने की। मेरा रोम-रोम इसका विरोध कर उठता है। मेरे लिए यह यंत्रणा है, सही अर्थों में यंत्रणा! याद है कितनी सारी चिकनी मिट्टी उठा लाया था वह यहां? और सारे समय काम से मेरा ध्यान बंटाता रहा था।"

"व्लादीमिर इल्यीच, हमने उन मदाम को चुप रहने, प्रश्न न पूछने और आपको 'पोज़' करने के लिए मजबूर न करने की कड़ी चेतावनी दे दी है। और कोई चिकनी मिट्टी-विट्टी न लाने की भी।"

व्लादीमिर इल्यीच के मुंह मे एक और ठण्डी सांस निकल गयी।

"आपने मुझे बड़ी बेतुकी उलझन में डाल दिया। बहुत ही बेतुकी उलझन में। मैं आपसे विनती करता हूं: आगे से मुझे ऐसे मुलाक़ातियों से बचाइये। ब-चा-इ-ये!"

"आगे से" का अर्थ यही निकलता था कि लेनिन इस

बार अपवादस्वरूप सहमति दे रहे हैं, पर अन्तिम बार। निश्चित रूप से अन्तिम बार।

खिड़की के पास मिनट-भर मौन खड़े रहकर व्लादीमिर इल्यीच सचिव की ओर मुड़े और मेल-मिलाप करने के-से स्वर में बोले:

"तो आपकी मूर्तिकार कब आयेंगी?"

"कल सुबह ही स्वागत-कक्ष में वह आपकी प्रतीक्षा करना चाहती है, जैसे ही आप अनुमति दें..."

"पर क्या वह मदाम जानती हैं कि हमारा काम का दिन कितने बजे से शुरू होता है?"

"हमने उसे पूरी जानकारी पहले से दे दी है, व्लादीमिर इल्यीच।"

अगले दिन सुबह-सवेरे अपने कक्ष में जाते समय लेनिन को स्वागत-कक्ष के कोने में देखने में एक असाधारण दर्शनार्थिनी दिखाई दे गयी। वह कई पेटियों और बालटियों से घिरी चौकन्नी बैठी थी।

"हू-बहू पहलेवाले जैसी है," लेनिन ने सोचा और शिष्टाचारवश उन्होंने स्वयं महिला के पास जाकर, सिर किंचित नवाकर पूछा कि क्या उसे उनकी शर्तें मालूम हैं।

"ओह, हां, मिस्टर लेनिन, हां! मुझे सारी बात समझा दी गयी है कि मुझे चुप रहकर काम करना है, प्रश्न नहीं पूछने हैं और आपसे पोज़ करने को भी नहीं कहना है..."

"और जहां तक सम्भव हो, काम एक दिन में ही निबटा देना है, मदाम, आप कृपया मुझे क्षमा कीजिये।"

"मैं आपका यह अनुरोध भी किसी-न-किसी तरह पूरा करने की चेष्टा करूंगी, मिस्टर लेनिन..."

"तो फिर आइये," व्लादीमिर इल्यीच ने मूर्तिकार को अपने आगे जाने को रास्ता छोड़ दिया। उनके पीछे-पीछे लाल सेना के दो जवान भी कक्ष में गये। वे पेटियां और बालटियां उठाकर लाये और उन्हें पहले से फ़र्श पर बिछाये हुए पुराने अख़बारों पर सलीक़े से रख दिया।

व्लादीमिर इल्यीच मेज़ पर बैठ गये। मूर्तिकार उनसे थोड़े फ़ासले पर जम गयी, ताकि वह उनके काम में किसी प्रकार की बाधा न डाले, पर साथ ही उन्हें अच्छी तरह देखती भी रह सके।

लेनिन अपने काम में जुट गये, और मूर्तिकार अपने में।

केवल लेनिन द्वारा उलटे जा रहे पुस्तकों के पृष्ठों की सरसराहट और मूर्तिकार की बालटियों में पानी की गरगर ही कक्ष में व्याप्त शान्ति को भंग कर रही थी।

हर कुछ मिनट बाद सचिव काग़ज़ात के ढेर लिये अंदर आता और निःशब्द, केवल उसे ही ज्ञात क्रम में उन्हें कक्ष के स्वामी के सामने मेज़ पर रख जाता। लेनिन स्वयं कैंची से लाख की मुहरें लगे मोटे-मोटे लिफ़ाफ़े काटकर खोलते, जल्दी जल्दी उन पर नज़रें दौड़ाकर उन्हें पढ़ते, दबी आवाज़ में निर्देश देते, जिन्हें सचिव अपने पैड में लिखता और फिर बाहर निकल जाता।

समय-समय पर लेनिन कभी किसी से टेलीफ़ोन मिलाने

को कहते। वे उन लोगों से संक्षिप्त व स्पष्ट बातचीत करते और साथ ही अपने पैड पर कुछ नोट भी करते जाते।

लेनिन के सिर के ऊपर घड़ी लटकी हुई थी, जिस पर मूर्तिकार जब तब नज़र डाल रही थी। उसे दिये गये समय को घड़ी की सुइयां मिनट-मिनट और घंटा-घंटा करके अनवरत कम किये जा रही थीं।

अचानक दरवाज़ा खुला और एक व्यक्ति अंदर आया, जिसका चेहरा मूर्तिकार को न जाने क्यों कुछ जाना-पहचाना-सा लगा। पच्चर जैसी सफ़ेद दाढ़ी, धातु की पतली कमानियोंवाले चश्मे के शीशों से झांकती सदय, ध्यानपूर्ण आंखें। लेनिन तुरन्त उठकर उस व्यक्ति की ओर बढ़े। फिर वे दूरवाले कोने में जाकर धीरे-धीरे, पर उत्तेजित स्वर में बातें करने लगे। लेनिन जो कुछ बोल रहे थे, उसमें से केवल दो ही शब्द — मिख़ाईल इवानोविच * — मूर्तिकार के कानों में पड़ पाये। वह कान लगाकर सुन भी नहीं रही थी, केवल अपने स्थान पर विनम्रतापूर्वक बैठी उस उपयुक्त क्षण की प्रतीक्षा कर रही थी, जब वह दोबारा अपना काम शुरू कर सके। सच कहा जाये, तो क्षण-भर के लिए दम लेने की फ़ुरसत मिलने पर वह ख़ुश भी हो रही थी, क्योंकि उसका काम भोर में ही शुरू हुआ था, जबकि अब खिड़कियों के बाहर शाम का धुंधलका छाता नज़र आने लगा था।

---

* मिखाईल इवानोविच कलीनिन (1875 — 1946) — सोवियत संघ के प्रथम राष्ट्रपति।

थोड़ी देर बाद दाढ़ीवाला व्यक्ति लेनिन से विदा लेने लगा। मूर्तिकार ने फिर इस बात पर ध्यान दिया कि उस व्यक्ति के प्रति लेनिन का व्यवहार कितना आदरपूर्ण था। उन्होंने उससे काफ़ी देर तक हाथ मिलाकर हिलाया और चाय पीने के लिए भी आग्रह किया। लेकिन उस व्यक्ति ने कोई फ़ौरी काम बताकर उसे अस्वीकार कर दिया। लेनिन उसे दरवाज़े तक छोड़कर आने के बाद मूर्तिकार से बोले:

"लेकिन मुझे आशा है, आप तो एक गिलास चाय पीने से इन्कार नहीं करेंगी, मदाम?"

मूर्तिकार न जाने क्यों सकुचा गयी। लेनिन ने सचिव से कहा:

"कृपया दो गिलास चाय ले आइये। ज़रा गरम और हो सके, तो थोड़ी कड़क भी।"

कक्ष में स्पष्टत: गरमी नहीं थी। लेनिन कुछ ठिठुर रहे थे। मूर्तिकार को ध्यान आया कि वह केवल ठिठुर ही नहीं गयी है, बल्कि थककर चूर भी हो चुकी है, और शायद यह व्यक्ति भी थक चुका है, जिसने अपने दिन-भर के काम में थोड़ी भी देर आराम नहीं किया है।

ट्रे में चाय के दो गिलास लाये गये। भाप छोड़ती कड़क चाय के, जो प्रकटत: कक्ष के स्वामी को पसंद थी।

"अहा, चीनी भी डाली है!" लेनिन गिलासों के पेंदे में हिलकर तीव्र गति से घुलती छोटी-सी सफ़ेद डलियों को देखते ही कह उठे। "बहुत, बहुत धन्यवाद! पीजिये, मदाम।"

पहला घूंट लेते ही मूर्तिकार समझ गयी कि चाय

में वास्तव में नाममात्र की चीनी पड़ी थी। उसने चम्मच चाय में कितनी ही क्यों न घुमायी, पर चाय उससे ज़्यादा मीठी न हो सकी।

विदेशी महिला से नज़रें मिलते ही लेनिन बोले:

"आप हमारे यहां दसेक साल बाद आइये, मदाम। आपने तो केवल एक ही युद्ध भुगता है, जबकि हमें पूरे तीन भुगतने पड़े हैं। एक के बाद एक—पहला विश्व युद्ध, गृह-युद्ध और इसके अलावा हम सबको अपने जनतंत्र की रक्षा करने के लिए भी हथियार उठाने पड़े हैं। इसलिए भूल-चूक माफ़ कीजिये।"

चाय पीने के बाद मूर्तिकार ने लगभग दो घंटे और काम किया। फिर उसकी ताक़त जवाब दे गयी। अपने जीवन में इससे पहले उसने कभी इतनी देर तक काम नहीं किया था।

"मुझ पर नाराज़ न हो, मिस्टर लेनिन, पर मैं अपने काम को मुझे दिये गये समय में पूरा नहीं कर पायी हूं। सिर्फ़ एक घंटे का काम और बाक़ी रह गया है। कृपा करके मुझे कल अपना काम पूरा करने की इजाज़त दे दीजिये।"

"सिर्फ़ एक घंटा और चाहिए, मदाम? सच?"

"सिर्फ़ एक घंटा। आज आप भी थक चुके हैं और मैं भी। मेरे ख़याल से आज हम दोनों को अपना काम का दिन ख़त्म हुआ मान लेना चाहिए, क्यों?"

प्रत्युत्तर में लेनिन किंचित मुस्करा दिये।

मूर्तिकार ने निश्चय किया कि कल वह अवश्य ही इस मुस्कान को, दुर्ग्राह्य, आंखों के कोनों से, बल्कि उनके अंदर से फूट पड़नेवाली मुस्कान को मूर्ति में दर्शा देगी।

लेकिन उसे पकड़ पाना इतना आसान न होगा। दिन-भर में केवल दो बार उसने क्लान्ति के गहरे चिन्हों से भरे, बुद्धिमत्ता के साकार रूप, ध्यानमग्न उनके चेहरे को आलोकित किया था। लेनिन पहली बार उस मिख़ाईल इवानोविच नाम के व्यक्ति से मिलने पर मुस्कराये थे। दूसरी बार अब, जब उसने उन दोनों के काम का दिन समाप्त होने और दोनों को अब पूरा आराम करने का अधिकार मिलने की बात कही थी।

"चाहे कुछ भी क्यों न हो, मुझे इस दुर्लभ, किन्तु नेक मुस्कान के स्रोत की थाह लेनी ही होगी। रूस में बहुत पहेलियां हैं, बहुत ही ज़्यादा। हर क़दम पर पहेलियां मिलती है। धीरे-धीरे सभी पहेलियां बूझ लूंगी, और इस पहेली को भी!" लेनिन के कमरे से स्वागत-कक्ष में निकलते हुए विदेशी महिला सोच रही थी।

लेकिन जो दृश्य उसे दिखाई दिया, उसने उसे चौंककर क्षण-भर के लिए जड़वत् हो जाने को विवश कर दिया। वह लम्बा-चौड़ा कक्ष, जिसे सुबह अपनी घबराहट के कारण वह ठीक से नहीं देख पायी थी, लोगों से खचाखच भरा था। वे दीवारों के सहारे-सहारे रखी कुरसियों पर बैठे हुए थे, कोई मज़दूरों के कपड़े पहने था, किसी के पैरों में किसानोंवाले छाल के बने जूते थे, कोई सैनिक का ग्रेटकोट पहने था...

मूर्तिकार को छोड़ने जाते समय सचिव ने चलते-चलते ही एकत्र लोगों को सम्बोधित करके कहा:

"सब कार्यक्रम के अनुसार हो रहा है, साथियो, बिलकुल कार्यक्रम के अनुसार। मुलाक़ातें ठीक निश्चित

समय पर शुरू होंगी। इन मदाम को विदा कर दूं, साथी लेनिन की दो कारख़ानों के डाइरेक्टरों से बात करा दूं, इसके बाद फ़ौरन शुरू कर देंगे। सब को मुलाक़ात करने का मौक़ा मिलेगा। आपका नम्बर पहला है, साथी सिर्योगिन," उसने ऐन दरवाज़े के पास लाल तारेवाला नुकीला हेल्मेट पहने बैठे अधेड़ आदमी से कहा। "उसके बाद आपका, आपका और आपका... सूची के अनुसार।"
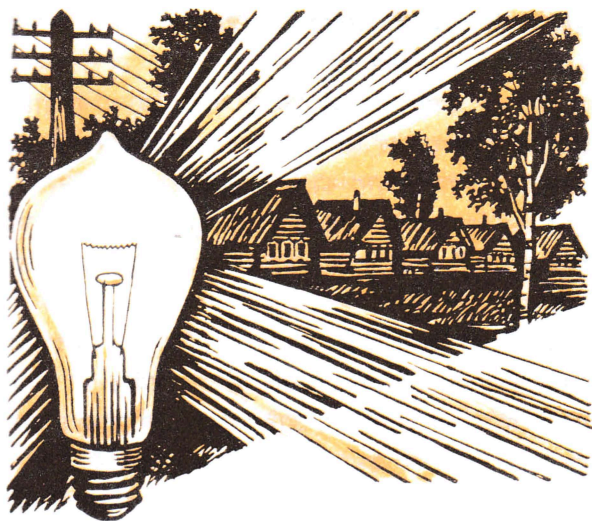
...जमा सारे देश का विद्युतीकरण

जनवरी सन् 1921 में हुई सोवियतों की आठवीं कांग्रेस के मंच से लेनिन द्वारा कहे सुप्रसिद्ध शब्द "कम्युनिज़्म का अर्थ है—सोवियत शासन जमा सारे देश का विद्युतीकरण" सारे संसार में विद्युत गति से फैल गये थे।

कांग्रेस के निर्णयों को अविलम्ब स्पष्ट करना और उनके क्रियान्वयन के लिए जनता का आह्वान करना आवश्यक हो गया था। इस दिशा में अभी बहुत काम करना था। समस्या यह थी कि उसे कहां से और कैसे शुरू करना बेहतर होगा और किस प्रकार इस में गति लानी होगी।

सर्दियों की शाम को मास्को से गोरकी जाते समय लेनिन रास्ते भर यही सोचते रहे।

घर पर अपनी झूला-कुरसी में थोड़ी देर आंखें आधी मूंदे बैठे रहने के बाद लेनिन ने अपने पास से निकल रही नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना को आवाज़ देकर पूछा: "नाद्या, तुम्हें उस भेड़ की खाल के ललछौंहे कोटवाले किसान की याद है? लम्बे क़दवाले की जो बार-बार अपने घर बुला रहा था।"

हाथों में अभी-अभी खौली केतली लिये नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना कुछ याद करती हुई रुक गयीं।

"हमारे यहां इतने लोग आते रहते हैं, वोलोद्या। और हर कोई अपने घर ज़रूर आने का न्योता देता है..."

"लेकिन उसे भुला पाना असम्भव है, नाद्या। घनी दाढ़ी, बड़ी-बड़ी, स्लेटी आंखें। कहता था, घर मेरा बहुत बढ़िया नहीं, पर लम्बा-चौड़ा है, अपने बड़े परिवार के लिए उसने स्वयं उसे बनाया है, इसलिए उसमें जगह सबके लिए काफ़ी होगी।"

"हां, हां, लगता है कुछ याद आने लगा है। यह पिछले हफ़्ते की बात है, आख़िरी बार तभी मिला था वह।"

"अभी आधा घंटा पहले उससे पिछली मुलाक़ात हुई थी, नाद्या। अंधेरे में हमें कुछ लोगों ने रोककर क्षमा-याचना की थी। उनमें से एक जो सबसे लंबा था, बोला: 'मैं हूं—शुल्गीन, व्लादीमिर इल्यीच, भूले तो नहीं हैं ना? यह रहा मेरा घर। देखने में सुंदर नहीं, पर लम्बा-चौड़ा है। काफ़ी लोग आ सकते हैं उसमें।' कह

रहा था कि अब और नहीं टालना चाहिए, व्लादीमिर इल्यीच।"

"और तुमने क्या जवाब दिया था उसे?" नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने किंचित उलाहना-भरे स्वर में पूछा, निस्सन्देह उन्हें पूरे क़िस्से का अनुमान था। "तुम तो बिलकुल भी आराम नहीं करते हो, वोलोद्या।"

लेनिन चुप हो गये और गरम शाल से ढके पत्नी के कंधों का आलिंगन करके शान्त पर सुदृढ़ स्वर में बोले:

"चलो, तैयारी करो। मैंने उसके यहां तुम्हारे साथ आने का वायदा किया है। हमें वहां फ़ौरन इसी वक़्त चलना चाहिए। वहां हमारी चाय से ख़ातिरदारी की जायेगी, सीधे समोवार से!"

शीघ्र ही बर्फ़ पर चरमर करती स्लेज गोरकी गांव के शुल्गीन किसान के घर के सामने आकर रुक गयी।

अतिथियों का ड्योढ़ी पर स्वागत करके उन्हें अंदर लाया गया। पूरा घर लोगों से भरा था। उनमें से बहुत-से बेंचों, स्टूलों और कुरसियों पर बैठे हुए थे, जो स्पष्टत: पड़ोस के घरों से लायी गयी थीं। कुछ तो खिड़कियों के दासों पर भी बैठे हुए थे। लेकिन व्लादीमिर इल्यीच और नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना के लिए मेज़ के पास दो कुरसियां ख़ाली छोड़ दी गयी थीं। सचमुच मेज़ के बीचोंबीच रगड़-रगड़कर चमकाये हुए समोवार में पानी खौल रहा था।

घर में हालांकि प्रकाश धुंधला था, किरासिन-लैम्प का, पर सब स्पष्ट दिखाई दे रहा था, एकत्र लोगों के क्लान्त चेहरे और उनकी उत्तेजित आंखें भी। लेनिन का ध्यान इस

बात पर जाये बिना न रह सका कि मेज़ पर विशेष अवसरों पर बिछाया जानेवाला कलफ़ लगा मेज़पोश भी बिछा हुआ है, जिस पर उनकी मनपसंद पुरानी रूसी कशीदाकारी की हुई है।

नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने भी निस्सन्देह यह सब देख लिया था और पति की कोहनी को चुपके से छुआ। इसका मतलब था कि देखो हमारा यहां कितना इंतज़ार किया जा रहा था और वह भी बहुत उत्सुकता के साथ। व्लादीमिर इल्यीच ने प्रत्युत्तर में बहुत हौले से सिर हिलाया और एकत्र लोगों से हाथ मिलाकर उनका अभिवादन करते हुए देर से आने के लिए क्षमा-याचना की।

"आप भी क्या कहते हैं, व्लादीमिर इल्यीच!" प्रत्येक ने उत्तर में कहा। "हम खुद ही अभी-अभी काम के बाद आये हैं। घर तक भी नहीं झांक पाये।"

यह तो वैसे ही स्पष्ट था, क्योंकि उनमें से कुछ के कपड़ों के ऊपर तराशे हुए सितारों जैसे, अभी तक पिघल न पाये हिम-कण झिलमिला रहे थे।

लेनिन ने सबसे मिलकर अपने लिए छोड़े स्थान पर बैठने के बाद शुल्गीन से पूछा:

"आज की कार्यसूची का सर्वप्रमुख प्रश्न क्या है?"

"आप तो वैसे भी सभाओं-बैठकों वगैरह में बहुत जाते रहते हैं, व्लादीमिर इल्यीच," गृहस्वामी ने कहा। "आपके साथ तो बस दिल खोलकर बातें करने को जी चाहता है। और हमारे दिल ठहरे गांववालों के, यानी हमारी दिलचस्पी यह जानने में है कि सोवियतों के राज में गांव कैसे होंगे, वह भी आज से हज़ार बरस बाद

के नहीं, बल्कि यही कोई दसेक साल बाद के, बल्कि पांचेक साल बाद के..."

"अब सारी बात समझ गया," लेनिन ने सन्तोषपूर्वक सिर हिलाया और हाल ही में समाप्त हुई सोवियतों की आठवीं कांग्रेस के बारे में, देश के विकास के परिप्रेक्ष्यों के बारे में बताने लगे और उन कठिनाइयों के बारे में भी, जिनका सामना किसानों और मज़दूरों को करना पड़ता है।

लेनिन स्पष्ट शब्दों में, बिना कुछ छिपाये, बिना किसी बात पर मौन साधे ईमानदारी से बोलते रहे, और हर कोई बरबस उस बातचीत में भाग लेने लगा। कोई प्रश्न पूछ बैठता, कोई टिप्पणी कर बैठता, तो कोई इतना टेढ़ा सवाल कर बैठता कि उसका जवाब देना मुश्किल-सा लगता। बातचीत के हर मोड़ पर व्लादीमिर इल्यीच की प्रतिक्रिया शान्त और विश्वासोत्पादक होती थी। लोग इस बात की सराहना किये बिना न रह सके, इसलिए हर कोई इस बात पर ज़ोर देने का प्रयास कर रहा था कि किसान अपने लक्ष्य को भली-भांति समझते हैं और जो करना चाहिए, उसे वे मिलकर करेंगे।

बातचीत काफ़ी देर तक चलती रही और और भी काफ़ी देर तक चल सकती थी, क्योंकि कोई भी उठकर नहीं जाना चाह रहा था। पर एक अप्रत्याशित बात हो गयी, वह भी संयोगवश उस समय, जब लेनिन ने कहा कि सोवियतों की आठवीं कांग्रेस ने रूस के विद्यु-तीकरण की योजना का सर्वसम्मति से समर्थन किया। अचानक छत से लटके किरासिन-लैम्प से तेज़ी से धुआं निकलने लगा, हवा में बत्ती की चिरायंध फैलने लगी,

रोशनी धुंधली पड़ने लगी और एक-दो मिनट बाद सब कुछ घुप अंधकार में डूब गया।

घर में भनभनाहट होने लगी। गृहस्वामी परेशान हो उठा, लोहे की पत्ती निकालकर उसे चक़मक़ पर ज़ोर-ज़ोर से रगड़ने लगा। लेनिन ने इस अवसर पर फिर अत्यन्त सटीक बात कही:

"लीजिये, यह एक और दलील मिल गयी कांग्रेस के निर्णयों को क्रियान्वित करने के पक्ष में! चलिये, यहीं पर आज की कार्रवाई समाप्त कर दें।"

सबसे विदा लेते समय व्लादीमिर इल्यीच ने वचन दिया कि गोरकी में पहला बिजली का बल्ब कुछ ही महीनों में जल उठेगा। इसके लिए वे जो भी सम्भव होगा करेंगे।

घर लौटते समय लेनिन सारे रास्ते अपने विचारों में डूबे मौन रहे।

उस रात वे बहुत देर से सोने गये। उनींदी नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना को उनके दबे पांव चहलक़दमी करने की आहटें काफ़ी देर तक सुनाई देती रहीं। सुबह उन्होंने पति को मेज़ पर बैठे देखा। पीछे से आकर उन्होंने अपने दोनों हाथ लेनिन के कंधों पर रख दिये। सबसे पहले उनकी दृष्टि मेज़ पर रखे, विचित्र संकेतों से भरे काग़ज़ों पर पड़ी।

"यह क्या है, वोलोद्या? तुम क्या कर रहे हो?.."

व्लादीमिर इल्यीच ने अपने हाथ नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना के हाथों पर रख दिये।

"मैं बहुत ख़राब नक़्शानवीस हूं ना?" उन्होंने किंचित दुख-भरे स्वर में पूछा। "कल की बातचीत के बाद मैंने

गोरकी और उसके आसपास की सारी बस्तियों के विद्युतीकरण योजना का यह नक़्शा बनाने की कोशिश की है।"

"पर यह अजीब-सी लाइन क्या है?"

"यह पाखरा नदी का किनारा है।"

"और ये डंडियां? अरे, ये तो लाखों हैं!.."

"तुम शायद हंसने लगोगी, नाद्या, पर ये खंभे हैं। बिजली के असली खंभे। मुझे गिनकर पता लगाना ज़रूरी था कि कितनों की ज़रूरत पड़ेगी, और जानती हो, मैंने ठीक-ठीक हिसाब लगा लिया। बेशक हिसाब मोटा लगाया है। कुल मिलाकर हमें लगभग..."

लेकिन नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने बिना क्रुद्ध हुए, पर अत्यन्त दृढ़निश्चय के साथ उन्हें टोक दिया:

"वोलोद्या, मुझे इस समय इस बात में कोई दिलचस्पी नहीं है कि कितने खंभों की ज़रूरत पड़ेगी, हालांकि मैं समझती हूं कि यह एक बहुत गम्भीर और आवश्यक प्रश्न है, पर मेरे लिए यह जानना भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है, बल्कि इससे भी कहीं ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है कि कल तुम कितने बजे लेटे थे। डाक्टर ने तुमसे क्या कहा था? तुम मुझे शिकायत करने के लिए मजबूर कर रहे हो।"

लेनिन को कोई जवाब नहीं सूझ पाया। उन्होंने नक़्शेवाले पन्ने करीने से समेटकर फ़ाइल में रखने शुरू कर दिये।

पर नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना उनके पास खड़ी बार-बार खिन्न स्वर में कहती रहीं:

"अच्छी तरह समझ लो, मैं शिकायत करूंगी..."

कुछ भी सही, पर पाखरा के तट पर बसे गोरकी में पहले 'लेनिन के बल्ब' उसी वर्ष सन् 1921 के जुलाई मास में जल उठे थे। इस तथ्य से दुनिया के कोने-कोने में सभी लोग सुपरिचित हैं।
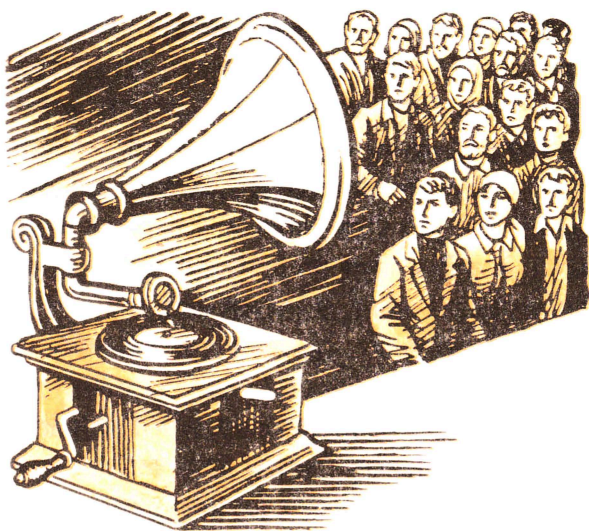
रिकार्ड

मास्को में कभी 'त्सेंत्रोपिचात्' नाम की एक संस्था थी। वह त्वेरस्कया मार्ग पर 38 नम्बर के मकान में खुली हुई थी। अब तो उस मार्ग का नाम भी बदल चुका है, वह गोर्की स्ट्रीट कहलाती है और उसमें दूसरी संस्थाएं खुल चुकी हैं। फिर भी इसी पते: 38, त्वेरस्कया मार्ग को याद रखिये। यहां सन् 1919—1921 में लेनिन की आवाज़ ग्रामोफ़ोन रिकार्डों पर रिकार्ड की जाती थी।

पहली रिकार्डिंगें क्रेमलिन में ही हर बार विशेष रूप से तैयार किये गये कक्ष में की जाती रही थीं, लेकिन इसमें

यंत्रादि को लाने, फ़िट करने में बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था, कुछ और पेचीदगियां भी पैदा हो जाती थीं। इसी कारण रिकार्डिंग का इंतज़ाम अन्तत: 'त्सेंत्रोपिचात्' में ही करना पड़ा। पर इस कारणवश लेनिन के लिए और परेशानियां पैदा हो गयीं। इसी लिए 'त्सेंत्रोपिचात्' के कर्मचारी लेनिन को रिकार्डिंग का स्थान बदलने के बारे में बताने में हिचकिचाते रहे। वे लेनिन का ध्यान उनके काम से हटाना और उन्हें परेशान करना नहीं चाहते थे। यह मालूम पड़ने पर लेनिन ने कहा :

"उपयोगी काम के लिए हम हमेशा समय निकाल लेंगे। थोड़ा देर से सोया करेंगे और थोड़ा जल्दी उठा करेंगे। बस इसी तरह समस्या का समाधान हो जायेगा। देखा, कितना आसान है यह?"

इस प्रकार लेनिन के पन्द्रह भाषण रिकार्ड कर लिये गये। उनमें प्रमुख थे: 'लाल सेना से अपील', 'सोवियत सत्ता क्या है', 'तृतीय कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के बारे में', 'मध्यवर्गी किसानों के बारे में', और 'जिंसी टैक्स के बारे में'।

लेनिन की आवाज़ के रिकार्ड उपलब्ध होने की बात विद्युत गति से चारों ओर फैलने लगी। 'त्सेंत्रोपिचात्' में कारखानों, गांवों के लोगों और लाल सैनिकों का तांता बंध गया। लोग 38, त्वेरस्कया मार्ग पर आकर तुरन्त ग्रामोफ़ोन पर लेनिन की आवाज़ के रिकार्ड लगाने की मांग करने लगते। लेनिन का कोई भी भाषण सुनकर वे कहने लगते:

"यही तो चाहिए हम सबको! लोग इस पर विश्वास कर लेंगे।"

रिकार्डों की मांग दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी और उन्हें आवश्यक संख्या में तैयार कर पाने में कठिनाई होने लगी। मास्को के एक उपनगर में स्थित रूस की एकमात्र रिकार्ड फ़ैक्टरी इतने रिकार्ड तैयार नहीं कर पा रही थी, इसलिए तुरन्त एक और फ़ैक्टरी खोलनी पड़ी।

लेनिन को निस्सन्देह इन सब बातों की ख़बर थी। वे 'त्सेंत्रोपिचात्' के लोगों के काम की कठिन परिस्थितियों को ध्यान में रखकर उनकी यथासम्भव सहायता करने का प्रयास करते रहते थे।

रिकार्डिंग के नियम कठोर थे। व्लादीमिर इल्यीच का प्रत्येक भाषण पूरे तीन मिनट का होना चाहिए था। आरम्भ में ऐसा कर पाना किसी भी प्रकार सम्भव न हो पाया। कभी भाषण तीन मिनट से कुछ ज़्यादा लम्बा हो जाता, तो कभी कुछ कम का रह जाता। पेचीदा उपकरणों को चलानेवाले आपरेटर चिन्तित होने लगे, घबराने लगे। लेनिन, जैसे उनसे हो पाता, उन्हें तसल्ली दिलाते:

"ग़लती मेरी है। मैं अपने आपको परिस्थितियों के अनुसार तुरन्त नहीं ढाल पाता हूं। अगली रिकार्डिंग के लिए और भी ज़्यादा अच्छी तरह तैयारी करूंगा।"

और अगली बार वे निर्धारित समय-सीमा के लिए तैयार किया अपना भाषण लेकर आते।

"देखिये, कितनी कोशिश करता हूं! मैं चाहता हूं कि हमारा प्रचार-कार्य सदा उच्च-स्तर का हो। 'त्सेंत्रोपिचात्' में उमड़कर आनेवाले मज़दूर, किसान और

लाल सैनिक किसी एक आदमी की आवाज़ सुनने के लिए नहीं आते हैं। वे चाहते हैं कि पार्टी उनको सम्बोधित करे, कि हमारी सोवियत सरकार उनसे बात करे, ठीक है ना?"

"ठीक कहा आपने, व्लादीमिर इल्यीच। लेकिन पार्टी और जनता के शासन की योजनाओं और विचारों के बारे में वे केवल आपके मुंह से सुनना चाहते हैं। आनेवाले सारे लोग यही कहते हैं।"

"आप मज़ाक़ तो नहीं कर रहे हैं ना? क्या ऐसा ही कहते हैं वे?" लेनिन ने आंखें सिकोड़कर पूछा।

"हां, बिलकुल ऐसे ही कहते हैं, व्लादीमिर इल्यीच। आप, जिससे भी चाहें, पूछ लीजिये।"

लेनिन अपनी तैयार रिकार्डिंग को अधिकतर स्वयं ही सुना करते थे। कभी-कभी वे पूछते कि क्या यह उनकी आवाज़ से मिलती है और यह बताये जाने पर कि वह काफ़ी मिलती है, कि उनके स्वर व उच्चारण के सभी आरोह-अवरोह स्पष्ट सुनाई देते हैं, वे अविश्वास के साथ कंधे उचका देते। इस दृष्टि से उनके भाषण 'मध्यवर्गी किसानों के बारे में' का रिकार्ड विशेष रूप से अच्छा रहा।

लेकिन एक बार एक खेदजनक भूल हो गयी। रिकार्डिंग उपकरण के सामने अपना भाषण पढ़ते समय व्लादीमिर इल्यीच दो बार चूक गये। इसका पता रिकार्ड की पहली कापियां तैयार करने के बाद ही चल पाया। रिकार्डिंग दोबारा करनी चाहिए थी, पर कर्मचारी लेनिन को उनके द्वारा पढ़े गये भाषण को एक बार फिर पढ़ने को कहने में हिचकिचा गये। उन्होंने एक अच्छा बहाना सोच लिया।

कहने लगे कि रिकार्डिंग मशीनरी अक्सर धोखा दे जाती है, सुइयां घिस जाती हैं... यह सब काफ़ी सत्य प्रतीत होता था, पर सत्य नहीं था। व्लादीमिर इल्यीच ने तुरन्त यह महसूस किया और ख़राब रिकार्ड को सुनवाने को कहा। उन्होंने उसे ध्यानपूर्वक सुना और ख़त्म होने पर स्टुडियो में एकत्र लोगों पर शरारती नज़र डालकर पूछा:

"क्या कहते हैं आप कि मशीनरी धोख़ा दे जाती है? सुइयां भोथरी हो जाती हैं? आपका इशारा मैं साफ़ समझ गया! इसके लिए मैं क्षमा चाहता हूं। इसे दोबारा रिकार्ड करेंगे।"

कुछ दिन बाद नयी रिकार्डिंग की गयी, लेकिन उस बार लेनिन तब तक वहां से नहीं गये, जब तक कि उन्हें पूरा विश्वास न हो गया कि किसी प्रकार की 'चूक' नहीं हुई है।

स्टुडियो के कर्मचारियों ने ख़राब रिकार्ड को लोगों की नज़रों से दूर सबसे ऊपर की शेल्फ़ पर छिपाकर रख दिया, ताकि वह लेनिन को उनकी ज़बान अटकने की याद न दिला पाये। पर लेनिन जब भी रिकार्डिंग के लिए आते, उसे अवश्य ही शुरू से आख़िर तक सुनवाने को कहते और उन दो-तीन शब्दों के उच्चारण पर हंसा करते, जहां ज़बान ने उनका साथ नहीं दिया था। एक बार तो वह यह भी कह उठे:

"आप लोगों से बहुत विनती करता हूं, साथियो, कृपा करके यह रिकार्ड मुझे अपने निजी संग्रह में रखने के लिए भेंट कर दीजिये। इतनी कृपा कर दीजिये मुझ पर। करेंगे ना?"

स्टुडियो में मौजूद लोग शुरू में समझे कि लेनिन मज़ाक़ कर रहे हैं, पर उनकी समझ में नहीं आया कि इस मज़ाक़ का जवाब वे किस प्रकार दें।

लेकिन बाद में मालूम पड़ा कि लेनिन यह बात बिना किसी व्यंग्य के, पूर्ण गम्भीरता के साथ कह रहे थे :

"कभी मौक़ा मिलने पर एक ग्रामोफ़ोन ख़रीदूंगा और कभी-कभार इस रिकार्ड को लगाकर सुना करूंगा। अपनी सारी पकड़ में आ चुकी 'ग़लतियों' पर ध्यान दिया करूंगा। अपनी ग़लतियों से सीखना बहुत लाभदायक होता है। बहुत ही लाभदायक! मानते हैं ना?"

किसी ने उत्तर दिया :

"इसमें दो राय हो ही नहीं सकतीं, व्लादीमिर इल्यीच ..."

"देखिये इन साथी की भी यही राय है। कितनी अच्छी बात है! जब हम सबने यह तय कर ही लिया है कि रिकार्डों के माध्यम से पार्टी लोगों से बातचीत करती है तो यह उसे अत्यन्त स्पष्ट और सुगम भाषा में करनी चाहिए।"

'त्सेंत्रोपिचात्' के कर्मचारियों को लेनिन का यह असाधारण अनुरोध पूरा करना ही पड़ा। लेकिन यह अभी तक ज्ञात नहीं है कि लेनिन को उस रिकार्ड को फिर कभी एक बार भी सुनने का अवसर मिल भी पाया या नहीं। कहते हैं, वे ग्रामोफ़ोन कभी ख़रीद ही नहीं पाये।

मैं यह भी नहीं जानता कि वह रिकार्ड सुरक्षित रह भी पाया है या नहीं। इस बात की पूरी सम्भावना है कि

नहीं रह पाया। लेकिन इस क़िस्से को एक बार सुनने के बाद मैं इसे कभी नहीं भूल पाऊंगा।

मेरी कल्पना में वह काला रिकार्ड अभी तक लगातार घूमता ही रहता है। उसकी लाइनों पर सूई हचकोले खाती फिसलती जाती है और इतने वर्ष बीत जाने के बावजूद कभी घिसती नहीं है। बल्कि उसकी चमचमाती नोक लेनिन के जीवंत शब्दों को स्पष्ट रूप से साक़ार करती हुई और अधिक तेज़ होती जाती है।

कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के बारे में।

लाल सेना के बारे में।

सोवियत सत्ता के बारे में।
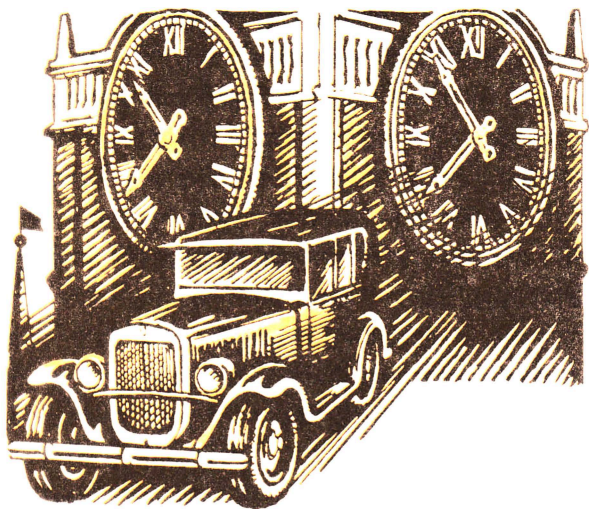
एक तीर से दो शिकार

शायद ऐसा कोई भी कारखाना, सैनिक दस्ता और कार्यालय नहीं था, जहां से लेनिन को उनके यहां आने, प्रश्नों का उत्तर देने और नये जीवन के बारे में बातचीत करने का अनुरोध न किया जाता हो। और लेनिन जितने ज़्यादा लोगों के यहां जाने लगे, जितनी ज़्यादा बार भाषण देने लगे, उनसे भेंट करने के इच्छुक लोगों की संख्या उतनी ही अधिक बढ़ती गयी। लेनिन स्वयं भी ऐसे कार्यक्रमों में सहर्ष जाते थे, क्योंकि संचार की व्यवस्था अच्छी नहीं थी, रेडियो लगभग ना के बराबर थे, जबकि

लाखों लोगों को घटनाओं से अवगत रखना, उनसे सलाह्-मशविरा करना, पार्टी के निर्णयों से, उसकी कार्यनीति व रणनीति के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पक्षों मे जनसाधारण को अधिकतम सटीक ढंग से, समय पर सूचना के 'प्रत्यक्ष स्रोत' द्वारा सूचित कराते रहना आवश्यक था।

कुछ संस्थाओं के प्रतिनिधि तो व्लादीमिर इल्यीच के स्वागत-कक्ष में ड्यूटी ही देने लगे थे, ताकि उपयुक्त अवसर मिलते ही उन्हें अपने साथ ले जा सकें, भले ही कुछ ही समय के लिए।

ड्यूटी देनेवालों की संख्या उस समय विशेषत: बढ़ जाती, जब जनता व राज्य के जीवन से सम्बन्धित मूलभूत प्रश्न खड़े होते। उदाहरण के लिए ऐसा पार्टी की दसवीं कांग्रेस के तुरन्त बाद हुआ था, जिसमें नयी आर्थिक नीति * के बारे में निर्णय लिया गया था। कांग्रेस की लॉबी में मास्को, उसके उपनगरों और दूर दूर के कर्मीसमूहों के प्रतिनिधि लेनिन की प्रतीक्षा करते रहते थे।

---

* नयी आर्थिक नीति — पूंजीवाद से समाजवाद में संक्रमन-काल के दौरान सो० सं० क० पा० तथा सोवियत राज्य द्वारा अपनायी गयी नयी आर्थिक नीति। सैन्य कम्युनिज़्म की आर्थिक नीति से भिन्न होने के कारण इसे 'नयी' आर्थिक नीति नाम दिया गया। इस नीति के अंतर्गत सोवियत राज्य ने पूंजीवाद के कुछ तत्त्वों को विकास का अवसर प्रदान किया। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अपनी सर्वोच्चता बरक़रार रखने की बदौलत राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का त्वरित विकास एवं उसका समाजवादी पुनर्निर्माण सुनिश्चित हुआ। इसे सन् 1921 में लागू किया गया और वह 1929 तक जारी रही।

बैठक के हॉल की सीढ़ियों से नीचे उतरते ही लेनिन ने अपने आप को प्रतीक्षा कर रहे लोगों से घिरा पाया। हर तरफ़ से आवाज़ें आने लगीं:

"व्लादीमिर इल्यीच, आपने हम से वादा किया था।"

"हम आपको लेने आये हैं, व्लादीमिर इल्यीच।"

"साथी लेनिन, हमारी जन-कमिस्सरियत के कर्मी इकट्ठा हो चुके हैं। कार में मुश्किल से बीस मिनट का रास्ता है।"

लेनिन ने जन-कमिस्सरियत के प्रतिनिधि के चेहरे पर ग़ौर से नज़र डालकर किंचित विस्मय के साथ पूछा:

"क्या? इकट्ठा हो भी चुके हैं?"

"इकट्ठा कर लिये गये हैं, व्लादीमिर इल्यीच। हमने आपके सचिव को एक सप्ताह पहले टेलीफ़ोन किया था। चाहे आधे घंटे के लिए ही चलिए..."

लेनिन ने वास्कट की जेब से घड़ी निकाली और खेदपूर्ण मुद्रा में सिर हिलाया। स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि उन्हें कहीं जाने में देर हो रही है। जन-कमिस्सरियत के प्रतिनिधि ने उनका पीछा फिर भी नहीं छोड़ा, छाया की तरह उनके साथ लगा रहा। उनके पीछे-पीछे थोड़े फ़ासले पर वे लोग भी सीढ़ियों से उतर रहे थे, जिन्हें लेनिन अभी तक किसी प्रकार का उत्तर नहीं दे पाये थे।

दरवाज़े के ऐन सामने कार लेनिन का इंतज़ार कर रही थी। उसके पास ही, लगभग उससे सटी एक और गाड़ी खड़ी थी। यह उसी जन-कमिस्सरियत की मोटर थी, जिसके लोग "इकट्ठे हो भी चुके थे"।

"मतलब मेरे पास अब और कोई चारा नहीं रहा?"

लेनिन ने फिर सिर हिलाया। "ठीक है, जैसी आपकी इच्छा, लेकिन सिर्फ़ आधे घंटे के लिए चलूंगा, यह ध्यान में रखिये।"

अन्य लोगों से विदा लेकर लेनिन ने अपनी कार की ओर क़दम बढ़ाया, पर अचानक रुककर जन-कमिस्सरियत के कर्मचारी से बोले:

"सुनिये, साथी, हम दो लोगों को दो आलीशान गाड़ियों में जाने की क्या ज़रूरत है? कोई तुक नहीं है इसमें। क्या मैं आपके साथ बैठ जाऊं? पेट्रोल की भी बचत हो जायेगी और साथी गील * को भी खाना खाने और आराम करने का मौक़ा मिल जायेगा। आख़िर हम दोनों को एक ही जगह तो जाना है, एक क़ाफ़िले में तो चलना नहीं है।"

"ज़रूर, व्लादीमिर इल्यीच, ज़रूर बैठिये! हम लोगों का भी यही विचार है।"

"बस मैं आपसे एक और बात का अनुरोध करना चाहूंगा," लेनिन ने कहा। "पूरा करेंगे?"

"बेशक, व्लादीमिर इल्यीच. आपका हर अनुरोध पूरा करेंगे..."

"अरे छोड़िये भी!" लेनिन ने उस व्यक्ति को टोक दिया। "खैर, एक मामूली-सा अनुरोध है मेरा। बाद में आप मुझे अपनी गाड़ी में एक और जगह छोड़ आइये। ठीक है? फिर उसी पेट्रोल और समय की बचत करने के लिए।"

---

* गील — लेनिन का ड्राइवर।

"ज़रूर छोड़ आऊंगा, व्लादीमिर इल्यीच, ज़रूर। जहां आप चाहेंगे, वहीं छोड़ आऊंगा।"

"यह हुई न अक़्लमंदी की बात। धन्यवाद। अच्छा, सुनिये, प्यारे साथी, क्यों न हम एक तीर से दो शिकार कर डालें, जब आपकी जन-कमिस्सरियत इतनी भली और जागरूक ही है तो?"

सम्भाषी ने यह समझने की चेष्टा करते हुए कि लेनिन का क्या तात्पर्य है, उनकी ओर प्रश्नात्मक दृष्टि से देखा। वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ खड़ा था। व्लादीमिर इल्यीच के लिए अपना आशय स्पष्ट करना आवश्यक था।

लेनिन ने उसके पास खड़े लोगों को मन-ही-मन गिनकर पूछा:

"आपकी मोटर में सात आदमी आ सकते हैं?"

"कह नहीं सकता, अभी ड्राइवर से पूछता हूं..."

"पूछिये मत, मैं जानता हूं कि ले-देकर सात आदमी बेशक इसमें बैठ सकते हैं। ज़रा ड्राइवर से मेरी ओर से कह दीजिये कि हम दोनों के साथ इन साथियों को भी बिठा ले, जिनके यहां आज मैं नहीं जा पाऊंगा। वे आपके यहां मेरा भाषण सुन लेंगे और अपनी संस्थाओं में जाकर वह सब बता देंगे, जो वे आज कांग्रेस के बारे में सुनेंगे। तर्कसंगत है ना? कितना अच्छा रहेगा!" अपने अनपेक्षित निर्णय पर ख़ुश होकर व्लादीमिर इल्यीच ने कहा।

उन्होंने अपने सम्भाषी को हौले से ड्राइवर की ओर ठेल दिया और उन पांच निराश, पर उनके निर्णय से फिर

उत्साहित हो उठे लोगों को चुपचाप इशारा करके बैठने को कह दिया।

दो-एक मिनट बाद ही बुरी तरह लदी मोटर बड़ी मुश्किल से स्टार्ट होकर धीरे-धीरे रफ़्तार पकड़ने लगी।

पूरे ज़ोर से घरघरा रहे इंजन के शोर के बीच लेनिन ने ड्राइवर से चिल्लाकर कहा:

"अगर कमानियां टूट जायें, तो दोषी मैं होऊंगा, घबराइये नहीं!"

ड्राइवर ने पीछे मुड़कर देखा। उसके चेहरे पर संकोचपूर्ण मुस्कान खेल गयी। लेनिन ने यह स्पष्ट देख लिया था। उस क्षण वे स्वयं बहुत ही अच्छे मूड में थे।

"रूस में सूर्योदय"

बड़े और निद्रामग्न घर में अक्सर आधी रात बाद भी खिड़की में धुंधली रोशनी टिमटिमाती रहती थी। कोहरे में लिपटे मास्को की पृष्ठभूमि में वह एक फैले हुए, मुश्किल से नज़र आनेवाले धब्बे जैसी लगती थी।

देर रात गये गुज़रनेवाले राहगीरों में से कोई भी यह अनुमान नहीं लगा सकता था कि यह किसी के काम की मेज़ पर जल रहे टेबल-लैम्प की रोशनी है।

कोई नहीं जानता था कि लेनिन सो नहीं रहे हैं, बल्कि हाथों में पेंसिल और पुस्तक लिये मेज़ पर बैठे हैं। लेनिन

एक पृष्ठ पढ़कर कुछ लिखते और आगे पढ़ने लगते, टेबल-लैम्प को थोड़ा और पास सरकाते और फिर पढ़ने लगते।

पर बहुत ही धुंधला प्रकाश होता था उस लैम्प का। लेनिन ने स्वयं ही उसमें इतना हलका बल्ब लगाने को कह रखा था।

"इससे बिल्कुल भी तेज़ नहीं होना चाहिए!"

उनके घरवाले और निकट मित्र बार-बार विरोध करते, उन्हें मनाने की कोशिश करते:

"ऐसा नहीं करना चाहिए, डाक्टर मना करते हैं। ऐसे तो अपनी आंखें ख़राब कर लोगे।"

पर लेनिन यही जवाब देते:

"कुछ नहीं होगा! मैं एकाध घंटा पढ़ूंगा और सो जाऊंगा।"

थोड़ी देर बाद बत्ती वास्तव में गुल हो जाती।

लेकिन बहुत कम लोगों को ही मालूम था कि ऐसा लेनिन के सो जाने से बिलकुल नहीं, बल्कि उनके कमरे में दिवालोक के प्रवेश के कारण प्रतीत होता है।

"चलिये, अच्छा हुआ। अब बत्ती बुझाई जा सकती है।" लेनिन उषा की प्रथम चंचल किरण को सुनहरे गुंबद पर अठखेलियां करते हुए क्लान्त दृष्टि से देखकर कहते।

और फिर अभी तक न ढली रात की नीरवता को पलटे जा रहे पृष्ठों की सरसराहट भंग करने लगती।

कोई भी यह ठीक से नहीं जानता था कि लेनिन कितने बजे सोते हैं और कितने बजे उठते हैं। उन्होंने स्वयं ही

अपने लिए सोलह घंटे का कार्य-दिवस निर्धारित किया था और उसे स्वयं ही लगातार भंग भी किया करते थे।

"सिर्फ़ आधा घंटा और फिर बस..."

एक बार घरवालों ने चुपके से धुंधले बल्ब की जगह ज़रा तेज़ रोशनी का बल्ब लगा दिया। लेनिन इस 'हेरा-फेरी' को फ़ौरन भांप गये, बहुत ग़ुस्सा हुए और स्थिति पूर्ववत किये जाने को कहने लगे।

"यह मेरे काम करने की जगह है। मेरे सिवा यहां और किसी को कुछ करने का अधिकार नहीं है। किसी को भी नहीं! सारा रूस बिना प्रकाश के बैठा है और आप लोग हैं कि यहां मेरे लिए जगमगाती रोशनी कर रहे हैं। किसलिए? किस कारण? याद रखिये—पन्द्रह वाट से एक भी ज़्यादा का बल्ब नहीं रहना चाहिए यहां!"

नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना ने सकुचाते हुए प्रतिवाद करना चाहा:

"लेकिन तुम्हारे सोलह घंटे के काम के दिन का क्या किया जाये? फिर इस मामले में भी सख़्ती बरतनी चाहिए। सोलह घंटे से एक भी घंटा ज़्यादा नहीं होना चाहिए!"

उन्होंने यह बात इतनी नरमी से कही कि व्लादीमिर इल्यीच का क्रोध तुरन्त शान्त हो गया।

"अगर यह बात है तो मैं मानने को लगभग तैयार हूं!.."

"लगभग से क्या मतलब? हम सब इस बात पर आग्रह करेंगे।"

"ठीक है, ठीक है, बिना किसी और शर्त के मानने को

तैयार हूं। लेकिन इतना याद रखो कि समय का ध्यान मैं ख़ुद रखा करूंगा।"

लेनिन काम करते समय घड़ी पर नज़र डालना अक्सर भूल जाते थे। लेकिन इस घटना के बाद से वे मेज़ पर काम करने बैठने से पहले चुपके से हरे लैम्प-शेड को थोड़ा-सा ऊपर उठाकर यह देख लिया करते थे कि वही बल्ब लगाया गया है या नहीं।

हर तरह के लोगों ने उस बल्ब को, उसके मुश्किल से टिमटिमाते फ़िलामेंट को देखा और उनमें से प्रत्येक के मन में भिन्न-भिन्न विचार और अनुभूतियां जागीं।

किसी ने उसे देखकर कहा:

"रूस अंधकारमय है..."*

दूसरे देखते और सोचते:

"रूस में सूर्योदय हो रहा है!.."

---

* यहां संकेत अंग्रेज़ लेखक एच० जी० वेल्स की पुस्तक ***Russia in the Shadows*** की ओर है।
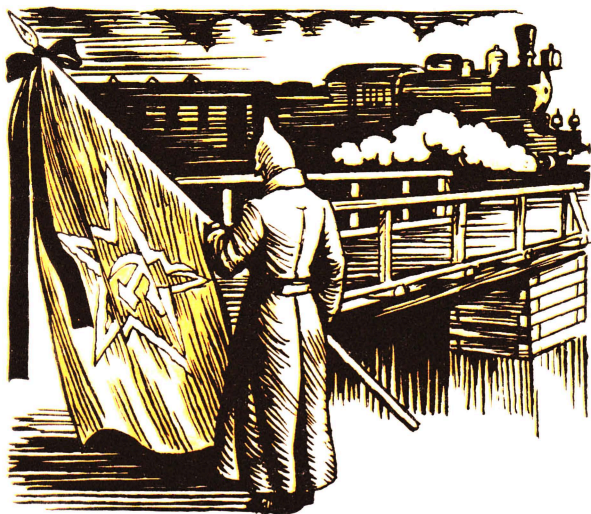
किंवदंती

हम सुबह की पहली ट्रेन से गोरकी पहुंचे और दिन-भर में हमने भवन, पार्क और आस-पास का पूरा इलाक़ा — सब कुछ देख लिया। भवन के हर कोने में गये, चरमराती, लगभग सीधी खड़ी सीढ़ियों पर सावधानीपूर्वक चढ़े, जिसमें दोनों तरफ़ से रेलिंग थी। लेनिन गम्भीर बीमारी के बाद यहां स्वास्थ्यलाभ करते समय इन्हीं सीढ़ियों से चढ़ा-उतरा करते थे। वसन्तकालीन हरे-भरे वृक्षों की ओर पूरी खुली खिड़कीवाले छोटे कमरे में कुछ क्षण मौन खड़े रहे। लेनिन ने इसी कमरे में अन्तिम सांस

ली थी। पार्क में हमने वे सब पगडंडियां छान मारीं, जिन पर लेनिन कभी चला करते थे। चारों ओर मौन साधे फैले हुए वन और खेतों को हमने देखा।

शाम को मास्को लौटते समय हम यात्रा के अनुभवों से परिपूर्ण, मन में उमड़ते विचारों और भावनाओं में डूबे हुए थे। हमें ऐसी अनुभूति हो रही थी, मानो हम किसी संग्रहालय में नहीं, बल्कि जीवित लेनिन के घर होकर आ रहे हैं।

यह स्पष्ट हो चुका था कि लेनिन और उनकी स्मृति से जुड़ी कोई भी बात कभी इतिहास के गर्त में नहीं समा सकती। लेकिन पुराने गोरकी के विशाल बलूतों की डालों में काल की हवा निरन्तर सरसराती रहती है और अब वहां काफ़ी अरसे से कई, एक से एक विचित्र किंवदंतियां व दंतकथाएं प्रचलित हैं।

डिब्बे में संयोगवश मिले एक सहयात्री, भूतपूर्व सैनिक ने, जिसके पदक रेलगाड़ी के पहियों की ताल के साथ खनक रहे थे, हमें एक अनोखा क़िस्सा सुनाया।

...लेनिन के देहावसान के बाद जब उन्हें अन्तिम बार हिमाच्छादित मास्को में ले जाने का समय आया, तो गोरकी का कमांडेंट बहुत परेशान हो उठा। व्लादीमिर इल्यीच के निवास-स्थान से स्टेशन जानेवाले मार्ग पर जो पुल बना हुआ था, वह जर्जर हो चुका था, जबकि उस पर से दसियों हज़ार लोगों को निकलना था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे, कैसे करे।

सामान्य परिस्थितियों में भी नया पुल बनाना काफ़ी कठिन होता है, जबकि यहां तो सब पर दुःख का पहाड़

टूट पड़ा था। कड़ाके की ठंड भी पड़ रही थी। कुल्हाड़ियां हाथों से फिसल रही थीं। झंडे बर्फ़ से ढके जा रहे थे, नज़र नहीं आ रहा था कि कहां लाल रंग ख़त्म होता है और कहां से काला रंग शुरू होता है।

मास्को से फ़ौरी तौर पर इंजीनियरों और विशेष सैनिक दस्तों को बुलवाया गया। बाईस जनवरी को तड़के ही सफ़रमैनाओं की टुकड़ियां गोरकी पहुंचने लगीं।

"जल्दी पहुंच गये वे लोग, बहुत जल्दी," पदकोंवाला सैनिक एक ठंडी सांस लेकर बोला, "लेकिन फिर भी देर से..."

"देर से कैसे?! हो ही नहीं सकता!" हममें से किसी ने भूतपूर्व सैनिक को टोक दिया। "आप पूरा क़िस्सा ज़रा ढंग से सुनाइये।"

"ढंग से ही सुना रहा हूं। हां, तो इंजीनियर आ पहुंचे, पर गोरकी में पुराना पुल ग़ायब हो चुका था, जैसे उसका कभी नाम-निशान भी नहीं रहा था। उसकी जगह नया पुल खड़ा था। इसे कोई चमत्कार मत समझिये। उसे किसानों ने रात-भर में तैयार कर दिया था। चारों ओर बहुत-से गांव हैं। हर घर से एक-एक शहतीर ले आये, हर किसी ने अलाव सुलगा लिया। बाक़ी सब कमाल रूसियों की सहज बुद्धि का था। सबसे मुश्किल काम था—ज़मीन खोदना। मिट्टी पूरी तरह जम चुकी थी, न आग का उस पर कोई असर हो रहा था, न ही घनों की चोटों का। सब्बल चलाने से ऐसी आवाज़ निकलती थी, मानो लोहे पर लोहे की चोट पड़ रही हो। सुबह होते होते मिट्टी कुछ बस में आ पायी।"

सच कहा जाये, तो हम में से किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि सैनिक की बात पर विश्वास करें या न करें। वह कुछ क्षण मौन रहा, सिगरेट सुलगाकर कनखियों से खिड़की के बाहर छाये अंधेरे की ओर देखकर फिर अपना क़िस्सा सुनाने लगा:

"इंजीनियरों ने पुल के चारों ओर घूम-घूमकर उसके हर शहतीर को ठोक बजाकर जांच लिया। इसके बाद सफ़रमैनाओं की पूरी की पूरी बटालियन ने उसके एक सिरे से दूसरे सिरे तक दसियों बार पूरे ज़ोर से मार्च करके देखा। कोई नुक्स नहीं मिला! पुल कांपा तक नहीं! इंजीनियरों ने किसानों के काम को बहुत अच्छा बता दिया और प्रमाणपत्र भी लिख दिया।"

"यह तो किंवदंती है!" भावविभोर हुए सैनिक को फिर किसी ने टोक दिया। "लेकिन ख़ूब सोच-समझकर गढ़ी गयी है।"

"मैं नहीं जानता कि यह किंवदंती है या नहीं," सैनिक अपनी सीट से उठ खड़ा हुआ, "इसे जैसा चाहे समझिये, पर उस पुल को मेरे पिता ने खुद अपने हाथों से बनाया था, ईश्वर उनकी आत्मा को शान्ति दे।"

सैनिक धीरे-धीरे दरवाज़े की ओर बढ़ने लगा। डिब्बे के छोर पर पहुंचकर वह हमारी ओर मुड़कर, धीरे से, पर हम सबको स्पष्ट सुनाई देनेवाले स्वर में बोला:

"किंवदंती समझते हैं, तो किंवदंती ही सही। जैसी आपकी इच्छा। लेकिन उस पुल पर बाईस जनवरी को मैंने खुद सफ़रमैना की वर्दी में दस बार मार्च किया था। असल बात यही है।"

ट्रेन रुक गयी। सैनिक एक छोटे-से स्टेशन पर उतर गया। गाड़ी आगे चल दी।

सारे रास्ते, मास्को पहुंचने तक मेरे कानों में सैनिक के सीने पर लगे पदकों की खनक गूंजती रही।

कट्टर नास्तिक की भेंट

यह सोवियत शासन के आरम्भिक वर्षों की बात है।

बिर्योज़्की नामक गांव का चर्च जल गया। चर्च लकड़ी का बना था और बहुत पुराना था। सौ बरस वह काल और बर्फ़ की मार सहता हवा और धूप में सूखता रहा था। आग जो लगी, तो वह पूरा का पूरा जलकर राख हो गया। उसका घंटा भी पिघल गया। उसका केवल गोल कांस्य पिंड ही बचा।

गांववाले बहुत दु:खी हुए। उन्होंने एक पत्र में यह

लिखकर, कि ऐसी ऐसी बात हो गयी है, हमारी मदद कीजिये, उसे मास्को भेजने का फ़ैसला किया।

घोल-घालकर स्याही तैयार की, कहीं से एक काग़ज़ ले आये और मेज़ के इर्द-गिर्द बैठ गये। पर लिखे कौन? गांव में एक जो पढ़ा-लिखा था, वह लड़ाई में गया, तो वापस नहीं लौटा। लिखना जाननेवालों की नयी पीढ़ी अभी बड़ी नहीं हो पायी थी।

"वैसे इस वक़्त डाक भी आती-जाती है या नहीं? बेहतर होगा ख़ुद ही लेकर जायें," चरवाहे निकोदीम ने कहा। "पक्के तौर पर पता लगाने के लिए सीधे लेनिन के पास पहुंचने की कोशिश करनी चाहिए।"

"ख़ूब सूझी तुम्हें सीधे लेनिन के पास जाने की!" गांववाले हंस पड़े।

"उन्हीं के पास जाना होगा!" चरवाहे ने हठपूर्वक कहा। "वे हमारे जीवन को अच्छी तरह जानते हैं। वे हमारी प्रार्थना स्वीकार करेंगे, बस उनके साथ बात करने का तरीक़ा आना चाहिए।"

"जब तुम इतने अक्लमंद और तेज़ हो, तो तुम्हें ही जाना चाहिए!"

"ठीक है, यही सही," निकोदीम ने कान के पीछे खुजलाकर कहा।

उस समय निकोदीम को ख़याल भी न था कि उसने कितना मुश्किल काम करने का बीड़ा उठा लिया है। मास्को तक पहुंच पाना आसान काम सिद्ध न हुआ। न जाने कितनी बार डिब्बे से लटककर जाना पड़ा चरवाहे को, न जाने कितनी गाड़ियां छूटीं उससे!

लेकिन सबसे बड़ी कठिनाई का सामना उसे लेनिन के कार्य-कक्ष में करना पड़ा।

कक्ष में क़दम रखते ही निकोदीम एकाएक सकुचा गया। लेनिन उससे पूछने लगे कि उसका सफ़र कैसा रहा, गांव में कैसे हाल हैं, पर निकोदीम इधर-उधर की बातें करता रहा और अपने क्रेमलिन में आने का वास्तविक कारण किसी तरह बता ही नहीं पाया।

चरवाहा अपनी टोकरी में से सादी रोटी निकालकर लेनिन को भेंट करने लगा, तो वे मुस्करा पड़े:

"स्वादिष्ट है। बहुत स्वादिष्ट है! पर आप फिर भी यह तो सच-सच बताइये कि आप इतनी दूर से आख़िर यहां किसलिए आये हैं?"

"सच बताऊं, व्लादीमिर इल्यीच, हम आपसे घंटा मांगने आये हैं। हमारा चर्च जलकर राख हो गया है..."

"आप मज़ाक़ तो नहीं कर रहे हैं ना?.."

"बिलकुल नहीं, व्लादीमिर इल्यीच। गांव के सारे लोगों की ओर से आपसे यही विनती करते हैं।"

लेनिन बड़ी हैरानी के साथ मेज़ से उठे।

"वाह, क्या कहने! नहीं, भई, इस बात का कोई जवाब नहीं! सबसे कट्टर नास्तिक से आप घंटा मांगने आये हैं! ऐसी बात तो लेव तोलस्तोय भी कभी नहीं सोच सकते थे!.."

"जी, मैं... जी, हम... कहीं कोई जाड़े में रास्ता भटक जाये, तो घंटा बजा देंगे, मतलब आदमी की जान बचाने के लिए," चरवाहे ने, जिसे घंटे का यह झमेला

अब वास्तव में बेतुका लगने लगा था, बड़े भोंडे ढंग से सफ़ाई दी।

लेनिन निकोदीम के सामने चहलक़दमी करते इतने ज़ोर से हंस रहे थे कि उन्हें देखकर चरवाहा भी उनसे अप्रभावित न रह सका और दोषी की तरह झेंपकर उनकी ओर देखता बरबस मुस्कराने लगा। लेकिन सच कहा जाये, तो उसका मन मज़ाक़ करने का न था।

पर लेनिन अचानक कुछ याद करके अपनी मेज़ के पास पहुंचे। उन्होंने जब पलटकर देखा, तो उनके चेहरे की हंसी क़ाफ़ूर हो चुकी थी।

"प्यारे साथी निकोदीम, मुझे आपको यह बताने की ज़रूरत नहीं है कि आज हमारा देश किस हालत में है। हमारे पास सिर्फ़ अनाज ही नहीं, ईंधन और धातु तक नहीं हैं। मुझे अभी एक विदेशी महानुभाव से तुरन्त बात करनी है, पर दो हफ़्तों से टेलीफ़ोन ही नहीं मिला पा रहे हैं, सारी लाइनें टूटी पड़ी हैं, तार के लिए तांबा ही नहीं है।" लेनिन पूर्णत: गम्भीर हो उठे। "पूरी बात स्पष्ट हो गयी आपको, साथी निकोदीम?"

"हो गयी, व्लादीमिर इल्यीच।"

"तो ठीक है! मेरी ओर से गांव में सबसे माफ़ी मांग लीजिये। यही कह दीजिये कि लेनिन ने घंटा नहीं दिया, लेकिन इसका उनके पास ठोस कारण है।"

"यही कह दूंगा, व्लादीमिर इल्यीच।"

निकोदीम ने घर लौटकर अपने गांववालों को पूरा क़िस्सा सच-सच सुना दिया, वे केवल सिर ही हिलाते रहे।

"तुमने बेकार ही उनका ध्यान काम से बंटाया।"

"हां, बेकार ही," निकोदीम ने स्वीकार किया, "ज़ाहिर है, उनके पास बहुत-से काम हैं, हमारे काम से भी कहीं ज़्यादा ज़रूरी।"

वसन्त में जब निकोदीम की मास्को यात्रा के बारे में लोग लगभग भूल ही चुके थे, अचानक गांव में मास्को से कोई घंटा लेकर आ पहुंचा...

"संभालिये," असाधारण पार्सल लेकर आये चेहरे-मोहरे से मज़दूर जैसे लगनेवाले आदमी ने निकोदीम से कहा। अनोखे घंटे को देखने के लिए सारा गांव जमा हो गया। घंटा छोटा, सामान्य ओखली से थोड़ा बड़ा था, पर उसकी चमचमाती सतह पर मई की धूप इस तरह अठखेलियां कर रही थी कि निकोदीम के हाथों में, जो उसे अपने सिर के ऊपर उठाये हुआ था, वह चांदी के एक बहुत बड़े डले जैसा लग रहा था।

चरवाहे के पास खड़े मज़दूर ने घंटे पर आलंकारिक स्लाव लिपि में चमचमाते उत्कीर्ण शब्दों को वहां एकत्र लोगों को ज़ोर-ज़ोर से पढ़कर सुना दिया:

"वल्दाय नगर में कारीगर द्वारा ढाला गया..."

उसने चारों ओर नज़र दौड़ाकर मौन हो उठे लोगों की आंखों में झांकते हुए कहा:

"साथियो! व्लादीमिर इल्यीच ने यह कहलवाया है आप लोगों से कि वे रूस के और सारी दुनिया के सबसे कट्टर नास्तिक हैं। और उसके आगे की बात आप ख़ुद ही समझते हैं।"

जाड़ा आने तक बिर्योज़्की में स्कूल बनकर तैयार हो

गया। इस अवसर पर एकत्र हुए ग्रामवासियों ने निर्णय किया :

"चर्च तो हमारे यहां फ़िलहाल नहीं है। इसलिए आइये इस घंटे को स्कूल पर लटकाये देते हैं, उसके बाद देखा जायेगा।"

घंटे की कर्णप्रिय आवाज़ सुनकर आस-पास के गांवों के बच्चे अपनी किताबें उठाकर स्कूल रवाना होने लगे।

शीघ्र ही उस इलाक़े में प्रथम सामूहिक फ़ार्म स्थापित किया गया। घंटा किसानों को काम पर बुलाने लगा, ऐसी मेहनत करने को, जिससे देश के इतिहास में लोगों को पहली बार सुख और आनन्द प्राप्त हुआ।

जब महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध छिड़ा, तो सारे इलाक़े में ख़तरे का संकेत फैल गया और सभी लोग अपने चिर-परिचित घंटे की आवाज़ पहचान गये। लोग मातृभूमि की रक्षा करने चल पड़े।

लेनिन का भेंट किया हुआ घंटा आज भी धूप में चमचमाता स्कूल के सामने लटका हुआ है। जिसे एक बार भी बिर्योज़्की जाने का अवसर मिलेगा, वह रूसी कारीगर द्वारा बहुत पहले ढाले गये, पर आज तक अपने नाद को पूर्ववत रखनेवाले घंटे को कभी नहीं भूल सकेगा।

बिर्योज़्की में घंटा प्रति दिन बजता रहता है। पर मुझे ऐसा आभास होता है कि वर्ष-प्रतिवर्ष उसका स्वर अनवरत शुद्ध होता जा रहा है और भी दूर तक गुंजायमान होता जा रहा है।

लेनिन पेरिस में

कई वर्ष हुए मुझे ममाचारपत्रों मे और उसके बाद पेरिस के अपने परिचितों के पत्रों मे मालूम पड़ा कि फ़्रांसीसियों द्वारा अपनी राजधानी के मरी-रोज़ मार्ग पर जी-जान से संभालकर रखे जा रहे लेनिन के भूतपूर्व निवास-स्थान पर गुंडों ने तोड़-फोड़ की। "वे सुबह पांच बजे आ धमके," एक परिचिन ने पत्र में लिखा। "उनके हाथों में लोहे की छड़ें थीं। अंदर घुसते ही उन्होंने हर चीज़ को तोड़ना-फोड़ना शुरू कर दिया, जो भी उनके

हाथ पड़ी। और जब शोर मचा, तो वे कायरों की तरह भाग गये।''

लेकिन इससे पेरिस स्थित छोटे-से लेनिन संग्रहालय का अस्तित्व समाप्त नहीं हुआ और न ही फ़्रांसीसी धरती से उसका नाम-निशान मिटा। अमूल्य स्मृतिशेषों को नष्ट किया जा सकता है, फ़र्नीचर को तोड़ा जा सकता है, पुस्तकों को जलाकर राख किया जा सकता है, पर लेनिन के प्रति पेरिस के मेहनतकशों के प्रेम को जड़ से उखाड़ पाना असम्भव है। इस घटना के पश्चात शीघ्र ही 'मरी-रोज़' लिखी पुरानी पट्टी के स्थान पर नयी पट्टी लगा दी गयी। उस पर स्लेट की बत्ती से 'र्‍यू दी लेनिन' (लेनिन मार्ग) लिखा हुआ था। यह कह पाना कठिन था कि यह नाम सरकारी तौर पर बना रहेगा, या सड़क को वापस पुराना नाम दे दिया जायेगा। किन्तु इतना निस्सन्देह कहा जा सकता है कि पेरिस का यह पता अनेक पेरिसवासियों के हृदयों में अंकित हो चुका है।

मास्को में अपने देशवासियों को यह सब बताते हुए मैंने हर बार कहा कि अगर वे पेरिस जायें, वहां किसी टेक्सी में बैठें और लेनिन मार्ग जाने को कहें, तो ड्राइवर उनसे कोई और सवाल किये बिना सीधे उनके गन्तव्य पर पहुंचा देगा। पर यह सब बताते हुए मुझे हमेशा यह याद आता रहा कि पेरिसवासियों की अपने नगर की जानकारी कितनी ख़राब है। कितनी बार मैंने पुलिसमैनों को हाथों में नक़्शा लिये राजधानी के किसी इलाक़े में जाने के इच्छुक पर्यटकों को देर तक रास्ता बताते हुए देखा।

इस बार फिर पेरिस पहुंचने पर मैंने स्टेशन से बाहर निकलकर टेक्सी ढूंढ़ी।

"मुझे लेनिन मार्ग जाना है," मैंने फ़्रांसीसी में कहा।

टेक्सी-ड्राइवर ने सोच-विचार में एक सेकंड भी नहीं लगाया। उसकी आंखों में भावपूर्ण दृष्टि झलकी, उसने चुटकी बजायी और हम पूरी रफ़्तार से नगर के दूसरे छोर की ओर रवाना हो गये। यहां "पूरी रफ़्तार" कहना केवल अतिशयोक्ति ही होगा। पेरिस में पच्चीस लाख से अधिक मोटर-वाहन हैं और हर समय ट्रैफ़िक-जाम होते रहते हैं। वैसे तो मुझे यही लगता रहा कि इतनी धीमी रफ़्तार से मैंने ज़िंदगी में पहले कभी सफ़र नहीं किया था।

अन्तत: लेनिन मार्ग पहुंचने पर वह चिर अभीप्सित मकान दिखाई दिया, और ड्राइवर ने मेरे कुछ कहे बिना ही गाड़ी उसके सामने रोक दी। मैंने सीढ़ियों से ऊपर चढ़कर घंटी बजायी। दरवाज़ा मेरे पूर्वपरिचित व्यक्ति ने ही खोला। वे लेनिन संग्रहालय के संग्रहपाल अंतुआन लेजांद्र थे। मास्को के लेखकों द्वारा पेरिस के लेनिन संग्रहालय को उपहारस्वरूप मेरे साथ भेजी गयी पुस्तकों को स्वीकार करके लेजांद्र ने हार्दिक धन्यवाद व्यक्त किया। वे हर पुस्तक के पृष्ठ काफ़ी देर तक उलटते रहे, एक के बाद दूसरे हस्ताक्षरों को ध्यान से देखते रहे और फ़्रांसीसी भाषा में लिखे शब्दों को पढ़कर भावविह्वल होकर हाथ सीने पर रखते रहे।

"कोटिश: धन्यवाद, कोटिश: धन्यवाद!" लेजांद्र कह उठे और उन्होंने मुझे संग्रहालय देखने को आमंत्रित किया।

"हां, आपकी पिछली यात्रा के बाद यहां काफ़ी कुछ

बदल चुका है। बहुत ही ज़्यादा! यह सच है कि कुछ लोगों ने हमारी राह में रोड़े अटकाये थे। लेकिन देखिये, फ़्रांसीसी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति के सौजन्य से हमने सब कुछ पहले जैसा कर लिया है! हमने दिन-प्रतिदिन बढ़ते जा रहे प्रदर्शों के लिए एक और मकान ख़रीद लिया है।"

वैसे वे अपनी इच्छित सभी वस्तुएं संग्रह कर पाने में पूर्णत: सफल नहीं हो पाये थे। सन् 1912 से पहले प्रकाशित पुस्तकें, जैसे ले० नि० तोलस्तोय का उपन्यास 'युद्ध और शान्ति', जिसे लेनिन ने यहां रूसी में पढ़ा था, ढूंढ़ पाना कठिन है। जनरल क्लूज़ेरे* की पुस्तक भी नहीं मिल पायी। लेजांद्र ने सुना था कि उस पुस्तक की एक प्रति जेनेवा में "पुस्तकप्रेमी समाज" के पुस्तकालय में है। मैंने इसकी पुष्टि करते हुए कहा कि मैंने वह संस्करण गत वर्ष देखा था। वह पुस्तकाध्यक्ष के पास सुरक्षित है, जिनसे परिचित होने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। उनका नाम श्री पीको है। लेजांद्र ने कहा कि उन्हें ऐसे पुस्तकालयों मे ईर्ष्या होती है, जिनके पास इतनी दुर्लभ पुस्तकें हैं। उन्होंने संग्रहालय का एक अत्यन्त मूल्यवान व नवीनतम प्रदर्श—विख्यात सोवियत मूर्तिकार तोम्स्की द्वारा बनायी व्लादीमिर इल्यीच की मूर्ति मुझे अत्यन्त गर्वपूर्वक दिखायी।

विभिन्न देशों के अनेक लोग संग्रहालय की सहायता

---

* क्लूज़ेरे गुस्ताव पॉल (1823—1900)—पेरिस कम्यून (1871) के सदस्य, गेरीबाल्डी की सेना में वालंटियर, अप्रैल, 1871 में पेरिस कम्यून के रक्षात्मक मोर्चे के सेनापति।

करने को उत्कंठित हैं। लेजांद्र ने बताया कि उन्हें उस कमरे में, जिसमें लेनिन सन् 1912 में रहे थे, दीवार पर लगे एक शीशे के पीछे उस समय के वॉल-पेपर का एक टुकड़ा बहुत अच्छी हालत में मिला है। उन्होंने उस नमूने का वॉल-पेपर पेरिस में तैयार करवाने की कोशिश की। उन्होंने एक सिंडीकेट को आर्डर दिया, अच्छे चित्रकार भी मिल गये, पर काम बीच में ही रुक गया, क्योंकि सिंडीकेट के मालिक ने यह कहकर बहुत ऊंची क़ीमत मांगी कि हमारे ज़माने में इस तरह का वॉल-पेपर औद्योगिक पैमाने पर नहीं बनाया जा सकता, इसलिए मैं और किसी शर्त पर काम नहीं कर सकता।

"तब हमने मास्को में व्ला० इ० लेनिन केन्द्रीय संग्रहालय को पत्र लिखने का निश्चय किया," लेजांद्र ने कहा। "दो-तीन महीने तक कोई उत्तर नहीं मिला। हमने सोचा कि हमने रूसी साथियों को एक असम्भव कार्य करने को कह दिया है। लेकिन एक शुभ दिन को अचानक एक पार्सल मिला। हमने जब उसे खोला, तो उसमें हू-बहू वैसे ही वॉल-पेपर के रोल रखे हुए मिले, जिसकी हमें ज़रूरत थी। अब वह वॉल-पेपर व्लादीमिर इल्यीच के कमरे में लगा दिया गया है। आप देख लीजिये।"

लेजांद्र काफ़ी देर तक मुझसे हाथ मिलाकर मेरा हाथ पकड़े रहे, मानो मैंने स्वयं ही वे लाल फूल चित्रित किये हों, उनके स्केच तैयार किये हों और मशीन पर उन्हें छापा भी हो।

मैंने लेजांद्र से पूछा कि क्या लोग यहां अक्सर आते हैं।

"आज क्या तारीख है? बीस?" लेजांद्र ने दर्शक-पंजी

खोलकर दिखायी। "देखिये सिर्फ़ एक घंटे पहले लिखी गयी हैं ये पंक्तियां, जबकि दिन अभी शुरू ही हुआ है।"

मेरे लिए अज्ञात भाषा में लिखे शब्दों तले महीन अक्षरों में किये हस्ताक्षरों के स्तंभों के नीचे तारीख़ लिखी थी: "20 मार्च, सन् 1983"।

और भी सैकड़ों, हज़ारों सन्देश थे। विश्व के कोने-कोने से इन छोटे-छोटे कमरों की ओर उमड़े पड़नेवाले लोगों का तांता सदा बंधा ही रहेगा।

अपना अपना मोंब्लां और कज़बेक

जेनेवा के हवाई अड्डे पर जिम म्विम मे मेरी बात हुई, उसने मुझसे कहा:

"आप सौभाग्यशाली हैं। देखिये. किनना अच्छा मौसम है!"

इसे क्या कहा जाये? क्या ये साधारण शब्द थे, जिनका कोई विशेष अर्थ नहीं होता और जिनका अदान-प्रदान प्राय: अपरिचितों के बीच होता है? लेकिन मालूम पड़ा यह बात नहीं थी। जेनेवा झील के किनारे इन शब्दों का एक विशेष अर्थ होता है। मेरे सम्भाषी ने बादलों

के बीच से निकले हुए हिमधवल शिखर की ओर दृष्टि डालकर कहा:

"आपको मोंब्लां * नज़र आ रहा है? यह एक शुभ लक्षण है! यह दृश्य वर्ष में तीस दिन से अधिक देखने को नहीं मिलता है।"

क्षितिज पर तनकर खड़े विशाल पर्वत को मैंने ध्यान से देखने की चेष्टा की। मुझे याद हो आया कि उत्तरी ओसेतिया में मैं जब एक बार कज़बेक पर्वत को मंत्रमुग्ध-सा देख रहा था, तब मेरे ओसेतियाई मित्र अज़मत ने, जो ओर्जोनिकीद्ज़े में रहता है, मुझसे कहा था कि मैं बहुत भाग्यशाली हूं, अपने साथ अच्छा मौसम लेकर आया हूं, इसके बाद भोर में उसने मुझे दो बार जगाकर कहा था: "उठो, प्यारे दोस्त, कज़बेक फिर दिखाई दे रहा है!"

मैंने यह क़िस्सा उस स्विस को सुनाया, तो वह अपरिचित हंसकर बोला:

"शायद हर आदमी का अपना अपना मोंब्लां और कज़बेक होता है!"

वैसे उसे अपरिचित कहना अनुचित होगा। स्विस भूमि पर वह मेरा प्रथम परिचित था। उसका नाम आनरी था। वह भारी ट्रक चलाता था और उसका घर जेनेवा से थोड़ी दूर, पहाड़ों में था। यह मालूम पड़ने पर कि मैं कौन हूं, कहां से और किसलिए आया हूं, आनरी ने मुझे अपने यहां आने का निमंत्रण दिया और कसकर हाथ मिलाया। उसने

---

* मोंब्लां—पश्चिमी आल्प्स पर्वत-शृंखला का एक ऊंचा शिखर।

मुझे विश्वास दिलाया कि मुझे सर्वत्र सफलता मिलेगी। मैंने उसे हृदय से धन्यवाद दिया, पर यह बात मेरी समझ में नहीं आयी कि मुझे सफलता मिलेगी क्यों, जबकि वह तो हर क़दम पर मेरा साथ दे रही थी, वायुयान की सीढ़ियों पर पैर रखने के क्षण से ही।

सारे रूसी एक-से होते हैं

जेनेवा के बारे में न जाने कितना पढ़ा और सुना है! और किसी स्थान के बारे में भले ही यह कहना ठीक हो या न हो, पर यहां का तो वास्तव में "हर पत्थर लेनिन को जानता है"।* लेनिन इन रास्तों से आते-जाते रहे थे, इन सड़कों पर से साइकिल चलाते हुए शहर के एक छोर से दूसरे छोर पर जाया करते थे। इन चिनारों तले अपने मित्रों से मिला करते थे। यहां वे स्विट्ज़रलैंड में प्रवासी रूसी क्रान्तिकारियों के समक्ष भाषण दिया करते थे। यहां वे छापाख़ाने में समाचारपत्र और पर्चे छापा करते थे और उन्हें रूस भिजवाते थे... वे यहां पहली बार सन् 1895 में प्लेख़ानोव** से मिलने आये थे। सन् 1900 में साइबेरिया में तीन वर्ष तक निष्कासन में रहने के बाद वे समाचारपत्र

---

* महान सोवियत कवि मायाकोव्स्की (1893—1930) की कविता 'व्लादीमिर इल्यीच लेनिन' की एक पंक्ति।

** गे० व० प्लेख़ानोव (1856—1918)—रूसी व अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक-जनवादी आन्दोलन के कार्यकर्त्ता, दार्शनिक, मार्क्सवाद के प्रचारक।

'ईस्क्रा'* के प्रकाशन की व्यवस्था करने दोबारा जेनेवा आये थे। सन् 1903 में वे नदेझ्दा कोंस्तांतीनोवना और उनकी माता एलिज़ावेता वसीलियेवना के साथ आकर दो से कुछ अधिक वर्ष के लिए सन् 1905 की पहली रूसी क्रान्ति तक यहां रहे थे। इसके बाद और भी कई बार आये थे।

स्विस सहित्यकार मोरिस पिआंज़ोला ने 'लेनिन स्विट्ज़रलैंड में' नामक पुस्तक लिखी थी। उसका आरम्भ इस प्रश्न से होता है: "यह पुस्तक आज से बहुत पहले क्यों नहीं लिखी गयी थी? आधुनिक विश्व का महामानव लेनिन हमारे देश में मई, 1895 से लेकर अप्रैल, 1917 तक बीच-बीच में काफ़ी लम्बे अन्तरालों के साथ कुल मिलाकर लगभग सात वर्ष तक रहा था।"

"हमने सारी सामग्री का सूचीकरण कर लिया है, संदर्भ-पुस्तिकाओं में दर्ज कर लिया है। क्या सभी स्थानों पर जाना ज़रूरी है?" मेरे गाइड एक जेनेवावासी ने मुझसे पूछा।

"ज़रूरी है। सभी स्थानों पर," मैंने बेझिझक जवाब दिया।

"लेकिन बहुत-से ऐसे मकान अब नहीं रहे हैं, जिनमें लेनिन रहे थे। हमारे कुछ रूट केवल प्रतीकात्मक होंगे।"

---

* 'ईस्क्रा' ('चिनगारी')—लेनिन द्वारा स्थापित, अपने सम्पादन में 1900—1903 के दौरान प्रकाशित प्रथम अखिल रूसी राजनैतिक मार्क्सवादी ग़ैरकानूनी समाचारपत्र। रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की द्वितीय कांग्रेस के बाद मेंशेविकों द्वारा हथिया लिया गया था और अक्तूबर, 1905 तक प्रकाशित हुआ था।

"सभी स्थानों पर जायेंगे!" मैंने हठ किया।

"सारे रूसी एक-से होते हैं!" गाइड हंस पड़ा। "सच मानिये, आज तक कोई भी ऐसा सोवियत संघ से आनेवाला नहीं मिला, जिसने मेरे प्रश्न का दूसरी तरह उत्तर दिया हो।"

"हम सब अपनी आंखों से देखना पसंद करते हैं। इसके अलावा उन स्थानों की हवा में सांस लेने की भी इच्छा होती है।"

"मैं कह तो रहा हूं कि आप सभी एक जैसे होते हैं! लेकिन बस इतना ध्यान रखिये कि हवा अब उस ज़माने जैसी बिलकुल नहीं रही है।"

मेरा साथी यह भली-भांति समझता था कि मैं कौन-सी "हवा" की बात कर रहा हूं, लेकिन अवसर का लाभ उठाकर वह उस सभ्यता को कोसे बिना नहीं रह सका, जो सुन्दर नगर जेनेवा का दम घोंटती जा रही है, तरह-तरह के नामी पेट्रोल से उसे विषाक्त किये डाल रही है।

अविस्मरणीय

हम जेनेवा के भूतपूर्व उपनगर सेशेरों में पहुंचे। लेनिन यहां जेनेवा झील के तट पर बने पार्क के निकट 10, फ़ुआये स्ट्रीट पर एक छोटे-से मकान में जून, 1903 से जून, 1904 तक रहे थे। मेरे गाइड ने बताया:

"उस ज़माने में यहां साइकिलें ही साइकिलें नज़र आती थीं। अब सिर्फ़ कारें ही कारें नज़र आती हैं।"

कारें वास्तव में इतनी थीं कि हमारी छोटी-सी फ़ोक्सवेगन तक को एक मिनट के लिए खड़ा करने की भी जगह नहीं मिल रही थी।

"फिर भी रुकेंगे ज़रूर," मैंने आग्रह किया।

फ़ुटपाथ से सटाकर खड़ी की हुई कारों की अनवरत क़तार के बीच थोड़ी ख़ाली जगह मिलने तक हमें एक ही मार्ग के कई चक्कर काटने पड़े।

"उफ़, कैसी जगह है! सिर चकरा गया। लेकिन मेरे ख़याल से अगर आज लेनिन को अपने लिए जेनेवा में कोई रहने की जगह ढूंढ़नी पड़ती, तो भी वे फिर इसी स्थान पर रहना पसंद करते।"

"आप ऐसा क्यों सोचते हैं?"

"ज़्यादा महंगा नहीं है! और आस-पास मज़दूर वर्ग रहता है। दस नंबर का मकान हमारे ज़माने तक नहीं खड़ा रह पाया। सन् 1963 में फ़ुआये स्ट्रीट के सारे पुराने घर ढहा दिये गये, उनकी जगह पर नये मकान बन चुके हैं। इस समय पक्की तौर पर यह निश्चित करना मुश्किल है कि दस नंबर का मकान कहां था, लेकिन जेनेवा में बहुत-से लोगों को उस घर की याद है। यहां सेशेरों में लेनिन ने अपनी 'एक क़दम आगे, दो क़दम पीछे' मशहूर पुस्तक लिखी थी। यहीं से उसे रूस भेजा गया था, जहां मज़दूरों के बीच व्यापक रूप से वितरित की गयी। पहले संस्करण के प्रथम पृष्ठ पर लिखा था: 'जेनेवा। सन् 1904'।"

फ़ोक्सवेगन में हम नगर-केन्द्र से प्लेंपाले चौक पर पहुंचे।

"लेनिन यहां बहुत ही कम समय रहे थे," मेरे साथी ने कहा, "लेकिन जेनेवा में यह पता भी लोग अच्छी तरह जानते हैं, हालांकि इस स्थान को कहीं दर्शाया नहीं गया है।"

निस्सन्देह इसका कोई महत्त्व नहीं कि लेनिन से सम्बन्धित कोई स्थान सरकारी तौर पर दर्शाया गया है या नहीं। महत्त्व लोगों की स्मृति का है, जिसमें ये स्थान प्रेमपूर्वक संजोये हुए हैं। हमारी फ़ोक्सवेगन आगे बढ़ती रही। एवेन्यू द्यू मई, कोल्लीन स्ट्रीट, करूज स्ट्रीट, मारेशे स्ट्रीट... हम हर सड़क पर रुकते गये। हर जगह मैं पैड लिये गाड़ी से बाहर निकला। सिर पीछे को करके मैंने मुझे बतायी गयी हर खिड़की की ओर ग़ौर से देखा। मेरी ओर नज़र डालनेवाले राहगीरों के चेहरों से स्पष्ट हो रहा था कि वे जानते हैं कि मैं यहां किसलिए आया हूं। वे मुस्करा देते थे. मेरे कुतूहल को बुरा नहीं कहते थे। और आवश्यकता पड़ने पर हर सम्भव सहायता करने को तत्पर थे। हम लोगों ने बातचीत नहीं की, पर फिर भी हमारे बीच एक प्रकार का नि:शब्द वार्तालाप चलता रहा।

अन्तत: सरकारी तौर पर दर्शाया लेनिन का एक स्थान हमें मिल गया। डेविड द्युफ़ूर स्ट्रीट पर एक पुराने पांचमंज़िला मकान के बाहर एक स्मृति-पट्टिका लगी हुई थी। उसे सन् 1967 में सोवियन शासन की पचासवीं वर्षगांठ के अवसर पर लगाया गया था। उस पर लिखा था: "व्लादीमिर इल्यीच उल्यानोव-लेनिन—सोवियत संघ के संस्थापक—इस घर में सन् 1904—1905 में रहे थे"।

यहां से वे नवम्बर, 1905 में रूस गये थे। उस समय उन्होंने कहा था कि वे इतनी दूर जेनेवा से भाषण देने के बजाय सीधे मास्को और पीटर्सबर्ग की सड़कों पर हज़ारों मज़दूरों की सभाओं और रूसी किसानों की मीटिंगों में खुलकर भाषण देना चाहते हैं।

मेरे गाइड ने मुझे बताया कि वह मकान नं० 3 पर लगायी गयी इस पट्टिका के उद्घाटन समारोह में उपस्थित रहा था।

"मैं उपस्थित ही नहीं रहा था, बल्कि मैंने उसमें सक्रिय भाग लिया था," उसने अपने कथन में संशोधन किया। "बहुत ही भाव-भीनी घटना थी। अविस्मरणीय! लोग नगर के कोने-कोने से डेविड द्युफ़ूर स्ट्रीट पर आये थे। मीटिंग हुई। एक के बाद एक वक्ता भाषण-मंच पर चढ़े। मीटिंग के बाद 'इंटरनेशनल' से आकाश गूंज उठा था। उसे आर्केस्ट्रा के साथ पूरी स्ट्रीट ने गाया था। तब मुझे लगा जैसे सारा मेहनतकश जेनेवा गा रहा है!.."

मैं स्मृति-पट्टिकावाले घर के सामने खड़ा उसे ध्यानपूर्वक देख रहा था, और मेरे गाइड के सुनाये क़िस्से ने मुझे ज्यूरिच के श्पीगेलगास्से स्ट्रीट के मकान नं० 14 के सामने पहुंचा दिया, जिस पर लगी इसी प्रकार की पट्टिका पर लिखा है कि व्लादीमिर इल्यीच लेनिन यहां सन् 1916—1917 में रहे थे। वहीं से 9 अप्रैल, 1917 को लेनिन क्रान्तिकारी पेत्रोग्राद रवाना हो गये थे।

कैफ़े की मेज़

जब मैं स्विट्ज़रलैंड जाने की तैयारी कर रहा था, तब मेरे मास्को के मित्र, लेखक निकोलाई येव्दोकीमोव ने मुझसे कहा था कि मैं जेनेवा में 'लेंडोल्ट' कैफ़े में अवश्य जाऊं। यह एक सुप्रसिद्ध कैफ़े है। वहां सन् 1903—1905 में कैफ़े के स्वामी द्वारा रूसी राजनैतिक प्रवासियों के लिए विशेष रूप से नियत एक छोटे-से कमरे में बोल्शेविक अक्सर इकट्ठा होकर रूस की घटनाओं और उसके भविष्य के बारे में बातचीत किया करते थे। लेनिन व उनकी पत्नी नदेझ्दा कोंस्तांतीनोव्ना क्रूप्सकाया के साथ वहां बाउमन, वोरोव्स्की, बोंच-ब्रुयेविच, लूनाचार्स्की, लित्वीनोव व अन्य साथी भी आते थे। कैफ़े के पास ही विश्वविद्यालय है, जिसके उत्तम पुस्तकालय में लेनिन पढ़ने आया करते थे। यहां सन् 1904 के नववर्ष का स्वागत अपने मित्रों के साथ करते हुए लेनिन ने रूसी सर्वहारा वर्ग के क्रान्तिकारी आन्दोलन की सफलता के लिए जाम पिया था। कुछ समय बाद ही यहीं रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी के तत्कालीन सर्वोच्च निकाय—पार्टी की सोवियत की बैठक हुई थी।

येव्दोकीमोव कुछ वर्ष पहले जेनेवा गये थे। वे वहां 'लेंडोल्ट' कैफ़े ढूंढ़कर उसमें एक मेज़ पर बैठे थे, जो निशानी के तौर पर उकेरे गये शब्दों से भरी हुई थी।

"उस मेज़ को देखना!" उन्होंने मुझे सलाह दी थी। "वह आश्चर्यजनक है! मैं उसका फ़ोटो खींचना चाहता

था, पर केमरा साथ लाना भूल गया था।"

मैंने अपने गाइड से मुझे 'लेंडोल्ट' ले चलने का अनुरोध किया। उसने निराश स्वर में कहा:

"हां, वह बहुत ही रोमांटिक जगह थी! हमेशा भीड़ लगी रहती थी, शोर गूंजता रहता था। 'लेंडोल्ट' युवाओं को बहुत प्यारा था। लेकिन आपके दोस्त ने आपसे बहुत देर बाद वहां जाने को कहा है। कुछ दिन पहले ही वह इमारत ढहा दी गयी है, जिसमें 'लेंडोल्ट' था। वैसे मेरे एक परिचित ने मुझे बताया था कि पुराने 'लेंडोल्ट' की एक छोटी-सी शाखा यहीं कहीं पास में ही खोली गयी है। चलिये, खुद ही वहां चलकर देख लेते हैं। जैसा कि आपने कहा, वहां की हवा में सांस ले लेते हैं।"

हम कंडोल स्ट्रीट पर पहुंच गये। वह विश्वविद्यालय के सैकड़ों वर्षों पुराने वृक्षोंवाले पार्क से सटी हुई है। उनके तनों के बीच में से एक समलम्बाकार मकान नज़र आता है। वह उस स्थान पर बनाया गया है, जहां कभी कैफ़े 'लेंडोल्ट' था। उससे थोड़ी ही दूर हमें छोटी, ग्रीष्म ऋतु के लिए बनी, एकमंज़िली इमारत नज़र आयी। उस पर 'लेंडोल्ट' लिखा साइनबोर्ड लगा हुआ था। हम अंदर गये और हमें सबसे पहले नज़र आयी मेज़ पर बैठ गये। वेटर ने हमारे सामने बीयर के दो मग लाकर रख दिये।

"यह वैसी ही 'कार्डिनल' बीयर है, जो तब पी जाती थी," एक घूंट लेकर मेरे साथी ने कहा।

"देखा, हमारे यहां आना बेकार नहीं रहा ना?"

मुझे बीयर पसंद है, पर वह बीयर मैंने ख़ास शौक़ के साथ पी। पीते-पीते मैं खिड़की में देखता रहा, जिसमें से विश्वविद्यालय का वह भाग दिखाई दे रहा था, जिसमें पुस्तकालय है। मैं मेज़ पर बिछे पतले काग़ज़ के नैपकिन पर बने बेलबूटों पर यंत्रवत् हाथ फेरने लगा। अचानक मुझे महसूस हुआ कि वहां स्वच्छता का साम्राज्य होने के बावजूद नैपकिन तले मानो कुछ कण घूम रहे हैं। मैंने नैपकिन का किनारा उठाकर देखा कि पुरानी, समय से काली पड़ चुकी लकड़ी पर कुछ अक्षर और तारीख़ें कुरेदी हुई हैं। मेज़ की लगभग पूरी सतह रहस्यमय अक्षरों और अंकों से भरी थी। अपने गाइड के साथ मिलकर हमने अज्ञात व्यक्तियों की लिखावट को ग़ौर से देखना शुरू किया। हमने ऊबड़-खाबड़ पंक्तियों पर उंगलियां फेरकर देखा। स्पष्टत: रूसी अक्षरों में लिखा था: "द० म०"। इन्हें किसने अपने जेबी चाकू से कुरेदा था और कब? वह व्यक्ति क्या और किससे कहना चाहता था? एक जगह रूसी में लिखा मिला: "ई० एफ़० – त्रे० ए०"। किसने इस प्रकार अपनी मैत्री को सुदृढ़ किया था? क्या उन दोनों ने एक दूसरे के हाथ पर हाथ रखकर अपना जीवन क्रान्ति को समर्पित करके मृत्युपर्यन्त साथ रहने की सौगंध खायी थी?

अपना पैड निकालकर मैंने उसमें उन सारी लिखावटों को सावधानीपूर्वक नोट किया।

मैंने दूसरी तरफ़ नज़र डाली और देखा कि कैफ़े के एक और कोने में भी वैसा ही दृश्य दिखाई दे रहा है। वहां भी उसी पुराने 'लेंडोल्ट' की एक मेज़ रखी हुई थी। मेज़

की भूरी सतह पर झुका एक युवा व्यक्ति कुरेदे अक्षरों को ध्यानपूर्वक देख रहा था...

पर्वत पर कविता-पाठ

जेनेवा में वसन्त अपने यौवन पर था। विलो और बर्च वृक्षों की कोंपलें धूप में चटक रही थीं। सार्वजनिक उद्यानों में घास निर्मल, चटकीले रंगों में लहलहा रही थी। लोग बिना ओवरकोट और हैट के घूम रहे थे। पर्वतों पर हिम जाज्वल्यमान हो रहा था। रविवार होने के कारण सब लोग स्कीइंग करने के लिए पहाड़ों की ओर उमड़े पड़ रहे थे। मुझे भी यूरा पर्वतीय क्षेत्र की यात्रा करने का निमंत्रण मिला। मैं सहर्ष तैयार हो गया, हालांकि मेरे पास उसके लिए विशेष पोशाक, स्की वगैरह नहीं थीं। साथियों की सहायता से किसी तरह सब तैयारी की। शीघ्र ही हम वसन्त से निकलकर शीत ऋतु में पहुंच गये। मुझे किसी तरह विश्वास नहीं हो रहा था कि सिर्फ़ तीस मिनट पहले तक हम जेनेवा पर क़ब्ज़ा जमानेवाले स्टारलिंग पक्षियों का कलरव सुन रहे थे।

शुरू में हम कार में गये। फिर उतरे और स्कीज़ पैरों में बांधकर कई रोप-लिफ़्टों में से एक को पकड़कर लगभग बादलों तले पहुंच गये। मैं तो अवाक ही रह गया, पर रोप-लिफ़्ट मुझे ऊपर लिये जा रही थी। वैसे रोप-लिफ़्ट को जब चाहें, तभी छोड़ सकते हैं और अपने चुने स्थान से ही स्कीज़ पर नीचे फिसलना शुरू कर सकते हैं। लेकिन

दूसरों से होड़ किये बिना भला रहा जा सकता है, जब हर तरफ़ से स्कीयरों की चुनौती-भरी हंसी सुनाई दे रही हो, जिनमें सबसे बड़ा सत्तर बरस से कम का नहीं था और सबसे छोटा पांच का।

यह स्पष्ट बता दूं कि मैं कोई ख़ास अच्छी डाउनहिल स्कीइंग नहीं करना जानता। बर्फ़ में कई बार लुढ़ककर मैंने उसका स्वाद चखा। लेकिन यह मैं काफ़ी पहले देख चुका था कि मेरे जोखिम-भरे अनुभव जितने अविश्वसनीय थे, मेरे लिए अप्रत्याशित भेंटें भी उतनी ही अधिक हो रही थीं। एक कैंची-मोड़ पर मैं बर्फ़ के एक ढेर में गर्दन तक जा धंसा और ज़ोर-ज़ोर से अपने साथियों को आवाज़ें देने लगा। उन्हें कुछ सुनाई नहीं दिया, लेकिन एक झुरमुट में से दो व्यक्ति निकलकर मेरी ओर लपके—एक पुरुष और एक नारी।

"आपने आवाज़ दी थी?" उन्होंने टूटी-फूटी रूसी में पूछा।

"हां।"

"बहुत ख़ुशी हुई मिलकर! हम हैं आपके मित्र झान और इन्ग्रिड।"

हमने एक दूसरे से कसकर हाथ मिलाये और एकमत से बाक़ी दिन साथ बिताने का फ़ैसला कर डाला। झान और इन्ग्रिड ने मुझे एक मिनट के लिए भी अकेले नहीं छोड़ा। वे मुझे डाउनहिल स्कीइंग सिखाने लगे, कहने लगे, मैं एक होनहार डाउनहिल स्कीयर हूं। अपनी तरफ़ से मैंने भी स्विस युगल को रूसी भाषा सिखाना शुरू कर दिया। मैंने कहा कि वे होनहार शिष्य हैं। शिष्टता का

प्रत्युत्तर शिष्टता से क्यों न दिया जाये, विशेषतः जब प्रगति स्पष्ट दिखाई दे रही हो।

जी भरकर स्कीइंग करने के बाद हम आराम करने के लिए रुके और एक अलाव सुलगा लिया। आग तापते हुए झान अपने जीवन की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना के बारे में बताने लगा। जून, 1970 में वह मास्को गया था। पहली ही रात को जब उसे देर तक नींद नहीं आयी, तो वह लाल चौक पर जाकर काफ़ी समय तक लेनिन की समाधि के सामने खड़ा रहा, और फिर उसने अपने होटल लौटकर एक कविता रच डाली।

"सुनेंगे? उसका हाल ही में रूसी में अनुवाद हुआ है।"

"बेशक सुनना चाहता हूं!"

झान ने जेब से डायरी निकाली, आंखों पर चश्मा चढ़ाया और हिज्जे कर-करके पढ़ने लगा:

...बन गयी लेनिन की धड़कन
हम सब की धड़कन...

झान शान्त व मृदु स्वर में कविता पढ़ रहा था, लेकिन मुझे एकाएक ऐसा प्रतीत होने लगा, मानो उसके शब्द पर्वतों में गुंजायमान हो रहे हैं। फ़र वृक्षों से बर्फ़ तक झड़कर हमारे पैरों में गिरने लगी...

11, ग्रांड-र्‌यू

दुनिया के हर कोने के लोग इस स्थान से परिचित हैं। यहां "पुस्तकप्रेमी समाज" का पुस्तकालय है। मैं यहां

उसके पुस्तकाध्यक्ष पीको से मिलने आया था, जो मुझे लेनिन से सम्बन्ध रखनेवाली हर सामग्री दिखाने को सहर्ष तैयार हो गये थे।

पुरानी तिमंज़िला इमारत के द्वार पर मेरा स्वागत एक विनम्र एवं प्रसन्नचित्त व्यक्ति ने किया। उसने मुझे देहलीज़ पर ही बता दिया कि उनका मुख्य केटालाग उसी स्थिति में सुरक्षित है, जैसा कि वह सन् 1905 की रूसी क्रान्ति के पूर्व था, जब लेनिन अपने लिए आवश्यक पुस्तकें पढ़ने यहां आया करते थे।

इस पुस्तकालय का सदस्य होना आसान नहीं था। इच्छुक व्यक्ति को प्रतिष्ठित लोगों के सिफ़ारिशी पत्र लाने होते थे। 13 दिसम्बर, 1904 को "पुस्तकप्रेमी समाज" के अध्यक्ष ने एक बैठक में व्लादीमिर इल्यीच उल्यानोव का नाम सदस्यता के लिए पेश किया। उनकी सिफ़ारिश प० बिर्युकोव ने की थी, जो लेव निकोलायेविच तोलस्तोय के सचिव थे।

मैंने सुरक्षित रखे काग़ज़ात देखे। उनमें उस बैठक का कार्यवृत्त, लेनिन द्वारा भरा गया सदस्यता का फ़ार्म और अध्यक्ष के नाम उनका आवेदनपत्र भी था।

मैंने वे पुस्तकें दिखाने का अनुरोध किया, जिन्हें लेनिन ने पढ़ा था।

मेरे सामने मेज़ पर जनरल क्लूज़ेरे द्वारा फ़्रांस में बेरिकेडों पर हुई मुठभेड़ों के संस्मरण, लंदन में सन् 1862 में प्रकाशित 'दिसम्बर राजद्रोहियों के नोट्स' लाकर रख दिये गये। दूसरी पुस्तक के हाशियों पर पेंसिल

से लिखे गये नोट्स थे। वे मुझे पृष्ठ 56 और 87 पर मिले।

"क्या यह लेनिन की लिखावट है?" मैंने पीको से पूछा।

"हमारा विचार है कि उन्हीं की है।"

एक और पुस्तक मिली, जिसका इतिहास अत्यन्त विचित्र था। लेनिन उसे घर ले गये थे और उसे कई महीनों तक उन्होंने लौटाया नहीं था। वह पुस्तक थी—'सन् 1871 का कम्यून'।

"इसका अर्थ क्या यह हुआ कि लेनिन ने तत्कालीन नियमों का उल्लंघन किया था?"

"ओह, नहीं!" पीको मुस्कराकर बोले। "उन्होंने यह पुस्तक एक अपवादस्वरूप कुछ दिन और रखने की अनुमति मांगी थी।"

पीको मुझे पुस्तकालय के सभी कक्षों में लेकर गये।

"यह वाचनालय है, यह पत्र-पत्रिकाओं का कक्ष है। हमारे यहां एक और कक्ष था—"ग्लोबवाला हॉल"। लेनिन उसमें अक्सर पढ़ा करते थे। खेद है कि वह सुरक्षित नहीं रह सका, पर उसका फ़ोटोग्राफ़ है। यह देखिये। यहां ग्लोब के पास बैठकर उन्होंने समाचारपत्रों के लिए अपने लेख लिखे थे। वहां रहा वह ग्लोब—दीवार के पास लकड़ी के स्टेंड पर..."

पीको के क़िस्से मैं सुनता रहा। उन्होंने यह देखकर कि मैं पूरी कोशिश कर रहा हूं कि कोई बात छूट न जाये, मुझे एक स्मृतिशेष से दूसरे के पास ले जाकर दिखाने लगे।

"हमारे पास दुनिया के कोने-कोने से पत्र आते हैं। देखना चाहते हैं?"

मेरे हाथों में विभिन्न देशों के डाक-टिकट लगे सफ़ेद, नीले, रंगबिरंगे लिफ़ाफ़ों से भरी फ़ाइल थी। लोग पोलैंड, रूमानिया, फ्रांस, कनाडा, नार्वे, स्वीडन और सोवियत संघ से भी लिखते हैं। मैंने कुछ पत्रों में से कुछ नोट करने की अनुमति मांगी।

सिम्फ़ेरोपोल के स्कूली छात्रों ने सीधे पुस्तकाध्यक्ष पीको को अपने पत्र में लिखा था:

"आपके पुस्तकालय में लेनिन पढ़ा करते थे। कृपया हमें बताइये कि क्या वे पुस्तकें सुरक्षित हैं, जिन्हें उन्होंने पढ़ा था? अगर आपके पास फ़ोटो हों, तो हमें भेजिये। हमें उनकी बहुत आवश्यकता है। हम अपना एक संग्रहालय बना रहे हैं। आपकी सफलता व सौभाग्य की कामनाओं सहित"...

ब्र्यांस्क प्रान्त के क्लींत्सी नगर के कोम्सोमोल-मेम्बरों ने पीको से अनुरोध किया था:

"हम लेनिन जयंती मनाने की तैयारियां कर रहे हैं। कृपया हमें फ़ोटो, पत्र और दस्तावेज़ भेजिये, जिनका सम्बन्ध आपके सुन्दर नगर जेनेवा में लेनिन के प्रवास से है।"

"हम सभी पत्रप्रेषकों को उत्तर देते हैं," पीको ने कहा।

अन्त में उन्होंने मुझे एक अलबम दिखाया, जिसके आवरण पर लिखा था: 'गोल्डन बुक'। उसमें प्रबंधकों और कुछ सदस्यों के पोरट्रेट थे। एक पृष्ठ पर लेनिन का

एक बड़ा चित्र था।

"मास्को और मास्कोवासियों के नाम आप क्या सन्देश देना चाहेंगे?" विदा लेने के समय मैंने पीको से कहा।

"उन्हें हमारी ओर से हार्दिक शुभकामनाएं। कहिये कि लेनिन के नाम से जुड़ी प्रत्येक वस्तु को हम संजोकर रखे हुए हैं और आगे भी रखे रहेंगे। सदा-सदा।"

उत्कीर्ण-चित्र

मैंने लेनिन के बारे में हर प्रकार की दंतकथाएं और किंवदंतियां सुनी हैं। उनके बारे में जेनेवा में भी अपनी ही किंवदंतियां हैं।

नगर के एक प्राचीनतम टॉवर—मोलार टॉवर पर सन् 1921 से ही 19वीं शताब्दी के अन्त तथा 20वीं शताब्दी के आरम्भ के क्रान्तिकारी प्रवासियों के केन्द्र—जेनेवा—को समर्पित एक उत्कीर्ण-चित्र है। उसमें नगर को अपनी मातृभूमि को छोड़कर विदेश में शरण पाने को विवश हुए व्यक्ति की सहायता करनेवाली एक नारी के रूप में दर्शाया गया है। चित्र पर "जेनेवा निष्कासित लोगों का नगर" शब्द उकेरे हुए हैं। लोगों का कहना है कि शिल्पकार पॉल बो ने उसमें किसी कल्पित प्रवासी को नहीं, बल्कि व्ला० इ० लेनिन को उनके विशिष्ट नाक-नक़्श सहित दर्शाया है।

वैसे इसके बारे में भिन्न-भिन्न मत व्यक्त किये जाते हैं। कुछ लोग शर्त लगाने को तैयार हैं कि वह प्रवासी स्वयं

लेनिन ही हैं। अन्य लोग, जब मोलार टॉवर पर बने चित्र की चर्चा छिड़ती है, तो कंधे उचकाकर सन्देह व्यक्त करते हैं:

"यह एक दंतकथा के सिवा कुछ नहीं है..."

मैं उसी नाम के चौक पर बने मोलार टॉवर को कई बार देखने गया था। पत्थर पर उकेरे उस दृश्य को मैं काफ़ी देर तक ग़ौर से देखता रहा था। लेनिन और चित्र में दर्शाये गये व्यक्ति में आश्चर्यजनक समानता है। हू-बहू वैसी ही नुकीली दाढ़ी है, वैसा ही चिन्तकों जैसा चौड़ा ललाट, वैसी ही मर्मभेदी प्रज्ञा व आवेशपूर्ण आंखें...

टॉवर के सामने खड़े होकर कोई ऐसा स्थान चुनिये, जहां से सब स्पष्ट दिखाई दे, तो पीछे से किसी न किसी की बात कानों में पड़ ही जाती है:

"सच, बहुत मिलता-जुलता है ना?"

"सचमुच!"

"अभी तो प्रकाश उस पर ठीक से नहीं पड़ रहा है। आप तड़के आइये या सूर्यास्त से ठीक पहले, तब देखिये!"

मैं वहां तड़के भी गया और शाम को भी। मुझे हर बार पॉल बो का 'निष्कासित' लेनिन से और भी अधिक मिलता-जुलता लगा।

सदाबहार का गुलदस्ता

जेनेवा से मुझे स्विट्ज़रलैंड की राजधानी बर्न जाना था। इस नगर में भी अनेक स्थान लेनिन की स्मृति से जुड़े

हैं। मेरे साथी ने इस बार मुझसे यह नहीं पूछा कि हम सब स्थानों पर जायेंगे या उनमें से कुछ पर ही। उसने केवल इतना ही पूछा कि उन्हें हमें किस क्रम में देखना है। मैंने कहा कि क्रम का मेरे लिए विशेष महत्त्व नहीं है, बस कोई स्थान छूटना नहीं चाहिए।

दिन-भर में हमने अनगिनत मार्गों के चक्कर काट लिये। घरों व फ़्लेटों के नामों, नम्बरों, पुस्तकालयों, मुद्रणालयों, कॉफ़ी हाउसों के नामों और उनके बारे में संक्षिप्त विवरणों से मेरी पूरी एक डायरी भर गयी।

हमने आरम्भ उस पुस्तकालय से किया, जिसमें लेनिन अक्सर जाया करते थे। यहां वे लंच तक पढ़ा करते थे और उसके बाद पैदल "द्यू-थियेटर" कैफ़े तक जाया करते थे। हमने यह रास्ता कार के स्पीडोमीटर पर नज़र रखते हुए तय किया। लगभग दो किलोमीटर का फ़ासला निकला। कैफ़े में व्लादीमिर इल्यीच एक कप चाय लेकर ताज़ा समाचारपत्र पढ़ा करते थे और फिर आगे अपने घर रवाना हो जाते थे। उन दिनों उनका हाथ काफ़ी तंग रहता था। वे अक्सर बहुत-सी, बल्कि बहुत ही ज़रूरी चीज़ों के बग़ैर गुज़ारा किया करते थे। वे फ़्लेट भी इस बात को ध्यान में रखकर किराये पर लेते थे, ताकि ख़र्च कभी बजट से ज़्यादा न हो।

एक फ़्लेट 33, दोन्नेरब्युल्वेग मार्ग पर था। किराया यहां व्लादीमिर इल्यीच के लिए बहुत ज़्यादा था, इसीलिए वे शीघ्र ही यहां से दूसरी जगह चले गये।

फिर हम एक अन्य घर के सामने रुके, जो डीस्टेल्वेग स्ट्रीट पर था और काफ़ी मामूली था। व्लादीमिर इल्यीच

यहां कुछ अधिक समय तक रहे थे।

मैंने घर को पहले बाहर से बहुत ग़ौर से देखा, फिर अंदर के अहाते में से। मुझे बतायी गयी खिड़की को भी ध्यान से देखा। शुरू में मुझे कोई विशेष बात नज़र नहीं आयी। घर आम घरों जैसा था और खिड़की भी आम खिड़कियों जैसी थी।

"ज़रा और ध्यान से देखिये," मेरे गाइड ने मुझसे कहा और मेरे हाथ में हाथ डाल दिया। फिर हम दोनों सामनेवाले मार्ग की ओर कुछ क़दम पीछे को हट गये। "अब यहां से देखिये। कुछ नज़र आता है?"

"अब दिखाई दे रहा है!"

धूप में चमक रहे शीशे के अंदर दासे पर से मुझे सदाबहार का एक गुलदस्ता झांकता नज़र आया।

उसे किसने वहां रखा है? यह किस बात का प्रतीक है?

"कहीं यह केवल संयोग ही तो नहीं है? यहां तो सभी लोगों को फूलों का शौक़ है।"

हम दोनों ने मकान की अन्य खिड़कियों पर नज़र डाली। कहीं किसी तरह के फूल नहीं थे। सिवा लेनिन से जुड़े उस घर के।

सरसराता ब्रेमगार्टन वन

बर्न के मेहनतकशों के इलाक़े से थोड़े फ़ासले पर स्थित ब्रेमगार्टन वन में हम तड़के ही पहुंच गये। यहां आने के लिए अनगिनत छोटी-छोटी फ़ैक्टरियों, वर्कशापों और

गोदामों के सामने से गुज़रना पड़ता है। ऐसा उन दिनों भी हुआ करता था, जब लेनिन अपने मित्रों के साथ इस वन के लिए रवाना हुआ करते थे। वे यहां उतना आराम करने के लिए नहीं आते थे, जितना कि अपनी गतिविधियों को गुप्त रखने और जासूसों से छिपे रहने के इरादे से।

व्लादीमिर इल्यीच को इस स्थान से प्रेम हो गया था। यहां पार्टी सम्बन्धी सभी कार्यों पर विचार-विमर्श किया जाता था। यहीं ब्रेमगार्टन वन में बोल्शेविकों के बर्न स्थित ग्रुप की बैठक हुई थी, जो 6 से 8 सितम्बर, 1914 तक चली थी। यहीं एक छायादार निर्वृक्ष स्थल में लेनिन ने उस समय साम्राज्यवादी युद्ध के विरुद्ध पार्टी का स्पष्ट कार्यक्रम सामने रखा था। उस बैठक में व्ला० इ० लेनिन के अलावा न० को० क्रुप्सकाया, ई० फ़० आर्मान्द, व० म० कस्पारोव, फ़० न० समोयलोव, ग० ल० श्क्लोव्स्की, म० ल० गोबेरमान व अन्य साथियों ने भाग लिया था। इसमें लेनिन की रिपोर्ट "यूरोपीय युद्ध में क्रान्तिकारी सामाजिक-जनवादियों के लक्ष्य" स्वीकार की गयी थी।

कहने का तात्पर्य है कि यह एक ऐतिहासिक वन है। यह मात्र वन ही नहीं, एक जीता-जागता स्मृतिशेष है। जेनेवा, बर्न, बाज़ेल, ज्यूरिच व स्विट्ज़रलैंड के दसियों अन्य स्थानों के समान यहां वृक्षों तले सब चीज़ें लेनिन का और उनके असाधारण कार्यों का स्मरण कराती हैं।

गत पचास वर्षों के दौरान वन काफ़ी बदल चुका है। वृक्ष अपनी शाखाएं ज़मीन के ऊपर काफ़ी दूर-दूर तक

फैलाकर गांठ-गंठीले हो चुके हैं। लेकिन ये उसी ज़माने के वही वृक्ष हैं, मिट्टी भी वही है और वन भी।

सुबह-सवेरे वन वसन्तकालीन पवन में सरसराने लगता है। मैं कल्पना करता हूं कि अनेक वर्ष पहले भी यह इसी तरह सरसराता रहा होगा, ताकि कोई यहां की जा रही बातें न सुन सके। इस धूसर चट्टान से फूटनेवाला यह सोता भी इसी प्रकार कलकल नाद करता बहता रहा होगा। यह रहा काव्यमय "ग्लासब्रुनेन" नामवाला सोता। उसके लिए इससे अधिक सटीक नाम शायद ही मिले। उसका जल वास्तव में शीशे सदृश, अत्यन्त शुद्ध और पारदर्शी है। वह लोगों को निरन्तर अपनी ओर आकृष्ट करता हुआ मानो कहता रहता है: "जी भरके पिओ!" मेरे साथी को पक्का विश्वास है कि लेनिन ने इस सोते का जल अनेक बार पिया था।

"आप ख़ुद ही सोचिये, यहीं आस-पास कोई और जल-स्रोत न तब था और न आज है, और व्लादीमिर इल्यीच यहां काफ़ी देर के लिए, कभी-कभी तो दिन-भर के लिए आया करते थे।"

क्या पता लेनिन ने वास्तव में इसका जल पिया हो। मैंने सोते के पास जाकर उकड़ूं बैठकर शीशे सदृश धार को सीधे मुंह में लिया। शीतल जल की कुछ बूंदें मेरे कॉलर के अंदर चली गयीं।

"अरे, आप शर्माइये नहीं, और पीजिये। मुझे आज तक यहां एक भी ऐसा आदमी नहीं मिला, जिसने इस जल का रसास्वादन न किया हो। मैं भी अभी पीता हूं। न जाने कौन-सी बार होगा यह!"
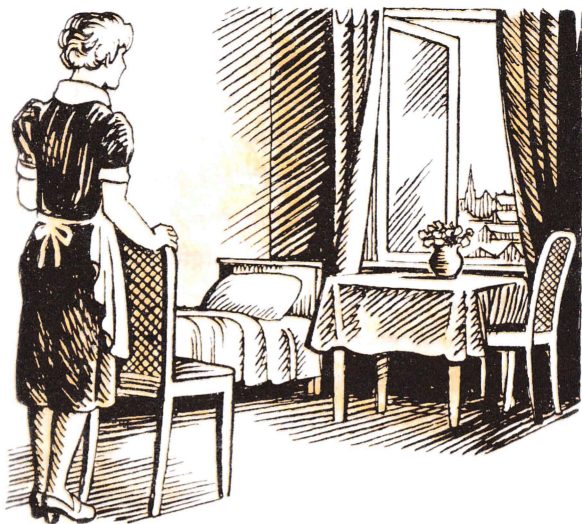
एक होटल का कमरा

जिस दिन मैं उस होटल में पहुंचा, एक सफ़ेद बालोंवाली नौकरानी ने मुझसे धीरे से कहा:

"यहां लेनिन रहे थे।"

उसने दूसरी मंज़िल के लम्बे कारिडर में खुलनेवाले एक दरमियाने, तंग दरवाज़े की ओर हौले से इशारा किया और मेरी अप्रत्याशित प्रतिक्रिया देखकर फिर बोली:

"आपको विश्वास नहीं होता? वे इसी कमरे में रहे थे।"

"नहीं, क्यों नहीं, इसकी पूरी सम्भावना है, पर इसे

अभी तक गुप्त क्यों रखा जा रहा है? मैं ख़ुद उसमें जाकर देखना चाहता हूं।"

नौकरानी मुस्कराकर बोली :

"ओह, रूसी आदमी को तो मैं यह कमरा ज़रूर ही दिखाऊंगी, लेकिन इस वक़्त नहीं, बाद में जब ख़ाली होगा। कल् सुबह सबसे बेहतर रहेगा।"

वह मौन हो गयी, फिर कुछ क्षण. बाद ऐसे बोली, मानो क्षमा-याचना कर रही हो :

"सुबह उसमें कोई नहीं होता है।"

बाक़ी सारे दिन उस विदेशी नगर में घूमते, अनजानी बोली सुनते और अपरिचितों के चेहरों को ध्यानपूर्वक देखते समय मुझे बार-बार उस नौकरानी की बात याद आती रही, उसके कहे पर विश्वास होता भी था और नहीं भी होता था। सुबह मेरे दरवाज़े पर हल्की-सी दस्तक हुई। मैंने दरवाज़ा खोला। मेरे सामने वेक्यूम क्लीनर का होज़ हाथों में लिये मेरी कल शाम की परिचिता खड़ी थी।

"इस समय आप कमरा देख सकते हैं।"

मैं जल्दी-जल्दी तैयार हो गया। ढलवां सीढ़ी से हम दूसरी मंज़िल पर उतरे और कमरे के अंदर दाख़िल हुए। शुरू में उसमें कोई ख़ास बात नज़र नहीं आयी।

यहां भी सब कुछ वैसा ही था, जैसा कि शान्त, उत्तरी देश के एक छोटे-से मार्ग पर स्थित उस होटल के अन्य कमरों में था। वैसा ही लकड़ी का पलंग, वैसी ही मेज़ और खिड़की में से नज़र आता वैसा ही दृश्य।

लेकिन फिर मैंने उस स्त्री की हर हरकत को ग़ौर से देखना शुरू किया—कैसे वह कुर्सियों को सरकाती है,

कैसे दासे की धूल पोंछती है, कैसे हौले से, लगभग दबे पांव पुराने क़ालीन पर चलती है। और धीरे-धीरे कमरे की प्रत्येक वस्तु जैसे एकाएक जीवन्त हो उठी।

फिर उसने फूल लगे बिल्लौरी फूलदान को झाड़न से पोंछकर उसका पानी बदला, हर फूल को धूप की ओर घुमाया। एक क़दम पीछे हटकर वह फिर फूलदान के पास आ गयी। महीन रेशमी मलमल के परदे में भटक गयी एक फूल की पंखड़ी को उसने ठीक किया। मेरा तन-मन एक रहस्यमय भावना से ओत-प्रोत हो उठा।

"मदाम, क्या यहां सब उसी हालत में है, जैसा उनके सामने था?"

"हां, सब कुछ उसी हालत में है। यह मुझे मेरी मां ने बताया था।"

उस स्त्री ने उंगलियों से कुर्सी की पीठ का स्पर्श किया, फिर रोशनीदार खिड़की के पास गयी, जिसके शीशे पर मंथर गति से आ रहे स्कैंडीनेवियाई वसन्त की लचीली टहनियों की कोंपलें हौले हौले दस्तक दे रही थीं।

मुझे उस होटल में पांच या छ: दिन रहने का मौक़ा मिला। रोज़ाना सुबह मेरे कमरे के दरवाज़े पर हौले से दस्तक होती और परिचित स्वर सुनाई देता:

"मैं हूं। उस कमरे में सफ़ाई करने जा रही हूं।"

इस प्रकार मैं लेनिन के उस संग्रहालय में कई बार हो आया, जो अभी तक औपचारिक रूप से स्थापित नहीं हुआ है, पर जिसे एक सीधी-सादी वृद्धा नारी कई वर्षों से संभालकर रखे हुए है।
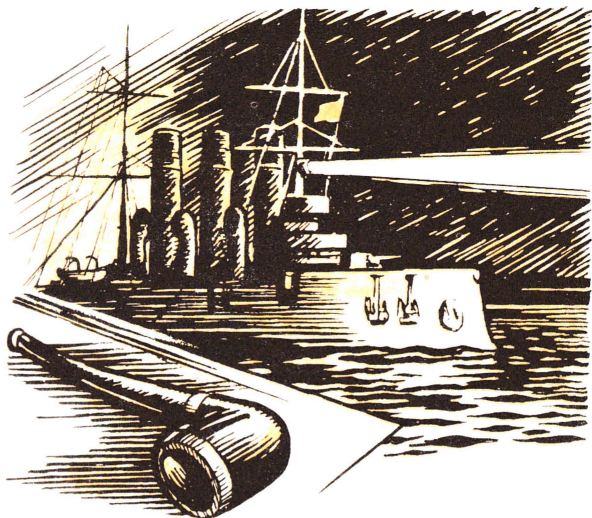
निकोलाई दोभ्रदीकोव का पाइप

कुछ ऐसा संयोग हुआ कि पुराने जर्मन कम्युनिस्ट एर्विन बेकिर से मेरी मुलाक़ात बर्लिन में . जर्मन जनवादी गणतंत्र के सरकारी दौरे से स्वदेश लौटने के ऐन पहले ही हो सकी। मास्को की ट्रेन रवाना होने में केवल दो घंटे से कुछ अधिक ही समय रह गया था कि मेरे कमरे में टेलीफ़ोन घनघना उठा। चोंगे में से एक मन्द्र, अपरिचित स्वर सुनाई दिया :

"आप मुझे खोज रहे थे? मैं हूं बेकिर। मैं बर्लिन से बाहर गया हुआ था। इस समय मैं आपके बहुत ही पास

हूं, आपको लिवाने आना चाहता हूं होटल में। आ सकता हूं?"

"ज़रूर, एर्विन, ज़रूर आइये! और जितना जल्दी आ सकें, उतना ही अच्छा होगा।"

कुछ ही मिनट बाद उंटर डेन लिंडेन पर स्थित होटल के कमरे में एक लम्बे क़द का नेकदिल व्यक्ति दाख़िल हुआ और तुरन्त अपने दोनों हाथ मेरी ओर बढ़ाकर रूसी मिश्रित जर्मन भाषा में बोल उठा:

"नमस्कार! मैं लाइपसिग गया हुआ था। कितना अच्छा हुआ कि हम दोनों की मुलाक़ात आखिर हो ही गयी।"

मैंने भी रूसी-जर्मन शब्दों की खिचड़ी बनाकर जवाब दिया:

"बहुत अच्छा हुआ, एर्विन, बहुत अच्छा हुआ! कितना सुना है मैंने आपके बारे में! बहुत दु:ख होता अगर हम न मिल पाते। लेकिन कितने अफ़सोस की बात है कि अब मैं बर्लिन से जा रहा हूं। मास्को की ट्रेन शाम आठ बजकर बीस मिनट पर रवाना होती है..."

जर्मन के मुख पर व्याप्त स्नेहसिक्त मुस्कान तुरन्त चिन्तापूर्ण मुस्कान में बदल गयी, मानो बेकिर स्वयं ही सरकारी विदेशी दौरों के इतने अल्पकालिक होने के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हो। उसके चौड़े माथे पर कई बल पड़ गये।

अपने कमरे में यात्रापूर्व की अस्त-व्यस्तता के लिए एर्विन से कई बार क्षमा-याचना करके मैं भागा-भागा फ़्लोर-मेड के पास गया और उससे किसी रूसी द्वारा भेंट किया हुआ बिजली का समोवार लाकर मेहमान

से बोला कि समय की तंगी होने के बावजूद हम आख़िर चाय तो साथ पियेंगे ही।

बेकिर ने घड़ी पर नज़र डाली और यह विश्वास हो जाने पर कि समय वास्तव में बहुत कम रह गया है, वे यात्रा की तैयारी करने में मेरा हाथ बंटाने लगे।

"मुझे इसका बहुत अनुभव है," उन्होंने कहा।

हम दोनों ने मिलकर इधर-उधर बिखरा सामान बहुत जल्दी सूटकेस में जमा लिया।

हमारे काम से सन्तुष्ट एर्विन शान से कह उठे:

"यह रूसी फुर्ती और जर्मन पाबंदी का कमाल है!"

"समय की कितनी बचत हो गयी!" मैं भी पीछे नहीं रहा।

"समय की बचत मेरी वजह से हुई है," एर्विन हर्षित होकर कह उठे। "यानी अब आप मेरे घर होते हुए चल सकते हैं। श्रीमती बेकिर हमारी बाट जोह रही हैं, उन्हें बहुत ख़ुशी होगी।"

मुझे बेकिर को एक बार फिर निराश करना पड़ा:

"आपके यहां, बेकिर, हम लोग हर हालत में नहीं जा पायेंगे। श्रीमती बेकिर से मेरी ओर से क्षमा मांग लीजिये। थोड़ी ही देर में लोग मुझे गाड़ी में लेने आयेंगे और उसी में स्टेशन ले जायेंगे।"

"कौन आनेवाला है?" बेकिर को आश्चर्य हुआ। "यह कोई राज़ की बात तो नहीं है?"

"राज़ नहीं है। वे मेरे मित्र, जर्मन पायोनियर हैं," मैंने ऐसे स्वर में कहा, मानो यह अत्यन्त सामान्य बात

हो। "रूसी वे हम दोनों से बुरी नहीं जानते हैं। वे कहीं से एक मिनी-बस ले आये हैं, बोले—ठीक आठ बजे हमारा इंतज़ार कीजिये।"

अप्रत्याशितता के मारे एर्विन सूटकेस पर ही बैठ गये:

"वाह! कितनी अच्छी बात है! फ़ासिस्टवाद के विरुद्ध लड़नेवाले रूसी को बर्लिन में मास्को के लिए विदा करने जर्मन पायोनियर आयेंगे! और मुझे विश्वास है कि वे गुलदस्ता लेकर आयेंगे। सन् इकतालीस में आपने कभी ऐसा सोचा भी था? क्यों?.."

मैंने स्वीकार किया कि मैंने उसके काफ़ी समय बाद तक भी ऐसा नहीं सोचा था, लेकिन भाग्य को यही स्वीकार था।

"कितने भाग्यशाली हो!" बेकिर ख़ुशी से कह उठा। "बेहद!"

सूटकेस पर बैठे बैठे वह मन्द मन्द मुस्करा दिया। जैसा कि मुझे प्रतीत हुआ, उस क्षण वह कहीं बहुत दूर विचारों के संसार में विचरण कर रहा था। लेकिन कहां? मैंने अनुमान लगाने की चेष्टा की, पर न लगा सका। पर एर्विन कुछ क्षण मौन रहकर मन्द्र स्वर में बोले:

"जब बात भाग्य की छिड़ ही गयी है, तो मैं आपको कुछ दिखाना चाहूंगा। एक मिनट..."

उन्होंने अपने कोट की अंदरूनी जेब में हाथ डाला, और मेरे सामने पुरानी डायरी के महीन लिखावट से भरे पन्ने चमक उठे। जर्मन मित्र की उंगलियों से छूटकर पन्ने बिखर गये। उनकी भौंहों के ऊपर पड़े बल और

ज़्यादा गहरे हो उठे।

मैं फ़ासिस्टविरोधी जर्मन की पिछली ज़िंदगी के बारे में जानता था और यह भी कि उनका जीवन, विशेषत: युद्ध-काल में कितनी कठिनाइयों में बीता था। मैंने सोचा कि वे शायद युद्ध से सम्बन्ध रखनेवाली कोई चीज़ ढूंढ़ रहे हैं। मैंने यह बात उनसे कही। बेकिर ने आंशिक सहमति व्यक्त की:

"आपकी बात पूरी तरह सही नहीं है। पूरी नहीं पर किसी सीमा तक सही ज़रूर है!"

एर्विन डायरी के पन्ने उलटने लगे, फिर अचानक खीभकर अपना माथा ठोक लिया।

"क्या दूसरी डायरी में है?" मैंने पूछा।

एर्विन ने स्वीकृति में सिर हिला दिया:

"बुढ़ापे में याददाश्त कैसी हो जाती है!.. मैं बहुत जल्दी में था और सब गड्डमड्ड कर बैठा। क्या मचमुच हम लोग मेरे घर होते हुए नहीं जा मकते? बहुत ही पास है। मैं अपने कुछ नोटस आपको दिखाना चाहता था। उनमें कुछ ऐसी बातें भी हैं, जिनमें आपको बहुत गहरी दिलचस्पी होगी। दोभ्रदीकोव के बारे में संस्मरण।"

मैं आश्चर्यचकित रह गया:

"दोभ्रदीकोव के बारे में?"

"हां, दोभ्रदीकोव के बारे में." बेकिर ने फिर कहा और सूटकेस से उठकर मेज़ की ओर बढ़े।

मुभे यह स्वीकार करना पड़ा कि दोभ्रदीकोव के बारे में मैंने इससे पहले कुछ नहीं सुना था।

इस पर एर्विन बोले:

"पर मैं उनसे परिचित था। यह देखिये।"

बेकिर ने दूसरी जेब में से सावधानीपूर्वक अपना पर्स निकाला और उसमें से एक सेलोफ़ेन का पैकेट, जिसमें कुछ फ़ोटोग्राफ़ रखे थे। उन्हें मेरे सामने रखकर उन्होंने कहा :

"ध्यान से देखिये।"

फ़ोटोग्राफ़ काफ़ी थे, कोई दस-पन्द्रह। उनमें से एक काले रंग की नौसेना की वर्दी पहने एक अधेड़ व्यक्ति का था। दूसरे फ़ोटोग्राफ़ स्मोकिंग पाइपों के थे, जो मैंने ज़िंदगी में हज़ारों नहीं, तो सैकड़ों तो देखे ही थे। सच कहा जाये, तो पाइप में मुझे कोई दिलचस्पी नहीं हुई। जहां तक नौसैनिक का सम्बन्ध था, तो उसके चेहरे को मैं बहुत ध्यान से देखने लगा। पर काफ़ी ग़ौर से देखने के बावजूद मुझे उसके नाक-नक़्श में कुछ जाना-पहचाना नहीं मिला। यह बात मुझे एर्विन से कहनी पड़ी। उन्होंने फिर कहा कि उन्हें दोभ्रुदीकोव को व्यक्तिगत रूप मे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

एर्विन फिर मेरे सूटकेस पर जा बैठे और पायोनियरों के आने तक बचे समय में उन्होंने मुझे दोभ्रुदीकोव, उनके पाइप और बहुत-सी दूसरी बातों के बारे में बता दिया।

...यह युद्ध के तुरन्त बाद की बात है। एर्विन को लेनिनग्राद जाने का अवसर प्राप्त हुआ। बर्लिन के एक प्रकाशनगृह के अनुरोध पर उन्हें सुप्रसिद्ध नगर को समर्पित एक फ़ोटो-अल्बम तैयार करना था। वे लेनिनग्राद की सड़कों और चौकों में सुबह से शाम तक घूम-घूमकर फ़ोटो खींचते रहे।

एक बार कीरोव स्टेडियम में एर्विन को पुराने बोल्शेविकों का एक दल नज़र आ गया। उनमें से एक व्यक्ति उन्हें विशेष रूप से अच्छा लगा।

"न वह जवान था और न ही बिलकुल बूढ़ा। आप और मेरे जैसा था," एर्विन ने विनोद व उदासी मिश्रित स्वर में कहा। "हां, हां, वह यही था, जिसका फ़ोटो आप देख रहे हैं। सचमुच आकर्षक है ना? मूंछें और भौंहें सफ़ेद-झक हैं जैसे समुद्री फेन में भीगी हों।"

नौसैनिक से परिचय होने पर एर्विन को मालूम पड़ा कि वह व्यक्ति लगभग पचास वर्ष तक उत्तरी ध्रुव सागर में जहाज़ पर हर मौसम में ड्यूटी पर तैनात रह चुका है, इसीलिए तो वह समुद्री फेन कल्पित नहीं, बल्कि असली है और खारा भी।

मैंने एर्विन के साथ सहमति व्यक्त की। लगता था मानो नौसैनिक की भौंहों में नमक के कण झिलमिला रहे हैं।

एर्विन ने कहा कि तभी उन्होंने अपना लेनिनग्राद का फ़ोटो-अलबम निकोलाई दोभ्रुदीकोव से ही आरम्भ करने का निश्चय किया, उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व इतना आकर्षक व प्रभावशाली जो था। वे उसी दिन शाम को भूतपूर्व नौसैनिक से मिले और उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया कि दोभ्रुदीकोव को चुनकर उन्होंने कोई ग़लती नहीं की है।

अक्तूबर क्रान्ति के दिनों में दोभ्रुदीकोव प्रेत्रोग्राद में वायरलैस-स्टेशन में कार्य करते रहे थे। उस ज़माने के लिए उनका व्यवसाय विरला ही था। गिने-चुने वायरलैस-आपरेटरों में से एक दोभ्रुदीकोव की क्रान्ति को

आवश्यकता तुरन्त ही अनुभव हुई। 27 अक्तूबर, 1917 को अपनी ड्यूटी समाप्त करते ही एक सन्देशवाहक उनके पास आ पहुंचा और देहलीज़ पर से कह उठा : "आपसे एक बहुत ज़रूरी काम है, साथी दोभ्फ़दीकोव!" निकोलाई दोभ्फ़दीकोव बिना किसी स्पष्टीकरण के समझ गये कि इतनी देर गये आदमी को कोई यूं ही परेशान नहीं करता। उन्होंने परदे के ऊपर से झांककर देखा और उन्हें इस बात का पूरी तरह विश्वास हो गया। खिड़की तले एक कार खड़ी थी, जिसका इंजन चालू था। उन्होंने रास्ते में पूछा कि उन्हें किसने और किस काम के लिए बुलवाया है। ड्राइवर और सन्देशवाहक ने नि:शब्द एक दूसरे से आंखें मिलाईं, मानो कह रहे हों: क्या इतना भी नहीं समझते कि इस समय सबसे महत्त्वपूर्ण आदेश कौन दे सकता है?

दोभ्फ़दीकोव केवल स्मोलनी में पहुंचकर जान सके कि उन्हें कितना कठिन कार्य सौंपा गया है। उन्हें वायरलैस पर एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ प्रसारित करना था। इसके लिए दोभ्फ़दीकोव को ही क्यों चुना गया? इसलिए, उन्हें लोगों ने बताया, क्योंकि लेनिन ने ऐसा ही आदेश दिया है। कुछ ही क्षणों बाद वायरलैस-आपरेटर दोभ्फ़दीकोव व्लादीमिर इल्यीच के सामने पहुंच गये। लेनिन ने उन्हें उनकी फ़ौरी मुलाक़ात का कारण बताया। सोवियतों की अखिल रूसी कांग्रेस ने अभी-अभी शान्ति-आज्ञप्ति स्वीकार की है। लोगों को इसकी जानकारी अभी इसी समय होना आवश्यक है।

"आप सारी बात समझ गये, साथी दोभ्फ़दीकोव?" लेनिन ने पूछा। "मशीनरी धोखा तो नहीं देगी ना?

वायरलैस-स्टेशन के सभी साथी विश्वसनीय योग्य हैं ना?"

व्लादीमिर इल्यीच के ये शब्द सुनकर दोभ्रदीकोव को, जैसा कि उन्होंने एर्विन के सामने स्वीकार किया, बहुत भय लगा। उन्हें स्वयं अपने आप पर तो पूरा विश्वास था कि वे सब वैसे ही करेंगे, जैसे करना चाहिए। अपने साथियों पर भी उन्हें सन्देह नहीं था। पर मशीनरी... उसका क्या भरोसा! उन्होंने यह बात लेनिन से छिपायी नहीं। बोले, व्लादीमिर इल्यीच, ये शैतान रेडियो-तरंगें बहुत मनमौजी होती हैं। तरंगें तरंगें ही होती हैं, चाहे समुद्री हों या आकाश की। क्या पता कैसी करामात दिखाने लगें।

"पर आपको डरना नहीं चाहिए, साथी दोभ्रदीकोव, सब ठीक हो जायेगा, आपको पूरा विश्वास दिलाता हूं," लेनिन ने वायरलैस-आपरेटर को तसल्ली दिलाने की कोशिश की, हांलाकि स्वयं वे अत्यधिक चिन्तित थे, केवल इसे प्रकट नहीं होने दे रहे थे।

"तो आप सारी बात समझ गये ना, साथी दोभ्रदीकोव?" लेनिन ने अपना प्रश्न दोहराया। "यह बात ध्यान में रखिये कि हम यानी आप और मैं अपने ऊपर बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी ले रहे हैं।"

दोभ्रदीकोव पूछने ही वाले थे: "आप अपने ऊपर क्यों ज़िम्मेदारी लेते हैं, व्लादीमिर इल्यीच?" लेकिन समय पर रुक गये। वे समझ गये कि लेनिन ने केवल ऐसे व्यक्ति को सहारा देने का निश्चय किया था, जो हक्का-बक्का रह गया था। अब वायरलैस-आपरेटर को वास्तव में कुछ राहत महसूस हुई और उन्होंने मज़ाक़ भी करने की कोशिश की।

"अगर ऐसी ही बात है, तो हम दोनों ही वायरलैस के पास बैठ जायेंगे, व्लादीमिर इल्यीच, यानी आप और मैं। ताकि कोई गड़बड़ न हो।"

लेनिन इस मज़ाक़ से बहुत ख़ुश हो उठे:

"आप अकेले ही कर लेंगे इसे, साथी दोभ्फ़दीकोव। अब मैं पक्की तौर पर जानता हूं कि आप अकेले ही कर लेंगे! और मशीनरी की भी क्या मजाल की गड़बड़ करे, उसे आख़िर मज़दूरों ने ही तो अपने हाथों से बनाया है।"

"हां, मज़दूरों ने," निकोलाई ने सहमति व्यक्त की। "पूरी कोशिश करेंगे, व्लादीमिर इल्यीच।"

"बहुत ही अच्छी बात है, साथी दोभ्फ़दीकोव। मुझे सफलता का पूरा विश्वास है।"

इतना कहकर लेनिन ने वायरलैस-आपरेटर को टाइप किये हुए, आलपिन से जुड़े आज्ञप्ति के पन्ने दे दिये। फिर उन्होंने दोभ्फ़दीकोव को कार देने और पूरी रफ़्तार से त्सार्सकोये सेलो * पहुंचाने का आदेश दिया, जहां रूस का मुख्य वायरलैस-स्टेशन था।

अपने गन्तव्य तक पहुंचने तक दोभ्फ़दीकोव ने प्रभातकालीन लाली के प्रकाश में हृदय को आनन्दित कर देनेवाली उन पंक्तियों को कई बार शुरू से आख़िर तक पढ़ डाला। उन्होंने आज्ञप्ति को जितने अधिक ध्यान से पढ़ा, उतना ही अधिक उनका उत्साह बढ़ता गया।

---

* लेनिनग्राद प्रान्त के पुश्किन नगर का सन् 1918 तक प्रचलित पुराना नाम। सन् 1708 में स्थापित रूस के भूतपूर्व ज़ारों का ग्रामीण निवास-स्थान।

"अत्यावश्यक सूचना!.. वाह, क्या कहने! कुछ क्षणों बाद यह समाचार देश-विदेश में सबको मिल जायेगा..."

त्सार्सकोये सेलो पहुंचने तक दोभ्फ़दीकोव आज्ञप्ति को लगभग कंठस्थ कर चुके थे, और आवश्यकता पड़ने पर वे उसे बिना काग़ज़ के ही बेतार से भेज सकते थे।

वायरलैस-स्टेशन पर दोभ्फ़दीकोव की प्रतीक्षा की जा रही थी। स्मोलनी से वहां सैकड़ों बार टेलीफ़ोन करके पूछा जा चुका था कि सब ठीक तो है ना। और सैकड़ों बार चेतावनी भी दी जा चुकी थी कि बेतार का सन्देश भेजने के बाद दोभ्फ़दीकोव स्वयं लेनिन को इसकी रिपोर्ट दें।

"भला इसके बाद मशीनरी कभी धोखा दे सकती थी?!" एर्विन कह उठे। "बेशक कभी नहीं दे सकती थी, हालांकि उसने सबको चिन्ता में अवश्य डाल दिया था।"

जैसे ही स्मोलनी तक दोभ्फ़दीकोव के वायरलैस-स्टेशन पर सही-सलामत पहुंचने का समाचार पहुंचा, वहां से टेलीफ़ोन आने तुरन्त बंद हो गये। उसके वास्तविक कारण का पता बाद में ही चला। लेनिन ने लोगों को परेशान न करने और अपना कार्य एकाग्रचित्तता से करने का अवसर देने के लिए कह दिया था।

निकोलाई दोभ्फ़दीकोव ने एर्विन बेकिर को बताया कि उस दिन वायरलैस-आपरेटरों ने अपने जीवन की सर्वाधिक कठिन परीक्षा किस प्रकार दी।

आज्ञप्ति बेतार द्वारा प्रसारित करने के बाद दोभ्फ़दीकोव बड़ी मुश्किल से टेलीफ़ोन तक जाने की [illegible]

जुटा पाये और आवश्यक शब्द तो उन्हें बिलकुल ही नहीं सूझ पाये। लेनिन ही पहले बोले :

"धन्यवाद, साथी दोभ्रदीकोव, मुझे सब मालूम हो चुका है। बहुत बहुत धन्यवाद!"

कहते हैं, इस संक्षिप्त बातचीत के बाद लेनिन ने वायरलैस-आपरेटर से पूछा कि उनके लिए वे क्या कर सकते हैं। शुरू में दोभ्रदीकोव लेनिन की बात नहीं समझे। लेनिन ने अपना प्रश्न फिर दोहराया। यह समझ में आने पर कि मामला क्या है, निकोलाई दोभ्रदीकोव सकुचा गये और बोले कि उन्हें शोर के कारण कुछ साफ़ नहीं सुनाई दे रहा है।

कहते हैं, लेनिन जवाब में हंस दिये थे :

"यानी मशीनरी आख़िर धोखा दे ही देती है? तब न सही, अब तो दे ही रही है ना? आप मुझसे सिर्फ़ कोई तीस किलोमीटर दूर हैं, पर मेरी बात नहीं सुन पा रहे हैं। आपको, साथी दोभ्रदीकोव, फिर एक बार स्मोलनी आना पड़ेगा। अगर हो सके, तो फ़ौरन आ जाइये। आ सकते हैं?"

दो-तीन घंटे बाद ही वायरलैस-आपरेटर सुपरिचित कक्ष में पहुंच गये। लेनिन दोभ्रदीकोव को देखते ही भीड़ को चीरते हुए उनकी ओर लपके। उनके पास पहुंचकर लेनिन ने उनसे हाथ मिलाया और बुलंद आवाज़ में बोले, ताकि सब सुन लें :

"इतने अच्छे ढंग से काम करने के लिए एक बार फिर आपको धन्यवाद देता हूं।" उन्होंने दोभ्रदीकोव की ओर ध्यान से देखकर अपनी आंखें थोड़ी सिकोड़ीं और किंचित

धीमे स्वर में बोले: "यह आपके लिए मेरी तरफ़ से है। निशानी के तौर पर। आप शायद धूम्रपान करते हैं ना? तब तो ज़रूर इसकी क़ीमत समझेंगे — इंगलिश 'ब्रायर' है।"

दोभ्रदीकोव ने अपने हाथों में एक स्मोकिंग पाइप देखा।

"हां, हां, यही है वह," मेरा इशारा भांपकर बेकिर ने पुष्टि की। "असली 'ब्रायर' है।"

यह खेदजनक है कि दोभ्रदीकोव केवल काफ़ी समय बाद समझ पाये कि लेनिन का यह उपहार कितना प्रतीकात्मक है: उन्होंने तब कोई साधारण सन्देश नहीं, बल्कि 'शान्ति आज्ञप्ति' देश-विदेश में सबके लिए बेतार से भेजी थी! अर्थात् वह पाइप भी कोई ऐसा-वैसा पाइप नहीं, बल्कि शान्ति का पाइप है! निकोलाई दोभ्रदीकोव को बहुत अफ़सोस हुआ कि वे उस प्रतीक का अर्थ काफ़ी देर बाद समझे। लेकिन पाइप को उन्होंने बहुत समय तक संभालकर रखा, उसे उन्होंने सुलगाया भी नहीं, हालांकि वे बहुत धूम्रपान करते थे, तिस पर नौसैनिक भी थे। नौसेना के एक शौक़िया दस्तकार ने दोभ्रदीकोव के लिए उस 'ब्रायर' की एक नक़ल तैयार कर दी, जबकि असली 'ब्रायर' कई वर्षों तक विशेष रूप से उसके लिए सिली गयी मख़मल की थैली में रखा उत्तरध्रुवीय सागर के सभी अभियानों में उनके साथ रहा। एक बार तो वह समुद्र में डूबते डूबते भी बचा, जब 'द्वीना' नाम का एक पुराना जहाज़ एक तूफ़ानी रात में स्पिट्सबर्गेन क्षेत्र में छिछले पानी में एक जलगत चट्टान से जा टकराया। इस घटना के बाद दोभ्रदीकोव ने नौसेना संग्रहालय, अपने मित्रों और उन सबके लिए, जिन्हें ज़रूरत पड़ सकती है, 'ब्रायर'

के ज़्यादा से ज़्यादा फ़ोटो तैयार करने का निश्चय कर लिया।

इन्हीं में से कुछ फ़ोटोग्राफ़ निकोलाई दोभ्रूदीकोव ने एर्विन को लेनिनग्राद में हुई भेंट के दौरान दिये थे। पर "क्रान्ति के प्रथम वायरलैस-आपरेटर" के कई फ़ोटो एर्विन ने स्वयं खींचे थे।

मैं अपने अतिथि के साथ फिर सफ़ेद समुद्री फेन लगी मूंछों और भौंहों व बरौनियों में नमक के श्वेत कणवाले दोभ्रूदीकोव के फ़ोटोग्राफ़ उनके नाक़-नक़्श पर विशेष ध्यान देते हुए देखने लगा।

"अगर पसंद हों, तो आपको भेंट कर सकता हूं," एर्विन ने मेरे मन की बात भांपते हुए कहा।

"अफ़सोस तो नहीं होगा ना?" मैंने कहा।

एर्विन हंस पड़े :

"अफ़सोस तो बेशक होगा, लेकिन आप हर हालत में मांगेंगे ज़रूर ना?"

"ज़रूर मांगूंगा।" मैंने पुष्टि कर दी। "आप मान लीजिये कि मैंने उन्हें मांग लिया है।"

"देख लिया ना आपने? आख़िर मैं मनोवैज्ञानिक हूं!" एर्विन कह उठे।

उमी क्षण कारिडर में आवाज़ों का शोर सुनाई पड़ा, दरवाज़े पर दस्तक हुई, और मेरा कमरा तुरन्त पायोनियरों मे भर गया। वे पूर्णत: जर्मन समयनिष्ठा के साथ ठीक आठ बजे कमरे में आ पहुंचे, जैसा कि तय हुआ था और फूल लेकर, जैसी कि एर्विन ने भविष्यवाणी की थी।

स्कूली बच्चों को मेरा ध्यान रखने और उनकी समयनिष्ठा के लिए धन्यवाद देकर मैंने उनसे पूछा कि क्या वे हमारे साथ रूसी चाय पीना पसंद करेंगे। वे बिना हीला-हवाला किये मान गये। मेरे मित्र एर्विन के मित्र भी निकले। एर्विन ने हाल ही में उनके स्कूल में भाषण दिया था, शीघ्र ही फिर आने का वचन दिया था। उनकी वहां प्रतीक्षा की जा रही थी, क्योंकि उनकी पिछली भेंट के समय सभी पायोनियर उपस्थित नहीं हो पाये थे।

"यानी सब अपने ही लोग हैं!" मैं प्रसन्न हुआ और मेज़ पर चाय का प्रबंध करने लगा।

"मैं करूंगा, मैं!" लड़कों में से एक मेरी मदद करने लगा। "सभी अपने हैं।"

"जब अपने ही हैं, तो ज़रूर मदद करो," मैंने उनसे कहा, "हमारे पास समय कम है। ख़ातिरदारी करना किसे आता है?"

मददगारों की कोई कमी नहीं थी। एक ठंडे समोवार को प्लग में लगाकर पानी उबालने लगा, दूसरा पहले से चमकते साफ़-सुथरे कप-प्लेटों को अलमारी से निकालकर कपड़े से पोंछने लगा, कोई कोनों पर सिमट गये मेज़पोश को ठीक करने लगा। मैं अपने जेबी चाक़ू से टाफ़ियों का डिब्बा खोलने लगा।

"ध्रुवीय भालू!" अतिथियों में से एक कह उठा। "बहुत बढ़िया टाफ़ियां हैं!"

एर्विन अचानक कहीं गुम हो गया अपना सेलोफ़ेन का पैकेट ढूंढ़ने लगे जिस में फ़ोटोग्राफ़ थे। इस बीच फ़ोटोग्राफ़

हाथों ही हाथों में घूमते रहे। और लगभग प्रत्येक, जिसके भी हाथ में वे गये, कह उठा:

"दोभ्रुदीकोव!"

"निकोलाई दोभ्रुदीकोव। रूसी वायरलैस-आपरेटर, नौसैनिक!"

"दोभ्रुदीकोव का पाइप!.."

उन क्षणों में मेरा तन-मन पुलकित हो उठा और एर्विन का भी, मुझे यही लगा।

खेद की बात है कि चाय-पान अधिक समय न चल सका। कोई पन्द्रह मिनट बाद ही हमें मेज़ से उठकर स्टेशन के लिए रवाना हो जाना था।

मिनी-बस पर अपनी वसन्तकालीन शाखाएं फैलाये हुए, हू-बहू हमारे मास्को के वृक्षों जैसे वृक्ष मन्द-मन्द सरसरा उठे।

रविवार की रात

रात के बारह बज गये। एक बज गया, दो बज गये। मिनट की सूई आगे ही सरकती जा रही थी...

व्लादीमिर इल्यीच आख़िर कब लौटेंगे? उल्यानोव परिवार की नौकरानी सीसोयेवा कभी इस बात की आदी नहीं हो पा रही थी कि लेनिन इतना कम समय सोते हैं और कभी ढंग से आराम नहीं करते हैं। उसने इतनी रात ढले तक उनके काम करने के बारे में अपनी राय कई बार विनम्र शब्दों में बताने की कोशिश भी की। व्लादीमिर इल्यीच अलेक्सांद्रा मिखाइलोव्ना सीसोयेवा की बात और

भी अधिक विनम्रतापूर्वक सुनते, यह मानते कि आगे यह किसी हालत में नहीं चल सकता, अपनी आदत अवश्य सुधार लेने का वादा भी करते, पर हालत पहले जैसी ही रही, बल्कि उससे और भी बदतर होती गयी।

उस दिन भी यही हुआ। समय ढाई से काफ़ी ऊपर हो चुका था। चाय की केतली दस बार गरम की जा चुकी थी और दस बार ठंडी हो चुकी थी। अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना यह अच्छी तरह जानती थी कि व्लादीमिर इल्यीच चेहरे से यह बिलकुल भी ज़ाहिर नहीं होने देंगे कि चाय गरम नहीं है, हर हालत में उनका ध्यान रखने के लिए उसकी प्रशंसा करेंगे, लेकिन वह अपने मन में यह विचार भी आने नहीं देना चाहती थी कि इतनी कमरतोड़ मेहनत करने के बाद, जाड़े की रात में देर गये आदमी बिना कुछ खाये-पिये सो जाये। लोहे की जाली पर अधीरता से हिलती-डोलती तामचीनी की गोल-मटोल केतली को वह बार-बार चूल्हे पर रख रही थी, मानो इस प्रकार देर से आनेवाले गृहस्वामी को जल्दी करने को मजबूर कर सकती हो।

अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना बार-बार घड़ी पर नज़र डाल रही थी, जिसके पीतल के पेंडुलम पर ऊंची, धूसर-सफ़ेद छत से लटके एकमात्र बल्ब का धुंधला प्रतिबिम्ब डोल रहा था। व्लादीमिर इल्यीच को कहीं कुछ हो तो नहीं गया?

कोई पूरे तीन बजे के क़रीब उनींदी सीसोयेवा अचानक चौंक उठी और दरवाज़े की ओर लपकी, जिसके बाहर से उसे अपने जाने-पहचाने क़दमों की आहट सुनाई दी। पर यह क्या हुआ? आहट सुनाई दी और बंद हो गयी।

क्या उसे भ्रम हुआ था? नहीं हो सकता। व्लादीमिर इल्यीच के क़दमों की आहट पहचानने में कभी वह ग़लती नहीं कर सकती। कहीं वे दफ़्तर में कोई चीज़ भूल तो नहीं गये हैं, कहीं वापस तो नहीं लौट जायेंगे? उसने किवाड़ पर कान लगाकर सुनने की कोशिश की और न चाहते हुए भी दो लोगों के बीच हो रही साफ़ सुनाई दे रही बातचीत उसके कानों में पड़ने लगी।

एक व्यक्ति पूछ रहा था, दूसरा जवाब दे रहा था:

"आपको ज़रूर बहुत ठंड महसूस हो रही होगी, साथी?"

"अभी थोड़ी और सही जा सकती है, व्लादीमिर इल्यीच।"

"यानी, मेरी बात ठीक है कि ठंड लग रही है। चलिये, ऐसा करते हैं। मैं अभी दरवाज़ा खोलता हूं, हम दोनों अंदर जायेंगे, एक एक गिलास गरम-गरम चाय पियेंगे और बदन में गर्मी आ जायेगी।"

"नहीं चल सकता, व्लादीमिर इल्यीच, इसकी इजाज़त नहीं है।"

"लेकिन आप तो ख़ुद ही मान चुके हैं कि आप ठिठुर गये हैं। ज़रूरी हुआ तो समझा देंगे कि ऐसा मेरी इजाज़त से किया गया था। हमारी बात समझ ली जायेगी, कोई परेशानी पैदा नहीं होगी, मैं आपको विश्वास दिलाता हूं।"

"अपनी ड्यूटी से हटने का मुझे अधिकार नहीं है, व्लादीमिर इल्यीच।"

"यह तो मुझ जैसा असैनिक भी समझता है, लेकिन बात सिर्फ़ कुछ ही मिनटों की तो है।"

"मैं एक सेकंड के लिए भी यहां से नहीं हट सकता, व्लादीमिर इल्यीच। मैं ड्यूटी पर हूं।"

"इसे एक अपवाद ही क्यों न मान लें? अगर सज़ा देनी ही हो किसी को, तो मुझे दे दें। आख़िर क्वार्टरगार्ड तो किया नहीं जायेगा?"

"आपको नहीं किया जायेगा, व्लादीमिर इल्यीच। मुझे तो आपसे बात भी नहीं करनी चाहिए..."

इसके बाद धीरे-धीरे हो रही बातचीत बंद हो गयी। सीसोयेवा दरवाज़े से हटी ही थी कि ताले के छेद में चाबी डालने की आवाज़ सुनाई दे गयी।

कुछ क्षणों बाद ही अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना ओवरकोट उतारने में लेनिन की मदद करने लगी। लेकिन लेनिन ने सकुचाकर उसे हटाते हुए कहा:

"मुझे माफ़ कीजिये, प्यारी अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना! न मैं ख़ुद सोता हूं, न दूसरों को सोने देता हूं। आप क्या अभी तक काम में उलझी हुई हैं?"

"कैसा काम, व्लादीमिर इल्यीच? बस आपकी मनपसंद चाय बना चुकी हूं।"

व्लादीमिर इल्यीच ने अपनी क्लान्त, पर ध्यानपूर्ण दृष्टि केतली पर डाली।

"आज तो ज़रूर पिऊंगा।"

"अभी दूं?" सीसोयेवा ने पूछा। "या..."

"अभी दीजिये," अपनी आदत के विपरीत लेनिन ने उन्हें बात पूरी न करने दी। "अभी, और हो सके, तो दो गिलास, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना। ज़रा कड़क, मेहरबानी करके!"

अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना ने किंचित आश्चर्य के साथ पूछा :

"एक साथ दो गिलास? जब तक एक पियेंगे, दूसरा ठंडा हो जायेगा।"

सीसोयेवा भली-भांति जानती थी कि दूसरा गिलास किसके लिए चाहिए था, लेकिन वह यह जताना नहीं चाहती थी कि कारिडर में लेनिन किससे और किस बारे में बात कर रहे थे। पर लेनिन ने अपनी बात विनम्र किन्तु दृढ़ स्वर में दोहरायी :

"एक साथ दो गिलास, प्यारी अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना, एक साथ दीजिये। मेरे और संतरी के लिए। वह ठिठुर गया है, पर अपनी ड्यूटी से मेरी इजाज़त के बावजूद नहीं हट सकता। किसी भी तरह मानने को तैयार नहीं है। अच्छा लगता है आपको यह?"

"और मानेगा भी नहीं, व्लादीमिर इल्यीच। मैं उस जवान को काफ़ी अच्छी तरह जानती हूं।"

"जानती हैं?" लेनिन को आश्चर्य हुआ। "पर मैं, सच कहूं, तो उसे पहली बार देख रहा हूं।"

"वह नया ज़रूर है, पर यह दिखा चुका है कि वह दृढ़निश्चयी है।"

"क्या कहा आपने, दृढ़निश्चयी है? कितनी दिलचस्प बात है! मुझे दृढ़निश्चयी लोग बहुत अच्छे लगते हैं। कुछ भी हो, आप उसे एक गिलाम चाय दे आइये, बहुत विनती करता हूं, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना। अगर आपको दिक़्क़त हो, तो मैं ख़ुद उसे ले जाकर दे सकता हूं। जो आपको बेहतर लगे, वही कीजिये।"

“नहीं, क्यों नहीं दूंगी? मुझे कोई दिक़्क़त नहीं होगी इसमें, व्लादीमिर इल्यीच।”

“बहुत ही अच्छी बात है, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना। आदमी को ठंड लग रही है, और, मुझे जहां तक आशा है, कोई भी उसे नियमों का उल्लंघन करके एक गिलास चाय पीने के लिए ताना नहीं देगा।”

सीसोयेवा ने दो गिलासों में चाय डाल दी। लेनिन ने आंखें सिकोड़कर पहले एक गिलास के रंग पर नज़र डाली, फिर दूसरे के और बोले:

“मेहरबानी करके यह गिलास ले जाइये उसके लिए। लगता है, यह ज़रा ज़्यादा कड़क है।”

“ऐसा सिर्फ़ लगता है, व्लादीमिर इल्यीच। दोनों में ही एक-सी तेज़ चाय है, आपके पसंद की। बिलकुल एक-सी।”

“हां, हां, बेशक, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना, बिलकुल एक-सी है।”

लेनिन ने फिर दोनों गिलासों की चाय के रंग पर नज़र डाली और किंचित विनोदपूर्ण व गम्भीर स्वर में बोले:

“पर यह ज़रा ज़्यादा तेज़ है। उसे ही ले जाइये, ठंडी होने से पहले, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना।”

सीसोयेवा उनकी बात मान गयी और जल्दी से गिलास ट्रे में रखकर ले गयी और उसे वैसे ही उठाये वापस लौट आयी।

“नहीं पी?” लेनिन कह उठे।

“नहीं पी, व्लादीमिर इल्यीच।”

“कुछ कहा उसने? क्या कहा?”

“कुछ नहीं कहा, व्लादीमिर इल्यीच। उसने बिना कुछ कहे मुझे वापस लौटा दिया। बस यही क़िस्सा है सारा।”

लेनिन विचारमग्न हो गये। चाय का एकाध घूंट लेकर उन्होंने सीसोयेवा से पूछा:

“इस बारे में आप क्या कहना चाहेंगी, आदरणीया अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना? आपकी क्या राय है? सच-सच बताइये।”

सीसोयेवा ने बिना हिचकिचाये उत्तर दिया:

“मेरे विचार में, दोनों की बात सही है। आपने चाय पीने को कहकर बहुत अच्छा किया, व्लादीमिर इल्यीच। उसने इन्कार करके बहुत अच्छा किया। वास्तव में संतरी की ड्यूटी के नियम इसकी आज्ञा नहीं देते हैं। मेरे पिता सैनिक थे, मुझे यह सब मालूम है। लेकिन बात नियमों की नहीं, उस जवान की है। नियमों को कभी-कभार अपनी मर्ज़ी से तोड़ा-मरोड़ा जा सकता है, यह भी मुझे मालूम है।”

सीसोयेवा मौन हो गयी। वह बर्तन उठाने के लिए लेनिन के चाय पी लेने का इंतज़ार करने लगी। लेकिन उन्होंने न जाने क्यों पूरी चाय नहीं पी। वे काफ़ी देर तक गिलास में चम्मच चलाते, विचारों में डूबे, चाय की पत्तियों को भंवर की तरह तेज़ी से घूमते देखते मौन बैठे रहे।

लम्बी चुप्पी को सीसोयेवा ने ही तोड़ा:

“आपसे एक सवाल पूछ सकती हूं, व्लादीमिर इल्यीच?”

चाय की पत्तियों का काला भंवर गिलास में थोड़ा मन्द पड़ गया।

"ज़रूर, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना, ज़रूर पूछिये।" उन्होंने कुतूहल से अपनी क्लान्त आंखें उठाकर सीसोयेवा की ओर देखा।

"मैं भी तो जानूं कि उस जवान के बारे में आप क्या सोचते हैं, व्लादीमिर इल्यीच? आख़िर आप उसी के बारे में ही तो सोच रहे हैं ना इस समय?"

"बिलकुल ठीक कह रही हैं आप, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना! उसी के बारे में सोच रहा हूं। और इस नतीजे पर पहुंचा हूं, प्यारी अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना, कि ऐसे ही लोगों को साथ लेकर नये जीवन का निर्माण किया जा सकता है। ऐसे ही लोगों को साथ लेकर! अकाल पड़ रहा हो, कड़ाके की ठंड पड़ रही हो, तबाही मच रही हो, पर वे ईमानदारी से अपना कर्त्तव्य निभाते हैं। क्यों? अच्छी बात है ना यह?"

चाय की पत्तियों का भंवर लेनिन के गिलाम में फिर तेज़ हो उठा।

"क्या मेरी बात सही नहीं है?"

"हमेशा की तरह आप बिलकुल ठीक कह रहे हैं, व्लादीमिर इल्यीच," सीसोयेवा ने कहा। "हमेशा की तरह..."

वे दोनों ही मौन हो गये, प्रत्येक अपने विचारों में डूबा। दोनों की अपनी-अपनी समस्याएं, ज़िम्मेदारियां और अपने-अपने काम थे। चुप्पी तोड़ने में पहल लेनिन ने की।

"अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना, मेहरबानी करके उस जवान से मेरी मुलाक़ात करवा दीजिये। मुझे उससे बात करनी चाहिए और जितनी जल्दी हो सके, उतना ही अच्छा होगा। ज़रूर करनी चाहिए! क्यों न सचमुच उसके साथ एक एक गिलास चाय ही पी जाये? इसके लिए मैं थोड़ा-सा समय निकालने की पूरी कोशिश ज़रूर करूंगा।"

सीसोयेवा ने एक गहरी सांस लेकर सिर हिला दिया।

"आपकी बात मैं समझ गया, प्यारी अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना। मैं जाकर सोने की कोशिश करता हूं। जल्दी ही फिर उठना होगा। क्यों? आप यही कहना चाहती थीं ना? कैसा समय आ गया है! बहुत ज़रूरी काम भी पूरा नहीं कर पा रहे हैं। इतने ज़रूरी आदमी तक से बात करने की फ़ुरसत नहीं मिल रही है। निश्चय ही, जब मैं लेटा हुआ होऊंगा, उसकी बदली हो चुकी होगी। उसके बाद मेरी 'बारी' आ जायेगी... अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना, क्या आप किसी को संतरी पर नज़र रखने और उसकी ड्यूटी ख़त्म होते ही उसे यहां बुलाकर इस मेज़ पर बैठकर चाय पिलवाने का इंतज़ाम कर सकती हैं? यह काम कौन कर सकता है?"

"शायद मैं, व्लादीमिर इल्यीच, और कौन कर सकता है? मैं हर वक़्त अपनी जगह पर मुस्तैद रहती हूं।"

व्लादीमिर इल्यीच सीसोयेवा को धन्यवाद देकर अपने कमरे की ओर चल दिये, पर देहलीज़ से पलटकर बोले :

"लेकिन इससे हमारी उसके साथ मुलाक़ात किसी हालत में टलेगी नहीं, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना। मेहरबानी

करके कुछ ऐसा इंतज़ाम कीजिये, कि हम दिल खोलकर बातें कर सकें और अगर हो सके, तो इसी हफ़्ते? ठीक है?"

"यह हफ़्ता तो ख़त्म हो चुका है, व्लादीमिर इल्यीच। अब रविवार शुरू हुआ मान लीजिये।"

"इस बार फिर आपकी बात बिलकुल ठीक है, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना। सच कहा जाये, तो रविवार को तो एक सेकंड भी ख़ाली नहीं रहेगा। फिर क्यों न सोमवार या मंगलवार को रखा जाये? आप लिख लीजिये और सचिव से मेरी ओर से कह दीजिये। सोवियत शासन को बिलकुल ऐसे ही संतरियों की सख़्त ज़रूरत है। बहुत सख़्त, प्यारी अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना।"

लेनिन ने अपने कमरे में जाकर बहुत सावधानी से भारी-भरकम सफ़ेद दरवाज़ा बंद कर लिया।

सीसोयेवा अपने कानों सुनी और अपनी आंखों देखी बातों के बारे में सोचती हुई अपने काम में जुट गयी।

घर में शान्ति छा गयी। रविवार का प्रभात निकट आता जा रहा था। शीघ्र ही वह आ भी गया। आधा घंटा भी न बीतने पाया था कि भारी-भरकम सफ़ेद दरवाज़ा आवाज़ किये बिना फिर खुल गया। सीसोयेवा के सामने लेनिन फिर आ खड़े हुए, सोने की बिलकुल भी कोशिश किये बिना। अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना पर नज़र डालकर उन्होंने टाई की गांठ ढीली की और बोले:

"अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना, आपको शायद आश्चर्य हो रहा होगा, पर मैं एक बात फिर से ज़रा साफ़ करना चाहता हूं।"

सीसोयेवा ने अपनी आश्चर्यचकित आंखें उठाकर लेनिन की ओर देखा। वे उसके पास आये और उसके शाल से ढके कंधे को हौले से छूकर बोले:

"मुझे आशा है, संतरियों के बारे में जो कुछ मैंने कहा, उसे आपने शब्दश: नहीं लिया होगा। क्यों? मेरा मतलब आख़िर सिर्फ़ उन्हीं से नहीं था, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना। सिर्फ़ उन्हीं से नहीं, बल्कि हम सबसे था। सबसे और हरेक से अलग अलग भी। आप समझ गयीं ना कि इस समय क्रान्ति को कैसे लोगों की आवश्यकता है—हर स्थान पर, चाहे छोटा हो या बड़ा?"

"जहां तक मैं समझती हूं, मैंने आपकी बात का बिलकुल ठीक अर्थ लगाया है। आख़िर यहां मुझे काम करने का पहला दिन तो है नहीं, इस दौरान मैं बहुत कुछ सीख चुकी हूं।"

"यह बहुत ही अच्छी बात है, अलेक्सांद्रा मिख़ाइलोव्ना! अपने कार्य के प्रति निष्ठावन लोग जितने ज़्यादा होंगे, हमारा लक्ष्य भी उतना ही ज़्यादा निकट और वास्तविक होगा। आप मुझसे सहमत हैं ना?"

"बेशक, सहमत हूं, व्लादीमिर इल्यीच।"

सीसोयेवा ने मौन होकर फिर एक बार व्लादीमिर इल्यीच की तरफ़ देखा—इस बार प्रशंसापूर्ण दृष्टि से। फिर भी उसने किंचित उलाहनाभरे स्वर में पूछ ही लिया:

"क्या आप इसी कारण अभी तक नहीं सोये थे? ख़ास तौर पर इसीलिए लौटकर आये हैं?.."

"हां, इसी कारण," व्लादीमिर इल्यीच ने स्वीकार

17—1035

किया। "लेकिन बात, जैसा कि आप ख़ुद भी समझती हैं, इस क्षण बहुत ही गम्भीर है।"

"इस मामले में भी मैं आपसे बहस नहीं करूंगी, व्लादीमिर इल्यीच।"

"फिर आप इतनी सख़्त नज़रों से क्यों देख रही हैं मेरी तरफ़? क्या मैंने कुछ ग़लत किया है? कोई ग़लत बात तो नहीं कह दी?"

"सब ठीक है और सब ठीक कहा है आपने, व्लादीमिर इल्यीच। लेकिन अपने जो सोचा है, उसे करने के लिए ज़रूरी है कि आप अपने स्वास्थ्य का ख़याल रखें। कम-से-कम थोड़ा ही सही..."

सीसोयेवा ने घड़ी पर एक उदासी दृष्टि डाली, जिसका पेंडुलम अत्यन्त दुराग्रहपूर्वक रविवार की रात के अन्तिम मिनट अनवरत गिने जा रहा था।
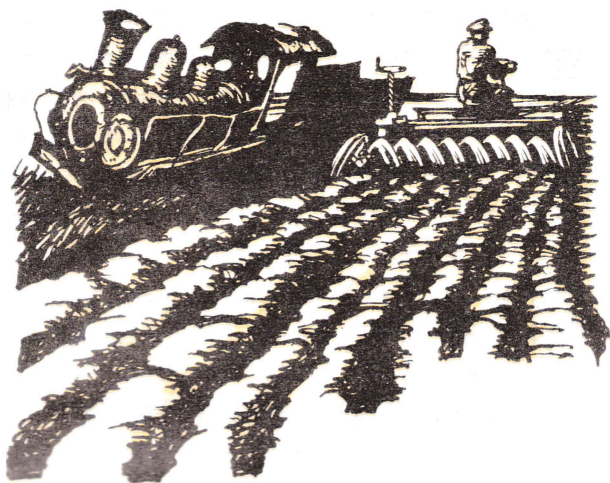
हल और तलवार

बुतीस्की बस्ती कभी मास्को की सीमा से बहुत दूर थी। हलकी ज़ंग लगी सव्योलोव्सकया रेलवे-लाइन काले तेल के छींटे पड़े जंगली पौधों—भटकटैया और चिकरी—से भरे बंजर मैदानों के सहारे-सहारे निःशब्द शहर की ओर रेंगती-सी चली जाती थी। बस्ती के पास ही गृहयुद्ध में टूटे-फूटे रेलवे-इंजनों का क़ब्रिस्तान था। किसी किसी इंजन में ड्राइवर की साबूत बची केबिन में चढ़ने के शौक़ीन मेरे हमउम्र लड़कों का और मेरा मन गृहयुद्ध में तबाह उस लोहे को देखकर उदास हो उठता

था। हम में से नासमझ से नासमझ भी यह जानता था कि कभी यह लोहा सरपट दौड़ता था, फकफक करता, सीटी बजाता, धुआं और आग की लपटें उगलता था। अब टूटे-फूटे इंजनों के गोलियों व किरचों से छलनी हुए बायलरों और चिमनियों में से केवल हवा मनहूस आवाज़ करती निकलती रहती थी। कुछ इंजन तो इतनी बुरी तरह टूटे-फूटे थे कि लगता था जैसे उन्हें उलट दिया गया हो। इंजनों की टूटी रीढ़ों से तेज़ हवा में उखड़ती लोहे की टेढ़ी-मेढ़ी शीटों की रगड़ का शोर मेरे कानों में अभी तक गूंजता रहता है।

यह उस समय की मेरी सबसे ज्वलंत स्मृतियों में से एक स्मृति है। एक बार मैंने इसका ज़िक्र मेरी उपनगरीय काटेज के पड़ोसी ज़ेलेंत्सोव से किया। याद नहीं आता कि किस सिलसिले में, शायद घर के लिए लोहे की किसी चीज़ की ज़रूरत पड़ने पर। बस्ती का और इंजनों के क़ब्रिस्तान का ज़िक्र सुनते ही ज़ेलेंत्सोव उस क्यारी को छोड़कर पास आ गया, जिसे वह उस समय खोद रहा था।

"यानी इसका मतलब यह है कि हम सिर्फ़ यहीं के पड़ोसी ही नहीं, बल्कि बुतीर्स्की बस्ती के भी पड़ोसी हैं! मैं तो आज भी वहीं का हूं, और तुम?" मैंने कहा कि मैं वहां रहा था, लेकिन बहुत पहले, जब मैं छोटा था।

"लेकिन इंजन तब तुम्हें अच्छे लगते थे?" ज़ेलेंत्सोव ने ऐसे कहा, मानो वह स्वयं ही प्रश्न पूछकर स्वयं ही उसका उत्तर दे रहा हो।

"अच्छे भी लगते थे और मन में ख़ौफ़ भी पैदा करते थे," मैंने स्वीकार किया। "बहुत ही भयानक होते थे।"

"जो सच है, सो सच है, भयानक होते थे। चारों ओर जिधर भी नज़र डालो तबाही और वीरानी नज़र आती थी..." ज़ेलेंत्सोव ने विचारमग्न होकर अपने मज़बूत, संवलाये हाथ में पकड़े बेलचे से बाड़ खटखटाया। "जो सच है, सो सच है, हालत बहुत ख़राब थी," उसने दोहराया, "उससे ख़राब हो ही नहीं सकती। लेकिन कहीं कहीं नया जीवन अंकुरित हो रहा था। मैं ज़रा बड़ा हूं, मुझे सब अच्छी तरह याद है।"

ज़ेलेंत्सोव ने बेलचा ज़मीन में धंसाकर पसीने से तर हुए माथे को आस्तीन से पोंछा।

"मशीन-परीक्षण-केन्द्र के मेकेनिकों को, जो उस क़ब्रिस्तान से थोड़ी ही दूर था, मैं कभी नहीं भूल सकूंगा। कुल जमा पांच आदमी थे, उससे ज़्यादा नहीं होंगे। वे लोग खेती के लिए मशीनरी तैयार करने में जुटे रहते थे। तुम्हें मेकोर्मिक की पूलियां बांधनेवाली मशीन की कुछ याद है?"

"वही जो बाहर की बनी थी?" मैंने पूछा।

"हां, वही। उन दिनों उसे विज्ञान का चमत्कार माना जाता था। हां, तो हमारे लोगों ने उस चमत्कार को बेहतर बनाने की ठानी थी। दिन-रात उसमें उलझे रहते थे। न तो उनके पास कोई ढंग का औज़ार ही था और न ही सामग्री। वे टूटे-फूटे इंजनों से कुछ-न-कुछ उखाड़ते रहते थे। अक़्लमंदी की बात है ना?"

मैंने ज़ेलेंत्सोव की हां में हां मिलायी। वह पूर्ण आत्मविश्वास के साथ बोलता रहा:

"अक़्लमंदी की बात है! लोहे के उस क़ब्रिस्तान को

उन्होंने ढंग से इस्तेमाल किया। बहुत ही ढंग से।"

मैंने अपने दूसरे पड़ोसियों से ज़ेलेंत्सोव के बारे में तरह तरह की बातें सुनी थीं। उनका कहना था कि वह कभी चैन से न बैठनेवाला, शौक़ीन और रोमानी तबीयत का आदमी है। हर चीज़ का शौक़ है उसे। मैं ज़ेलेंत्सोव के बारे में कुछ बातों पर ध्यान नहीं देता था। रोमानी भला वह कैसे हो सकता है? अपनी क्यारियों में ही उलझा रहता है। उसके साथ एक-दो बात तक करना मुश्किल है। रोमानी ज़िंदगी के लिए उसे कभी फ़ुरसत मिल सकती है? सारे वसन्त, सारी गर्मी, सारे पतझड़ खेतीबारी में ही लगा रहता है। कमर तक सीधी नहीं करता। जाड़े तक में अपनी सागबाड़ी में भी उलझा रहता होगा।

अक्तूबर के उस दिन मैंने ज़ेलेंत्सोव को बिलकुल दूसरी ही नज़रों से देखा। हम दोनों को अलग करनेवाली बाड़ को पार करके जब पड़ोसी एकाएक घुलमिलकर बात करने लगा, तो उसमें कुछ अप्रत्याशित प्रकट हुआ। उसने गृहयुद्ध के बारे में बात की, अक्तूबर क्रान्ति के बारे में की, महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध के बारे में की, इतिहास के बारे में की और उसके प्रति अपना दृष्टिकोण भी बताया।

ज़ेलेंत्सोव देखने में जैसे फिर जवान हो उठा। उसकी आंखें आसमानी से नीले रंग की हो उठीं, जैसी मैंने पहले कभी नहीं देखी थीं। और रेलवे-इंजनों का क़ब्रिस्तान तो जैसे कभी था ही नहीं। मुझे मालूम पड़ा कि पड़ोसी को इस अर्थ में "क़ब्रिस्तान" शब्द ही बिलकुल पसंद नहीं है।

"कैसा क़ब्रिस्तान? कौन-सा क़ब्रिस्तान? वे तो बस बहुत देख चुके थे, और कुछ नहीं! लेकिन उन्हें

दफ़नाना ठीक नहीं था। याद रखो, ऐसा करना किसी जीते-जागते आदमी को ताबूत में बंद कर देने जैसा होता। उन भाप-इंजनों से सारे रूस के लिए ज़रूरी पुर्ज़े निकाले जा सकते थे। एक रूस के लिए ही नहीं, बल्कि दो के लिए।"

"दो रूस हो ही नहीं सकते," मैंने विनोद मिश्रित गम्भीर स्वर में चुटकी ली।

ज़ेलेंत्सोव ने अपनी सहमति व्यक्त की:

"बिलकुल ठीक कहते हो। रूस दुनिया में एक ही है।"

फिर कुछ सोचकर बोला:

"सहज बुद्धि के मामले में भी अकेला और हमारी अनन्त लापरवाही के मामले में भी। और कोई देश हमसे होड़ नहीं कर सकता, न पहले मामले में और न ही दूसरे में।"

मैंने प्रतिवाद में कुछ कहना चाहा, पर उसने मुझे दृढ़तापूर्वक रोक दिया।

"बहस मत करो, मुझे ज़्यादा मालूम है। तथ्य आख़िर तथ्य ही होते है।"

मैं बहस कर ही नहीं रहा था, ख़ास तौर से जब मेरा पड़ोसी अपने विचार का प्रतिपादन मेरे लिए किंचित अधिक उपयुक्त दिशा में करने लगा:

"मेकोर्मिक की पूली बांधने की मशीन चीज़ बेशक अच्छी थी, लेकिन उसे आदर्श केवल रूसी ही बना सकते थे।"

"बना सकते थे या बना दिया?" मैंने पूछा।

ज़ेलेंत्सोव सीधा उत्तर देने से कतरा गया। उसने पेड़

से गिरी एक टहनी उठा ली और उससे ज़मीन पर कुछ विचित्र रेखाएं खींचता हुआ बोलता रहा:

"अमरीकियों की मशीन ऐसी थी, जबकि हमें ऐसी चाहिए थी। हमारे यहां परिस्थितियां बिलकुल दूसरी हैं, जलवायु दूसरी है, मिट्टी दूसरी तरह की है, सब कुछ वैसा नहीं है, जैसा कि उनके यहां है।"

वह टहनी उस पगडंडी की मिट्टी को काटती रही, जिस पर हम खड़े थे। मेरे सामने धीरे-धीरे, एक अजीब-सा, सच कहूं, तो पूरी तरह समझ में न आनेवाला चित्र उभरने लगा।

मेरी आंखों में परेशानी झलकती देखकर ज़ेलेंत्सोव ने चुटकी ली:

"तुम तो आखिर निजी प्लॉट के मालिक हो! पर स्ट्राबेरी के सिवा और कुछ नहीं उगा सकोगे, इतना ध्यान में रखो।"

मैंने कहा कि मेरा गेहूं की खेती करने का कोई इरादा नहीं है। ज़ेलेंत्सोव कह उठा:

"आदमी धरती पर किसलिए आया है? स्ट्राबेरी उगाने के लिए?"

"स्ट्राबेरी भी," मैंने आपत्ति की।

"ठीक कहते हो। स्ट्राबेरी भी। लेकिन रूस में स्ट्राबेरी ही तो सबसे महत्त्वपूर्ण फ़सल नहीं है, हालांकि मैं उसकी इज़्ज़त करता हूं। लेकिन सोवियत शासन के शुरू के वर्षों में स्ट्राबेरी के लिए हमें बिलकुल भी फ़ुरसत नहीं थी।"

मैंने, निस्सन्देह, इस मामले पर बिलकुल बहस नहीं

की। मैंने महसूस किया कि ज़ेलेंत्सोव में स्मृतियां उमड़कर बाहर निकलने का रास्ता खोज रही हैं, और ऐसे क्षण में मेरा मुख्य उद्देश्य यही है कि मैं मौन साधकर सुनता रहूं और मैं चुप हो गया।

ज़ेलेंत्सोव क़िस्सा आगे सुनाने लगा। उसने मेकोर्मिक (मालूम पड़ा, उसकी पूली बांधने की मशीन किसी तरह आदर्श बना दी गयी थी) के बारे में बताया, कई तरह की दूसरी मशीनों के बारे में बताया, मशीन-परीक्षण-केन्द्र के कुशल मेकेनिकों के बारे में बताया, उनमें से किस किस का क्या नाम था, किस किस में क्या विशेषता थी—सब बताया। स्पष्ट बता दूं कि ज़ेलेंत्सोव की विस्तृत जानकारी मेरे हृदय को सबसे अधिक छू गयी थी। कोई आधे घंटे की हमारी बातचीत के दौरान पूरी पगडंडी डिज़ाइनों से भर गयी, जिनमें एक दूसरे से अधिक जटिल और विचित्र था। जबकि मंवलाये हाथ में थमी टहनी शरत् ऋतु में भीगी मिट्टी को बराबर कुरेदे जा रही थी। ज़ेलेंत्सोव इसमें और अधिक मग्न होता गया। एकमात्र बात, जो उसका उत्साह किंचित ठंडा किये जा रहा था, वह थी—कृषि मशीनरी का मेरा ना के बराबर ज्ञान। मेरे पड़ोसी को ठेस न लगे, इसलिए मैं अपने इस अज्ञान को किसी तरह छिपाने की कोशिश कर रहा था, लेकिन, निस्सन्देह, वह शीघ्र ही यह भांप गया और मेरा थोड़ा-थोड़ा मज़ाक़ उड़ाने लगा :

"यह कहावत जानते हो—'हलजुता एक, खानेवाले अनेक'?"

मैंने जवाब दिया कि जानता हूं।

"शाबाश। और हल और फाल में कोई अन्तर होता है?"

"मेरे ख़याल से, मामूली-सा। सच कहा जाये, तो कोई ख़ास नहीं। एक ही बात है क़रीब-क़रीब। ठीक है ना?"

"कहने का मतलब है, अन्तर नहीं जानते हो," ज़ेलेंत्सोव ने फिर व्यंग्य किया। "पर व्लादीमिर इल्यीच उनमें अन्तर जानते थे, हालांकि वे कृषिशास्त्री नहीं थे।"

"कौन इल्यीच?" मैंने आश्चर्य से पूछा।

"वही!" ज़ेलेंत्सोव के होंठों पर अत्यन्त दुर्ग्राह्य मुस्कान खेल गयी। "वही। मैं तुम्हें भी इस बारे में कुछ बता सकता हूं। पर फिर कभी सही, मौक़ा आने पर।"

"कितने अजीब आदमी हो तुम!" मैंने कंधे उचकाकर कहा। "अभी बताओ, ज़ेलेंत्सोव, जब बात छिड़ ही गयी है तो। फिर कभी मौक़ा मिले या न भी मिले।"

"उफ़, कितने निराशावादी हो तुम!" ज़ेलेंत्सोव ने उलाहना दिया।

मैंने कहा कि अगले वसन्त तक मैं यहां नहीं आनेवाला, और मास्को में हर किसी को अपने काम होते हैं, अपनी समस्याएं होती हैं, हरेक का अपना "बग़ीचा" और अपनी "सागबाड़ी" होती है।

ज़ेलेंत्सोव ने खीसें निपोड़ दीं:

"जो सच है, सो सच ही है। अपना बग़ीचा, अपनी सागबाड़ी, अपनी समस्याएं, अपनी मुश्किलें। मतलब क्या अभी सुनने को तैयार हो?"

"हां, इसी वक़्त," मैंने पुष्टि कर दी।

"तो यही सही, पड़ोसी के नाते सुनाये देता हूं," उसने

खांसकर कहा। "अच्छा, ध्यान से सुनो और गांठ बांध लो। इसका सीधा सम्बन्ध हमारी बुतीर्स्की बस्ती से है।"

ज़ेलेंत्सोव ने मुझे एक ऐसा क़िस्सा सुनाया, जिसके बारे में मुझे कुछ मालूम नहीं था, हालांकि मन-ही-मन में अपने आपको अब भी किसी सीमा तक "बस्तीवाला" मानता हूं।

बात सन् 1921 की है। सोवियत शासन की स्थापना के चौथे वर्ष की।

"चौथे ही वर्ष की बात है, यह याद रखना," ज़ेलेंत्सोव ने इस बात की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट किया। "ऐसे ही बरसातवाले अक्तूबर की, जैसा कि इस साल है। बस्ती में खबर फैली कि जल्दी ही एक दिन लेनिन आनेवाले हैं।"

"लेनिन? बुतीर्स्की बस्ती में?" मैं कह उठा। "हो ही नहीं सकता! किस लिए?"

ज़ेलेंत्सोव ने पूर्ण आत्मविश्वास के साथ उत्तर दिया: "हो सकता है। ज़रूर हो सकता है। हो ही नहीं सकता, बल्कि वास्तव में ऐसा हुआ भी था। मैंने खुद अपनी आंखों नहीं देखा, पर एक बुज़ुर्ग ने सब खुद देखा और सुना था। उसी ने बताया था मुझे। लेनिन के आदेश पर ब्र्यांस्क के कारखाने में रूस का पहला बिजली से चलनेवाला हल बनाया गया। लेनिन के सामने उसकी जांच करने के लिए उसे बुतीर्स्की बस्ती में लाया गया। बड़ी पेचीदा, बहुत अच्छी, पर बड़ी मनमौजी मशीन थी वह। शुरू में काम कुछ ठीक से नहीं कर सकी। मेकेनिक और इंजीनियर उसे ठीक करते करते परेशान हो गये।

फिर भी उन्होंने निश्चित समय तक सुधार ही लिया उस मशीन को..."

"क्या कहा तुमने, बिजली से चलनेवाला हल बनाया गया है? रूस में?" मैंने पूछा।

"कैसे जाहिल और अनाड़ी हो! हर चीज़ समझाते रहो तुम्हें बस। तुमने नेपोलियन की तलवार के बारे में कभी कुछ सुना है?" ज़ेलेंत्सोव ने मुझसे एकाएक अजीब-सा सवाल पूछ डाला।

"नेपोलियन की तलवार के बारे में? मुझे क्या मतलब पड़ा है उससे? और ख़ुद नेपोलियन से भी? यह क्या बहुत पुराने ज़माने की बात नहीं है?" मैं कह उठा।

"ज़्यादा पुरानी नहीं है," पड़ोसी ने जवाब दिया। "मैं तो दुनिया में जो कुछ होता आया है और अब जो हो रहा है, हर चीज़ पर नज़र रखता हूं, मेरा उससे सरोकार रहता है। कई विषयों पर मेरे पास अख़बारों की कटिंगें हैं। हाल ही में मैंने किसी अख़बार में पढ़ा था कि हमारे एक संग्रहालय में रूस को जीतने का इरादा रखनेवाले योद्धा की तलवार रखी है। तुम्हें वह कटिंग दिखा सकता था, पर लगता है, ऐसी बातों में कोई ख़ास दिलचस्पी नहीं है। कुछ भी होता रहे दुनिया में, तुम्हारी बला से। क्यों?"

मैंने ज़ेलेंत्सोव से पूछा कि उस लेख का सारांश क्या है।

"सारांश, सारांश..." वह खीजकर बड़बड़ाया। "उफ़, कितने अनाड़ी हो, किसी चीज़ में दिलचस्पी नहीं लेते! अच्छा, ज़रा अंदर चलो। आओ, आओ!"

मैं गृहस्वामी की आज्ञानुसार अंदर गया और तुरन्त उसकी ख़ुद की बनायी किताबों की शेल्फ़ों की तंग

भूल-भुलैयां में पहुंच गया। ज़ेलेंत्सोव ने एक में से झटके के साथ एक नीली फ़ाइल खींची, उसमें से एक अख़बार की कतरन निकाली और चश्मा लगाकर पढ़ने लगा:

"सुनो तो ज़रा! 'एल्बा द्वीप पर निष्कासित किये जाते समय नेपोलियन के साथ रूस के ज़ार अलेक्सांद्र प्रथम का ऐजुटेंट-जनरल काउंट शुवालोव गया था। फ़्रांस के सम्राट को उसके निष्कासन-स्थल पर सही-सलामत पहुंचाना उसने अपने लिए एक सम्माननीय कार्य माना। यह मालूम पड़ने पर कि रास्ते में नेपोलियन की हत्या का प्रयास किया जानेवाला है, शुवालोव ने उसे अपना फ़ौजी ओवरकोट और हैट दे दिया। नेपोलियन ने शुवालोव के प्रति आभार व्यक्त करने के प्रतीकस्वरूप उसे अपनी तलवार भेंट कर दी ..."

"आगे पढ़ूं?" चश्मे के शीशों के ऊपर से मेरी ओर देखकर पड़ोसी ने पूछा।

मैंने अन्त तक पढ़ने का अनुरोध किया, ख़ास तौर से जब मेरा चश्मा साथ नहीं था।

"तो फिर थोड़ा सब्र करो," ज़ेलेंत्सोव ने कहा और आगे पढ़ने लगा: "काउंट शुवालोव ने रूस में वह तलवार अपनी भतीजी काउंटेस वोरोंत्सोवा-दशकोवा को दे दी, जिसने कुछ समय बाद अपनी जागीर, वर्त्तमान कीरोवोग्राद प्रान्त में सन् 1812 के युद्ध का एक संग्रहालय खोल दिया था। कई दशक बीत गये। रूस में क्रान्ति हो गयी, गृहयुद्ध छिड़ गया। लाल सैनिकों को हथियारों की कमी महसूस होने लगी। तब उन्होंने वोरोंत्सोवा-दशकोवा संग्रहालय के शस्त्रास्त्र भण्डारों का इस्तेमाल करने का

निर्णय किया। नेपोलियन की तलवार प्रथम घुड़सवार सेना में लड़ रहे प्योत्र अलेक्सेयेव के हाथों में पहुंच गयी। प्रतिक्रांतिकारी जनरल व्रांगेल के सैनिकों के साथ हुई एक लड़ाई में अलेक्सेयेव गम्भीर रूप से घायल हो गया। सेना से डिस्चार्ज होकर बारास्ता मास्को दूर पूर्व जाते समय उसने वह तलवार एक स्मृतिशेष मानकर एक संग्रहालय को दे दी।"

इसके बाद वह पतली कटिंग नीली फ़ाइल में अपनी जगह पर पहुंच गयी। ज़ेलेंत्सोव ने उसका रेशमी फ़ीता बांधते हुए पूछा:

"क्यों, कैसा लगा? अब समझ में आया कि मेरा इशारा किस ओर था?"

"समझ गया। वास्तव में बहुत रोचक घटना है।"

"ख़ाक समझ में आया तुम्हारी, पड़ोसी मेरे। मतलब घटना के रोचक होने से नहीं है, बल्कि इस बात से कि एक मनहूस तलवार को तो लोगों ने संभालकर रख लिया, बल्कि उसकी यशवृद्धि भी कर दी, जबकि लेनिन के कहने पर बनाये गये हल को, जिसकी जांच भी उनके सामने की गयी, संभालकर नहीं रखा। यह कोई अच्छी बात है?"

मैंने कहा कि मैंने हल के बारे में और उसके जांचने के बारे में कभी कोई ठोस बात नहीं सुनी।

"मैं भी तो यही कह रहा हूं!" ज़ेलेंत्सोव कह उठा। "न बिजली के पहले हल के बारे में कुछ सुना और न ही उसे बनाने और जांचने के बारे में। उस हल का नाम-निशान भी लगभग नहीं बचा। कितनी हैरानी की

बात है। मेरी तो समझ में कुछ नहीं आता। और तुम्हें आता है?"

उत्तेजित हुआ ज़ेलेंत्सोव कुछ मिनटों तक मौन साधे कमरे के एक कोने से दूसरे तक चहलक़दमी करता रहा। मैं भी, डरता हुआ कि कहीं कोई बेतुका प्रश्न न पूछ बैठूं, मौन रहा। पड़ोसी चश्मे के शीशों के ऊपर से मुझे परखता-देखता रहा। अन्त में वह बोला:

"तुम थोड़े से भी और जिज्ञासु होते, तो मैं तुम्हें कुछ और भी बता सकता था। मिसाल के तौर पर, कि हल की आजमाइश कैसे की गयी थी। और भी बहुत-सी दूसरी बातों के बारे में भी। लेकिन तुम जल्दी में हो, क्यों? सुना है, तुम काटेज छोड़कर जाने की तैयारी कर रहे हो?"

"तैयारी कर तो रहा हूं," मैंने उत्तर दिया, "लेकिन अभी समय है। हल की आजमाइश के बारे में खुशी से सुन सकता हूं। अभी, इसी वक़्त, अगर बता सको। बताओगे या नहीं?"

"सब हमारे हाथों में है, सब।"

इतना कहकर ज़ेलेंत्सोव उसी शेल्फ़ के सामने रुक गया और एक दूसरी, लाल सुर्ख़ फ़ाइल का फ़ीता खोलने लगा। खोलता हुआ बोलता रहा:

"आज़माइश ठीक-ठाक चलती रही। लोगों ने हल को बड़ी लगन से तैयार किया था, कई रात नहीं सोये थे। व्लादीमिर इल्यीच का सौंपा हुआ काम कोई मज़ाक़ तो था नहीं! बेशक कुछ घबरा भी रहे थे। धातु का केबिल बार-बार टूट जाता था। उसे बार-बार बांधते थे। मशीन

ठीक किये जाने के बाद ज़मीन को आठ फालों से जोत रही थी।"

"आठ फालों से?" मैंने आश्चर्य व्यक्त किया।

"हल में सोलह फाल थे। आठ एक तरफ़, और आठ दूसरी तरफ़। यह देखो उसका डिज़ाइन, उसके बिना तुम नहीं समझ पाओगे।"

मैंने अपनी ओर बढ़ायी हुई व्हाटमैन-शीट ले ली। ज़ेलेंत्सोव उस पर उंगली घुमाकर समझाने लगा।

"यह जनरल-व्यू है। यह स्टीयरिंग-व्हील है। यह जुताई की गहराई के लिए है। यह केबिल है। बिजली के विंचों से हल को खेत के एक छोर से दूसरे की ओर खींचा जाता था। आठ हलरेखाएं खिंचती जाती थीं पहले आठ फालों से। फिर धुरी पर घूम जाता था हल। यह देखो, बिलकुल बीच में है धुरी। फिर दूसरे आठ फाल लौटते समय ज़मीन को जोतने लगते थे। हल खेत में शटिल की तरह चलता था, समझे?"

"अब कुछ समझ में आ गया," मैंने कुछ हिचकिचाते हुए उत्तर दिया।

"सच कहूं, तो शुरू में मैं भी फ़ौरन नहीं समझ पाया था कि क्या किस लिए है। इधर-उधर से मिले कुछ तथ्यों से किसी तरह कुछ समझ पाया हूं।"

मैंने डिज़ाइन को एक बार फिर ग़ौर से देखा और ज़ेलेंत्सोव की प्रशंसा की। ज़ेलेंत्सोव को यह बहुत भा गया। वह ख़ुशी के मारे बोलता रहा, मैं सुनता रहा।

मेरी आंखों के सामने धीरे-धीरे एक काफ़ी स्पष्ट चित्र उभरने लगा।

...अक्तूबर की एक सुबह बहुत सवेरे व्लादीमिर इल्यीच की कार दि्मत्रोव राजमार्ग की तरफ़ से आकर उस खेत के पास रुकी, जिस पर परीक्षण हो रहे थे। लेनिन के साथ बुतीर्स्की बस्ती की ज़मीन पर बनी पहली हलरेखाओं को झुककर देखते हुए लोगों के पास कलीनिन, नदेझ्दा कोंस्तांतीनोव्ना और लेनिन की छोटी बहन मरीया इल्यीनिचना भी चल रही थीं। क़ाम कुछ मिनटों के लिए रुक गया। लेनिन ने अपने साथियों का परिचय परीक्षकों से कराया:

"आपसे मिलिये, आप मेरे मुख्य परामर्शदाता और बहुत-से मामलों के सलाहकार हैं। और साथी कलीनिन इन मामलों में सबसे मुख्य हैं। आपका क्या विचार है, मिखाईल इवानोविच? किसान होने के नाते आप अपनी राय सबसे पहले बताइये।"

"मज़दूर व किसान होने के नाते," कलीनिन ने हल्के-से मुस्कराकर लेनिन के कथन में संशोधन किया।

"बहुत सुन्दर भूल-सुधार है!" लेनिन कह उठे। "हां, तो आप क्या कहते हैं, प्यारे मिख़ाईल इवानोविच?"

कलीनिन ने झुककर हल द्वारा पलटी मिट्टी एक मुट्ठी में उठायी, उसे हथेली पर तौला और उंगलियों के बीच से झरने दिया।

लेनिन कलीनिन की ओर ध्यानपूर्वक देख रहे थे। कलीनिन, यह समझते हुए कि उन पर बहुत कुछ निर्भर करता है, अपना निष्कर्ष बताने में जल्दी नहीं कर रहे थे। वे बार-बार झुककर मिट्टी उठा-उठाकर अपनी आंखों के पास लाकर देख रहे थे, मानो उसका कण-कण परख

रहे हों। फिर वे लेनिन को एक ओर ले गये। वे दोनों कुछ मिनट तक एकान्त में बातचीत करते रहे, और अन्त में उन्होंने प्रशंसासूचक मुद्रा में अपने सिर हिला दिये।

"यानी जुताई अच्छी हुई है, ना, व्लादीमिर इल्यीच?" परीक्षकों में से एक अधीरता के कारण ज़ोर से पूछ बैठा।

"अच्छी है," लेनिन ने उत्तर दिया, "कोई नुक़्स नहीं निकाला जा सकता इसमें। मिख़ाईल इवानोविच की यही राय है, वे किसानों की ओर से बोल रहे हैं, और मैं भी उनसे सहमत हूं। अब उन्हें मज़दूरों की ओर से बोलना चाहिए।"

कलीनिन और लेनिन अतिथियों के आने के क्षण से उसी स्थिति में स्थिर खड़े बिजली के हल के पास गये।

मिख़ाईल इवानोविच ने हल को थोड़ी देर और चलाने को कहा। विंच फिर घूमकर केबिल को खींचने लगे, लगा जैसे अब टूटा, अब टूटा। लेकिन टूटा नहीं, मानो वह भी उस क्षण की महत्ता को समझ गया हो। कुछ मिनट बाद लेनिन के संकेत पर जुताई रोक दी गयी। आगंतुक पेचीदा मशीन को देखने लगे। कलीनिन विशेषत: अधिक ध्यान से देख रहे थे।

"मुझे क्षमा कीजिये," वे बोले, "रूसी आदमी हर चीज़ हाथ से छू-छूकर देखना पसंद करता है।"

उन्होंने मशीन के लगभग सारे कल-पुर्ज़े टटोल-टटोलकर देखे। लेनिन जांच के अन्त में बोले:

"हां, तो एक बार फिर अपनी राय बताइये, मिख़ाईल इवानोविच।"

कलीनिन ने इस बार भी उत्तर देने में जल्दबाज़ी नहीं की। वे मशीन के हिस्सों पर काफ़ी देर तक हाथ फेरते रहे, उसके 45 अंश के कोण पर उठे भाग के नीचे झांककर देखते रहे। वहां चमचमाते, नुकीले फाल अच्छी तरह से देखे जा सकते थे। वहां उपस्थित सभी लोगों ने फिर एक बार महसूस किया कि इसमें भी कोई दोष ढूंढ़ निकालने की गुंजाइश नहीं है। ऐसा ही हुआ। लेनिन और कलीनिन ने दो-एक मिनट आपस में विचार-विमर्श किया, फिर व्लादीमिर इल्यीच ने एकत्र लोगों को उसका परिणाम बताया :

"मज़दूर वर्ग की ओर से भी इसे स्वीकृति प्रदान की जाती है! निस्सन्देह यह केवल आरम्भ है, पर आशाजनक आरम्भ है। प्रथम प्रयोग सफल रहा है, लेकिन हम इसे प्रथम प्रयोग के रूप में ही लेंगे। और भावी प्रयोगों के बारे में सोच-विचार करेंगे। यह मानकर चला जा सकता है कि किसानों के हल में जुताई रूस के बड़े खेतों में विशेषत: अधिक कारगर रहेगी, न कि ज़मीन के इस छोटे-से टुकड़े पर। यहां मुड़ना तक मुश्किल है। बस मशीन को सुधारते रहिये। आप हम से सहमत हैं?"

"सहमत हैं, व्लादीमिर इल्यीच," परीक्षकों में से किसी ने धीमे, पर स्पष्ट स्वर में कहा। "हमें आपकी स्वीकृति की आवश्यकता थी। वह हमें मिल गयी और यह बहुत माने रखता है।"

लेनिन ने सन्तुष्ट होकर मुट्ठी-भर मिट्टी उठायी और उसे हाथ घुमाकर ज़ोर से अपने सामने फेंक दिया, जैसे किसान बीज बोने के लिए उन्हें बिखेरता है।

खेत से जाने से पहले व्लादीमिर इल्यीच ने प्रत्येक मज़दूर, प्रत्येक इंजीनियर से कसकर हाथ मिलाया, प्रत्येक की प्रशंसा की:

"सब ठीक हो जायेगा, विश्वास दिलाता हूं आपको!.."

"सच्ची घटना लगती है ना?" ज़ेलेंत्सोव ने एकाएक अपना क़िस्सा बीच में ही रोक दिया और मेरी ओर ध्यानपूर्वक देखा, जैसे मैं उसकी कही किसी बात में शंका कर सकता होऊं।

"जो सत्य जैसा लगता है, प्रायः वही सत्य होता है," मैंने कहा। "मेरा यही दृष्टिकोण है।"

"मुझे तो पूरा विश्वास है," ज़ेलेंत्सोव बोला, "कि सब इसी तरह हुआ था, और किसी तरह हो ही नहीं सकता था।"

इसके बाद हमने एक दूसरे से विदा ली। मैं सारी रात शरत्कालीन वर्षा की रिम-झिम के बीच हमारी बातचीत के बारे में सोचता रहा। अगले दिन मुझे काटेज में रहने का मौसम समाप्त होने पर एक ट्रक में शहर रवाना होना था, जो दफ़्तर की ओर से भेजा जाना था। ट्रक आने के बाद रवाना होने से पहले मैं पड़ोसी से विदा लेने गया। यह शाम के वक़्त की बात है, दिन ढलने लगा था। मेरे पास से गुज़रनेवालों में से एक ने, यह मालूम पड़ने पर कि मैं "रोमानी" को ढूंढ़ रहा हूं, मुझे घर के पीछे शेड में झांक लेने की सलाह दी:

"उसे सागबाड़ी से ज़्यादा शेड में खटर-पटर करने का शौक़ है।"

शेड में से कुछ आवाज़ें आती सुनाई दे रही थीं। लोहे

के फाटक के दोनों पल्ले भिड़े हुए थे, पर ज़्यादा कसकर नहीं, उनके बीच की तंग दरार में से धुंधली-सी रोशनी बाहर आ रही थी।

"अंदर आ सकता हूं?" फाटक का एक पल्ला थोड़ा खींचकर मैंने हिचकिचाते हुए पूछा।

ज़ेलेंत्सोव सकुचा गया, पर केवल क्षण-भर के लिए:

"अहा, तुम हो!"

"विदा लेने आया हूं, मास्को जा रहा हूं। सारी रात बारिश के साथ बर्फ़ गिरती रही है। अक्तूबर अब अपने रंग पर आ गया है। क्यों न साथ ही चलें? ट्रक में जगह है।"

"अंदर आओ, थोड़ी बात करेंगे," मुझे पड़ोसी की [illegible] आवाज़ से लगा कि उसे ज़ुकाम हो गया है। "मुझे अभी यहां ढेरों काम हैं।"

मैं अंदर गया, लेकिन हार्वेस्टर से मिलती-जुलती, पर उससे छोटे आकार की किसी चीज़ से मेरा रास्ता रुक गया।

"आओ, आओ, घबराओ नहीं, बस कहीं चोट या खरोंच न लगने पाये। जाहिल आदमी हो तुम, शहरी," ज़ेलेंत्सोव ने कलवाली टिप्पणी फिर दोहरा दी।

फिर वह मेरे सामने खुद आ खड़ा हुआ। मुखमुद्रा उसकी रहस्यमयी थी। उसके हाथों में एक पुरानी लालटेन हिल रही थी। बत्ती पूरी ऊपर करके ज़ेलेंत्सोव कह उठा:

"पहचाने? या नहीं? यह है स्टीयरिंग-व्हील। यह जुताई की गहराई के लिए है। यह धुरी है। और ये रहे फाल — एक, दो, तीन..."

मैं अपनी आंखों पर विश्वास नहीं कर सका। पड़ोसी शान्त स्वर में सब विस्तार में समझाने लगा:

"मशीन को उसके मौलिक आकार में बनाऊंगा। मेरा बस चले, तो मैं इस चीज़ को सबको दिखाने के लिए ले जाकर रख दूं। बुतीर्स्की बस्ती में उसी जगह पर! मॉडल है, लेकिन हू-बहू वैसा ही है। और फाल भी तलवार से ज़्यादा तेज़ हैं, उस तलवार से भी ज़्यादा, जिसके बारे में लेख में छपा था। और इस्पात भी, तुम्हें बताता हूं, बहुत बढ़िया है! नेपोलियन की तलवार के इस्पात में और इसमें फ़र्क़ करना मुश्किल है। मैंने ख़ुद तपाकर गढ़ा है, ख़ुद धार चढ़ायी है। मास्को जाकर इस मामले के अधिकारियों को बता देना। वे आकर इसे देख सकते हैं।"

कुछ क्षण मौन रहकर फिर बोला:

"एकाध हफ़्ते बाद ही।"

राडुगा प्रकाशन इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिज़ाइन के बारे में आपके विचार जानकर अनुगृहीत होगा। हमें आशा है कि आपकी भाषा में प्रकाशित रूसी और सोवियत साहित्य से आपको हमारे देश की संस्कृति और इसके लोगों की जीवन-पद्धति को अधिक अच्छी तरह जानने-समझने में मदद मिलेगी।

हमारा पता है:
राडुगा प्रकाशन
17, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।

सुप्रसिद्ध सोवियत लेखक वीक्तर तेल्पुगोव द्वारा लिखित प्रस्तुत कहानी-संग्रह में व्ला० इ० लेनिन की अद्वितीय छवि का चित्रण है। पुस्तक के वे प्रसंग अत्यधिक रोचक हैं, जिनसे यह ज्ञात होता है कि लेनिन सामान्य लोगों के हितों में कितनी गहरी रुचि लेते थे, लोगों का सदा प्रेमपूर्वक ध्यान रखते थे, उनकी आवश्यकताओं, अनुरोधों और सुझावों को उनकी पूरी गहराई में जाकर समझते थे; कि वे उन लोगों की कितनी भर्त्सना करते थे, जो जनता-जनार्दन को हेय मानते थे, उससे सीखना आवश्यक न समझकर उसे सिखाने की कोशिश करते थे। लेनिन के बारे में कहानियों का मुख्य उद्देश्य लेनिन के स्वतंत्रताप्रिय और उन्मुक्त चरित्र को, उनकी सादगी, मानवीयता और सदयता, निरर्थक क्रूरता व संदेह से घृणा को उजागर करना है। ये कहानियां उस व्यक्ति के बारे में हैं, जो अपने विवेक व चेतना के माध्यम से वास्तविकता की गहनतम असंगतियों को मापने, जीवन की दिशा को जानने और उसी में मानवीय शक्ति को निर्मुक्त करने के क्रान्तिकारी मार्गों को खोज निकालने में सक्षम रहा।